फिर पत्तों की पाजेब बजी

प्रवचन-क्रम

1. भारतः एक सनातन यात्रा..2
2. मैं केवल एक मित्र हूं...16
3. एक पृथ्वी, एक मनुष्यता...31
4. सब प्रश्नों का एक उत्तरः ध्यान...42
5. अपनी वास्तविकता को पा लेना स्वर्ग है...53
6. ध्यान प्रक्रिया है रूपांतरण की..63
7. मेरी निंदाः मेरी प्रशंसा...72
8. जीवन सदा अनिश्चित है..91
9. इस खेल में गुरु ही जीतता है..102 10...कम्यून अर्थात आध्यात्मिक विश्वविद्यालय .... 114 11...धर्म नितांत वैयक्तिक है 125

फिर पत्तों की पाजेब बजी पहला प्रवचन

भारतः एक सनातन यात्रा

प्यारे भगवान, वह कौन-सा सपना है, जिसे साकार करने के लिए आप तमाम रुकावटों और बाधाओं को नजरअंदाज करते हुए पिछले पच्चीस-तीस वर्षों से निरंतर क्रियाशील हैं?

हर्षिदा, सपना तो एक है, मेरा अपना नहीं, सदियों पुराना है, कहें कि सनातन है। पृथ्वी के इस भू-भाग में मनुष्य की चेतना की पहली किरण के साथ उस सपने को देखना शुरू किया था। उस सपने की माला में कितने फूल पिरोये हैं- कितने गौतम बुद्ध, कितने महावीर, कितने कबीर, कितने नानक, उस सपने के लिए अपने प्राणों को निछावर कर गये। उस सपने के मैं अपना कैसे कहूं? वह सपना मनुष्य का, मनुष्य की अंतरात्मा का सपना है। इस सपने को हमने एक नाम दे रखा है। हम इस सपने को भारत कहते हैं। भारत कोई भूखंड नहीं है। न ही कोई राजनैतिक इकाई है, न ऐतिहासिक तथ्यों का कोई टुकड़ा है। न धन, न पद, न प्रतिष्ठा की पागल दौड़ है।
भारत है एक अभीप्सा, एक प्यास- सत्य को पा लेने की।
उस सत्य को, जो हमारे हृदय की धड़कन-धड़क में बसा है। उस सत्य को, जो हमारी चेतना की तहों में सोया है। वह जो हमारा होकर भी हमें भूल गया है।
उसका पुनः स्मरण उसकी पुनरुद्घोषणा भारत है।
"अमृतस्य पुत्रः- ऐ अमृत के पुत्रो", जिनने इस उदघोषणा को सुना, वे ही केवल भारत के नागरिक हैं। भारत में पैदा होने से कोई भारत का नागरिक नहीं हो सकता।
जमीन पर कोई कहीं भी पैदा हो, किसी देश में, किसी सदी में, अतीत में या भविष्य में, अगर उसकी खोज अंतस की खोज है, वह भारत का निवासी है। मेरे लिए भारत और अध्यात्म पर्यायवाची हैं। भारत और सनातन धर्म पर्यायवाची हैं। इसलिए भारत के पुत्र जमीन के कोने-कोन में हैं। और जो एक दुर्घ्टना की तरह केवल भारत में पैदा हो गए हैं, जब तक उन्हें अमृत की यह तलाश पागल न बना दे, तब तक वे भारत के नागरिक होने के अधिकारी नहीं हैं।
भारत एक सनातन यात्रा है, एक अमृत पथ है, जो अनंत से अनंत तक फैला हुआ है।
इसलिए हमने कभी भारत का इतिहास नहीं लिखा। इतिहास भी कोई लिखने की बात
है साधारण-सी दो कौड़ी की रोजमर्रा की घटनाओं का नाम इतिहास है। जो आज तूफान की तरह उठती हैं और कल जिनका कोई निशान भी नहीं रह जाता। इतिहास तो धूल का बवंडर है। भारत ने इतिहास नहीं लिखा। भारत ने तो केवल उस चिरंतन की ही साधना ही है, वैसे ही जैसे चकोर चांद को एकटक बिना पलक झपके देखता रहता है।
मैं भी उस अनंत यात्रा का छोटा-मोटा यात्री हूं। चाहता था कि जो भू गये हैं, उन्हें याद दिला दूं; जो सो गए हैं, उन्हें जगा दूं। और भारत अपनी आंतरिक गरिमा और गौरव को, अपनी हिमाच्छादित ऊंचाइयों को पुनः पा ले। क्योंकि भारत के भाग्य के साथ पूरी मनुष्यता का भाग्य जुड़ा हुआ है। यह केवल किसी एक देश की बात नहीं है।
अगर भारत अंधेरे में खो जाता है तो आदमी का कोई भविष्य नहीं है।
और अगर हम भारत को पुनः उसके के पंख दे देते हैं, पुनः उसका आकाश दे देते हैं, पुनः उसकी आंखों को सितारों की तरफ उड़ने की चाह से भर देते हैं तो हम केवल उनके ही नहीं बचा लेते हैं, जिनके भीतर प्यास है। हम उनको भी बचा लेते हैं, जो आज सोये हैं, लेकिन कल जागेंगे; जो आज सोये हैं, लेकिन कल घर लौटेंगे।
भारत का भाग्य मनुष्य की नियति है।
क्योंकि हमने जैसे मनुष्य की चेतना को चमकाया था और हमने जैसे दीये उसके भीतर जलाये थे, जैसे फूल हमने उसके भीतर खिलाये थे, जैसे सुगंध हमने उसमें उपजाई थी, वैसी दुनिया में कोई भी नहीं कर सका था। यह कोई दस हजार

साल पुरानी सतत साधना है, सतत योग है, सतत ध्यान है। हमने इसके लिए सब कुछ कुरबान कर दिया। लेकिन मनुष्य की अंधेरी से अंधेरी रात में भी हमने आदमी की चेतना के दीये को जलाये रखा है, चाहे कितनी ही मद्धिम उसकी लौ हो गयी हो, लेकिन दीया अब भी जलता है।
मैंने चाहा था कि वह दीया फिर अपनी पूर्णता को ले और क्यों एक के भीतर जले, क्यों न हर आदमी प्रकाश का एक स्तंभ बने।
दुनिया की किसी भाषा में मनुष्य के लिए "मनुष्य" जैसा शब्द नहीं है। अरबी और अरबी से उपजी भाषओं में, हिबू्र और हिब्रू से उपजी भाषओं में जो भी शब्द हैं, उनका मतलब होता है मिट्टी का पुतला। "आदमी" का मतलब होता है मिट्टी का पुतला। "मैन का मतलब होता है मिट्टी का पुतला। सिर्फ "मनुष्य" में इस बात की स्वीकृति है कि तुम मिट्टी के पुतले नहीं हो, तुम चैतन्य हो, तुम अमृतधर्मा हो, तुम्हारे भीतर जीवन की परम ज्योति है। मिट्टी का दीया हो सकता है, ज्योति मिट्टी नहीं होती। यह शरीर मिट्टी का होगा, लेकिन इस शरीर के भीतर, जो जाग रहा है, जो चैतन्य है, वह मिट्टी नहीं है। जबकि सारी दुनिया मिट्टी की खोज में लग गयी, तब कुछ थोड़े से लोग ज्योति की तलाश मग संलग्न रहे।
हर्षिदा, तू पूछती है कि आपका क्या सपना है?
वही जो बुद्धों का सदा से रहा है। जो भूल गया है, वह याद दिलाया जाए; जो सोया है, उसे जगाया जाए; क्योंकि जब तक आदमी यह न समझ ले कि शाश्वत जीवन उसका अधिकार है, ईश्वरत्व उसका जन्मसिद्ध हक है, तब तक आदमी पूरा नहीं हो पाता, अधूरा और अपंग रह जाता है।
जब से मैंने होश सम्हाला है, हर पल, हर घड़ी एक ही प्रयत्न और एक ही प्रयास, अहर्निश एक ही चेष्टा कि किसी तरह तुम्हारी संपदा की तुम्हें याद दिला दूं, कि तुम्हारे भीतर से भी अनहलक की आवाज उठे, कि तुम भी कह सको अहम ब्रह्मास्मि, मैं ईश्वर हूं।
ईश्वर की बातें दुनिया के कोने-कोने में हुई हैं, लेकिन ईश्वर सदा दूर, बहुत दूर, आसमानों के पार रहा है। केवल हमने ईश्वर को आदमी के भीतर प्रतिष्ठित किया है। केवल हमने ईश्वर को आदमी के भीतर बिठाकर आदमी को मंदिर बनने की क्षमता, सौंदर्य, महिमा दी है।
कैसे हर आदमी मंदिर बन जाये और कैसे हर आदमी का हर क्षण प्रार्थना बन जाए, इसे ही तुम मेरा सपना कह सकती हो।

प्यारे भगवान धरती पर स्वर्ग उतारने की आकांक्षा आपको अमेरिका ले गयी
और वहां पर आपने संपूर्ण मानवता के सदियों-सदियों पुराने सपने को साकार कर दिखाया। क्या आप हम भारतवासियों को रजनीशपुरम की उपलब्धियों को बताने की अनुकंपा करेंगे?

भारत को भारत की याद दिलाने के लिये भारत के बारह जाना जरूरी था। जो बहुत पास होता है, वह भूल जाता है। जो अपना होता है, उसकी हम सुनते ही नहीं। जो घर में ही होता है, उसकी खोज कौन करता है।
इधर बीस वर्षों तक मैं भारत के कोने-कोने में घूमता रहा और बीस वर्षों में जो पाया, वह सिर्फ छाती में लगे घाव हैं। क्योंकि मैं जिन्हें जगाने जा रहा था, वे अपने गहरे सपनों में थे। और कोई भी पसंद नहीं करता कि उसकी नींद तोड़ो और कोई भी पसंद नहीं करता कि उसके सपने में विश्न डालो। पत्थर मुझ पर फेंके गये, हत्या करने की कोशिश की गयी, लेकिन यह सब मुझे स्वीकार था। और मैं समझता था कि यह होना आवश्यक है। लेकिन उससे में दुखी न था। एक बात से जरूर दुखी था और वह बात, जिन्होंने पत्थर फेंके या जिन्होंने छुरे फेंके या जिन्होंने जहर पिलाने की कोशिश की, उनकी नहीं है। वह बात उन लोगों की है, जिन्होंने मेरी बातों को सुनकर वाह-वाह की। उन्होंने जो घाव दिये हैं, वे अब भी हरे हैं, भरने का नाम नहीं लेते, क्योंकि वे वाह-वाह इसलिए नहीं कर रहे थे कि मैं जो कह रहा हूं, वह सत्य है। वे वाह-वाह इसलिए कर रहे थे कि मैं जो कह रहा हूं, वह उनके अहंकार की पूर्ति कर रहा है। मैं जो कह रहा था उसे वे जीवन में उतारने को राजी न थे। मैं जो कह रहा था, वे सिर्फ ताली बजाकर अपना मनोरंजन कर रहे थे, आींदित हो रहे थे; अपनी दीनता,

अपनी हीनता, अपनी गरीबी, अपनी गुलामी को छुपाने के लिए मेरे शब्द उनका सहारा बनने लगे। इसलिए मुझे बाहर जाना पड़ा, कि शायद दूर से दी गयी आवाज, उन्हें सुनायी पड़ जाए। और शायद दूर अमेरिका में मैं कोई प्रयोग करके एक छोटे-से भारत का निर्माण कर सकूं।
और अमेरिका को चुना इसलिए कि भारत ने जो महान ऊंचाइयां पायी थीं, वे
तब पायी थीं, जब भारत समृद्ध था। वे तब पायी थीं, जब दुनिया भारत को सोने की चिड़िया कहती थी। वे कोई दीन, दरिद्र, भिखमंगे और गरीब, और गुलाम भारत की ऊंचाइयां नहीं थीं। खाने को रोटी भी न हो तो पंखों को आकाश में खोलना और तारों की तरफ उड़ान भरने की आकांक्षा करना संभव नहीं है। फिर अमेरिका में पृष्ठभूमि तैयार थी, लोग समृद्धि की इसी ऊंचाई पर पहुंच गये हैं, जहां कभी हम थे। और जो हमने पाया था समृद्धि की ऊंचाई पर कि धन सब कुछ खरीद सकता है,ेलेकिन प्रेम नहीं, परमात्मा नहीं। धन सब कुछ खरीद सकता है, लेकिन आनंद नहीं, अमृत का स्वाद नहीं। धन सब कुछ खरीद सकता है, लेकिन ध्यान नहीं, शांति नहीं मौन नहीं। धन पाकर ही आदमी को पता चलता है कि धनिक होने से ज्यादा गरीब इस दुनिया में कोई और नहीं है। सब कुछ होते हुए भीतर कुछ भी नहीं होता। खालीपन, अर्थहीनता, एक गहरा संताप कि सब कुछ मेरे पास है और फिर भी मेरे पास कुछ भी नहीं है। अमेरिका उस घड़ी में है। अमेरिका को जरूरत है कि कोई उसे कहे धन के पार भी एक जगत है, जो केवल धनिक ही पा सकता है। क्योंकि उस जगत को पाने के लिए धन ही सीढ़ी बनता है। वह धन से नहीं पाया जाता। धन का पैरों के तले रौंद कर पाया जाता है। इसलिए अमेरिका को चुना था।
और पांच वर्षों में, एक बहुत छोटे-से समय में, जिस सपने को लेकर मैं गया था, वह पूरा भी हुआ। एक मरुस्थल को- बड़ा मरुस्थल था- एक सौ छब्बीस वर्गमील, जहां कभी कोई फूल नहीं खिला था। जिस दिन मैं उस मरुस्थल में पहुंचा, वहां एक भी पक्षी नहीं था। उस मरुस्थल को पांच वर्षों में मरूद्यान में बदल देने की चेष्टा की। पांच हजार संन्यासियों को लेकर-बारह घंटे, चौदह घंटे, प्रत्येक संन्यासी ने श्रम किया। जो जिसके पास था, धन था, तन था तो तन, सब कुछ दांव पर लगा दिया। मरुस्थल का नया जन्म हो गया, मरूद्यान बन गया। दूर-दूर से पक्षी आ गये। जंगली जानवर आ गए। हजारों हिरन मरुस्थल में आ गए। पांच हजार संन्यासियों के लिए रहने के लिए हमने मकान बनाये। अपने ही हाथों से। अमेरिका में हमने किसी की कोई सहायता नहीं ली। रास्ते बनाये, झीलें बनायीं। हंसों को निमंत्रण दिया। झीलें बनीं तो हंस भी आ गए। बगीचे लगाये तो हिरन भी आ गए। सिर्फ मेरे बगीचे में तीन सौ मोर... तीन सौ मोर वर्ष के प्रारंभ में, जब वे नाच उठते तो सारी दुनिया के रंग-सारी दुनिया का उत्सव... ।
एक रसोई में पांच हजार संन्यासी भोजन कर रहे थे। क्योंकि मेरी धारणा
थी कि छोटे-छोटे परिवार का जमाना अब गया। अब हमें आदमी के बड़े परिवार चाहिए, कम्यून चाहिए। और पांच हजार संन्यासियों का एक साथ भोजन के लिए बैठना और किसी का गिटार पर गीत गाना और किसी का नाचना। और उत्सव के दिनों में तो बीस हजार संन्यासी सारी दुनिया से वहां इकट्ठे होते थे। उनके लिए हमने अपने हाथ से तंबू बनाये थे। और ऐसे तंबू बनाये थे। जैसे तंबू कभी बनाए नहीं गये थे। वे तंबू वर्ष में, बर्फ में, धूप में, सर्दी में- हर मौसम में काम आ सकते थे। उन तंबुओं में एयरकंडीशनर लगाये जा सकते थे। उन तंबुओं में हीटर लगाए जा सकते थे। पांच हजार संन्यासियों के लिए जो मकान थे, वे सब सेंट्रली एयरकंडीशंड थे।
और सुख सुविधाओं की जितनी व्यवस्था हो सकती थी- पांच हजार संन्यासियों के लिए पांच सौ कारें थीं पांच एयरोप्लेन थे। सौ बसें थीं, अस्पताल था अपना, अपने डाक्टर थे, अपनी नर्सें थीं, स्कूल था, अपने शिक्षक थे; बच्चों के रहने का अलग इंतजाम था, बच्चों की अलग दुनिया थी। सुबह ध्यान के साथ काम शुरू होता। ध्यान के बाद एक घंटा मेरे साथ या तो मौन-सत्संग में बैठते या में कुछ बोलता तो सुनते।
और फिर दिन भर काम था और फिर सांझ उत्सव था। देर रात तक लोग नाचते- गाते। पहली बार संभवतः पांच हजार लोग पांच वर्षों तक एक साथ रहे। कोई किसी से लड़ा नहीं। कोई चोरी नहीं हुई। किसी कि जीवन में न कोई चिंता थी, न कोई

भविष्य की सुरक्षा का प्रश्न था, क्योंकि भरोसा था पांच हजार साथी और करीब दस लाख संन्यासी सारी पृथ्वी पर अपने हैं, जो हर सुख और दुख में साथ देंगे। एक विश्व परिवार का निर्माण अमेरिका बर्दाश्त न कर सका। और जब मैं कहता हूं अमेरिका बर्दाश्त न कर सका, तो मेरा मतलब है कि अमेरिका के राजनीतिज्ञ, अमेरिका की सरकार बर्दाश्त न कर सकी। अमेरिका की जनता तो बहुत प्रभावित थी। उन्हें तो भरोसा भी नहीं आता कि इस रेगिस्तान में, जहां कभी कुछ पैदा नहीं हुआ, वहां खेती बाड़ी हो रही है, फल-फूल पैदा किये जा रहे हैं। हम अपनी सारी जरूरतें उस रेगिस्तान से पैदा कर रहे थे। भोजन शाक-सब्जी, फल-फूल, अपनी गौशाला, अपना दूध अपना मक्खन, अपना घ्ी, जो हमें जरूरी था।
और इस प्रयोग के साथ एक नयी बात मैंने जोड़ी थी, वह थी, क्योंकि संन्यासी शाकाहारी हैं और शाकाहार पूर्ण भोजन नहीं है, उसमें कुछ कमी है और उसकी कमी खतरनाक कमी है। उसमें उन प्रोटीनों की कमी है, जिनसे मस्तिष्क निर्मित होता है। इसलिए किसी शाकाहारी को अब तक नोबेल प्राइज नहीं मिल सका। इस कमी को पूरा करने के लिए हमने हजारों मुर्गियां पाल रखी थीं। और अगर मुर्गियों के अंडे बिना मुर्गों के संसर्ग के पैदा हों तो उनमें प्राण नहीं होते, उनसे बच्चे पैदा नहीं हो सकते। लेकिन उनमें वे सब प्रोटीन होते हैं, जिनकी शाकाहारी भोजन में कमी है। इसलिए प्रत्येक संन्यासी को भोजन में अनफर्टिलाइ ड अंडों को जोड़ना एक नूतन प्रयोग था, जो कि सारी दुनिया के शाकाहारियों को आज नहीं तो कल करना पड़ेगा अन्यथा तुम बौद्धिक रूप से पिछड़ते जाओगे, पिछड़ते जाओगे।
दूर-दूर से अमेरिका में लोग देखने ओन लगे और अमेरिका के राजनीतिज्ञों
को परेशानी पड़ने लगी, क्योंकि उनसे यह पूछा जाने लगा कि बाहर से आये हुए अजनबी लोग रेगिस्तान को स्वर्ग बना सकते हैं तो अमेरिका में इतनी समृद्धि होते हुए भी लाखों भिखारी हैं, जिनके पास न घर है, न कपड़े हैं, न खाने को भोजन। जो सड़कों पर ही जीते हैं। और चूंकि मैंने उनमें से दो सौ भिखारियों को कम्यून में सम्मिलित कर लिया, अमेरिकी राजनीतिज्ञों को और भी धक्का लग गया, कि जिन भिखारियों को वे भोजन नहीं दे सकते, उन भिखारियों को हमने मनुष्य होने का गौरव दे दिया। उनके साथ कोई भेदभाव न था। उनके लिए वही आदर था, वही सम्मान था, जो प्रत्येक मनुष्य के लिए होना चाहिए। वे विश्वास भी न कर सके। मुझे आकर भिखारियों ने कहा कि हमें भरोसा नहीं आता, क्योंकि जीवन भर हम कुत्तों की तरह ठुकराये गये हैं। हम मनुष्य हैं, यह बात भी हमें भूल चुकी थी।
सारे अमेरिका के पत्रकार, टेलीविजन, रेडियो, कम्यून पर आ-आ कर छाने लगे। सारा अमेरिका उत्सुक हो गया कि क्या, कौन सी क्रांतिकारी घटना घटी। कम्यून में किसी मुद्रा का कोई चलन न था। पैसे का कोई व्यवहार न था। इसलिए मैं कह सकता हूं कि व कम्यून, रजनीशपुरम, इतिहास में पहली साम्यवादी व्यवस्था थी, जहां कोई अमीर न था, कोई गरीब न था। होंगे तुम्हारे पास करोड़ों रुपये, लेकिन इससे क्या फर्क पड़ता है, कम्यून में रुपये का उपयोग ही नहीं हो सकता। कम्यून मग प्रत्येक व्यक्ति की जरूरत पूरी की जायेगी। जो भी जरूरत हो वह ले ले, लेकिन न तो कोई चीज खरीदी जायेगी, न कोई चीज बेची जाएगी।
अमेरिकी राजनीति को दोहरी परेशानियां पैदा हो गईं। एकः कि साम्यवाद
का शुद्धतम रूप जो कि सोवियत रूस में भी नहीं है। और दूसराः कि सिर्फ श्रम और बुद्धि के आधार पर रेगिस्तान को, मरुस्थल से मरूद्यान मग बदला जा सकता है। और एक ऐसे समाज का निर्माण किया जा सकता है, जहां कोई दुखी नहीं है, जहां कोई पागल नहीं है, जहां कोई आत्महत्या नहीं करता, जहां कोई खून नहीं होता। जहां कोई चोरी नहीं, कोई अपराध नहीं, जहां कोई झगड़ा नहीं। कोई हिंदू या मुसलमान का, ईसाई या यहूदी का कोई उपद्रव नहीं। जहां सारी जातियों के लोग हैं, सारे धर्मों के लोग हैं, जहां काले गोरे लोग हैं, गोरे लोग हैं, जहां करीब-करीब प्रत्येक देश के लोग हैं, लेकिन किसी को किसी से कोई ऊंच-नीच का भाव नहीं। ऐसी समता, ऐसा साम्यवाद- अमेरिकी राजनीतिज्ञ के दिमाग में एक बात बैठ गई कि कि इस कम्यून का बना रहना खतरे से खाली नहीं है।

और यह बात अभी अमेरिका के अटर्नी जनरल के मुंह से अचानक निकल गई है।
एक पत्रकार कान्फ्रेंस में उत्तर देते हुए। चूंकि उनसे पूछा गया था कि भगवान को क्यों आपने जेल में बंद नहीं किया? क्योंकि मेरे ऊपर उन्होंने 136 जुर्म लगाये थे। जिस आदमी पर 136 जुर्म लगाये हों, उसको सजा मिलनी चाहिए। कम से कम हजार साल की सजा तो मिलनी ही चाहिए- कम से कम। कम से कम दस बारह जन्म लेना पड़ेंगे, तब पूरी हो सकेगी। अटर्नी जनरल के मुंह से जो कि कानून का सबसे बड़ा अधिकारी है, सच्ची बात निकल गई। और यही व्यक्ति, 136 जुर्म मैंने किये हैं, यह अदालत में पेश करने वाला था। उसने तीन बातें कहीं- एक कि हमारा पहला मकसद कम्यून को नष्ट करना था। कोई पूछे, क्यों? कम्यून ने किसी का क्या बिगाड़ा था? कम्यून को अमेरिका से कोई मतलब ही न था। निकटतम अमेरिकी गांव कम्यून से बीस मील के फासले पर था। हमारे पास इतनी बड़ी जमीन थी और बाहर जाने की किसी को न फुर्सत थी, न जाने की कोई जरूरत थी। कम्यून को मिटाना प्राथमिक उद्देश्य था।
नंबर दोः भगवान को जेल में बंद नहीं किया जा सकता था, क्योंकि उन्होंने कोई अपराध नहीं किया और हमारे पास किसी भी अपराध के लिए कोई सबूत नहीं है।
आदमी भी इतना पाखंडी हो सकता है, जिसका कोई हिसाब नहीं। यही आदमी 136 जुर्म लेकर अदालत में खड़ा होता है और यही आदमी यह भी कहने को तैयार है कि इसके पास न कोई सबूत है किसी जुर्म का और न ही कोई अपराध हुआ है।
और तीसरी बात और भी विचारणीय है, कि हम भगवान को जेल में बंद करके शहीद नहीं बनना चाहते थे, क्योंकि उनके शहीद बनते ही उनका संन्यास दुनिया में एक प्रगाढ़ धर्म बन जाता।
बिल्कुल गैर-कानूनी ढंग से कम्यून को नष्ट कर दिया गया। मुझे गैर-कानूनी ढंग से गिरफ्तार किया गया, बिना किसी वारंट के, क्योंकि उनके पास कोई कारण नहीं था गिरफ्तार करने के लिए।
गिरफ्तारी के बाद जो कि प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि वह अपने अटर्नी को खबर करे। मुझे अटर्नी को खबर नहीं करने दी गयी। क्योंकि अटर्नी के आते से ही पूछेगा कि वारंट कहां है। किस आधार पर मुझ अरेस्ट किया गया है।
मुझे अरेस्ट किया गया 12 संगीनों के आधार पर। किसी गिरफ्तारी के लिए कोई कारण नहीं, बल्कि 12 बंदूकें भरी हुई! और अदालत के सामने मुझे पेश किया गया। यही अटर्नी जनरल सिद्ध करने में असमर्थ रहे और इन्होंने अदालत में स्वीकार किया तीन दिन के निरंतर विवाद के बाद। मेरे साथ पांच और संन्यासी गिरफ्तार किए गये थे। उन पांचों को बेल पर छोड़ दिया गया, लेकिन अटर्नी जनरल इस बात पर अड़े थे कि मुझे बेल नहीं दी जा सकती और खुद उन्होंने स्वीकार किया अदालत में कि हम सिद्ध करने में असमर्थ हैं कि बेल क्यों न दी जाये। लेकिन फिर भी अमेरिका सरकार की तरफ से मैं यह प्रार्थना करता हूं जज से कि बेल न दी जाये। जज ने बेल नहीं दी!
खुद जेलर हैरान हुआ, जो मुझे वापिस जेल लाया, क्योंकि वह सोच भी नहीं सकता था कि मुझे वापिस जेल लाना पड़ेगा। वह मेरे सब कपड़े और सारा सामान लेकर अदालत पहुंचा था कि वहां से बेल हो जाएगी। न इनके पास अरेस्ट वारंट है, न कोई गिरफ्तारी का कारण है तो बेल देने से रोकने की तो कोई वजह नहीं है। खुद जेलर ने मुझसे कहा कि हम चकित हैं और हैरान हैं। हमने अपने जीवन में ऐसा मामला नहीं देखा। पहली तो बात यह है कि गिरफ्तारी गलत है। गिरफ्तारी बेवजूद है। सरकारी वकील कोई कारण पेश नहीं कर सका और और उसने स्वीकार भी कर लिया कि हमारे पास कोई कारण नहीं है। लेकिन सरकार का आग्रह है कि फिर भी इस व्यक्ति को बेल न दी जाए।
और जेलर ने मुझसे कहा कि बेल नहीं दी गयी आपको, उसका कारण यह है कि मजिस्ट्रेट को कहा गया- एक औरत मस्ट्रिट थी- कि अगर मुझे बेल न दी जाये तो उसे फेडरल जज बना दिया जायेगा। और अगर मुझ बेल दी गयी तो वह जिंदगी भर मजिस्ट्रेट ही रहेगी। कभी फेडरल जज नहीं हो सकती। और निश्चित ही सिर्फ तीन दिन के भीतर वह फेडरल जज हो गयी। कानून को भी रिश्वत- वह भी सरकारें रिश्वत देती हैं।

और जिस जगह मुझे अरेस्ट किया गया नार्थ कैरोलिना में, वहां से आरेगॉन
छह घंटे के फासले पर है। हम अपने हवाई जहाज देने को तैयार थे कि आप हमारे हवाई जहाज में, आपके पायलट, आपके पुलिस आफिसर मुझे पोर्टलैंड पहुंचा दें, जहां कि फैसला होना है, लेकिन सरकारी हवाई जहाज में ही मुझे ले जाया जायेगा।
और आप जानकर हैरान होंगे कि सरकारी हवाई जहाज को छह घंटे की यात्रा करने में 12 दिन लगे। इसलिए सरकारी हवाई जहाज में ले जाना जरूरी था, क्योंकि सरकारी हवाई जहाज एक एयरपोर्ट से दूसरे एयरपोर्ट पर जाकर रुक जाता। 12 दिन में; जेल- बिना किसी कारण के। वह ज्यादा नहीं कर सके, क्योंकि सारी दुनिया की नजरें इस बात पर लगी थी। लेकिन फिर भी उन्होंने हर तरह की चेष्टा की कि मुझे नुकसान पहुंचा सके। उन्हें मालूम था कि मेरे कमर में तकलीफ है, दर्द है और डाक्टर इलाज करने में असमर्थ रहे हैं। और सिवाय आपरेशन के उन्हें कुछ रास्ता नहीं दिखता और आपरेशन से भी ठीक होगा, इसकी भी गारंटी नहीं है। और आपरेशन के बाद मामला और भी बिगड़ सकता है, इसलिए आपरेशन करने की भी वे सलाह नहीं देते।
जिस रात मुझे गिरफ्तार किया, मुझे पूरी रात एक लोहे की बेंच पर बिठा रखा। हाथों में हथकड़ी, पैरों में बेड़ियां, कमर में जंजीर और मैं हाथ भी न हिला सकूं, इसलिए हाथ की जंजीर के साथ कमर की जंजीर में भी जंजीर। और जंजीर हर वक्त ठीक उस जगह बांधी गई हर जेल में, जहां मेरी कमर में तकलीफ है। और हर जगह मुझे ठीक उसी तरह की बेंच दी गयी लोहे की, ताकि जितनी तकलीफ मेरी कमर को दे सकें...
एक जेलर दूसरे जेलर को मुझे सौंपता- मैं कार के भीतर बैठा हूं, वह कार
के बाहर दूसरे जेलर को कहता कान में कि कुछ भी करना सोच-समझ कर, क्योंकि व्यक्ति अंतर्राष्ट्रीय ख्याति का है और सारी दुनिया की नजरें लगी हैं। जरा-सा भी कुछ गड़बड़ हुआ तो अमेरिका के लोकतंत्र पर धब्बा लगेगा, इसलिए जो भी किया जाए, वह अपरोक्ष होना चाहिए।
दूसरे नंबर की जेल में मुझसे कहा गया कि मैं एक झूठे नाम पद दस्तखत करूं, अपने नाम पर नहीं। मैंने कहा, यह कुछ थोड़ी अजीब सी बात है और वह भी कानून का अधिकारी मुझसे कह रहा है मैं एक झूठे नाम पर दस्तखत करूं- डेविड वाशिंगटन के नाम से ही पुकारा जाऊंगा।
मैंने इनकार किया कि मैं कोई गैर कानूनी काम करने को तैयार नहीं हूं,
तो मुझे धमकी दी गयी कि तो फिर रात भर यहीं, इसी लोहे की बेंच पर बैठे रहें। मैंने उनसे कहा कि आप पछताएंगे पीछे, क्योंकि कितनी देर यह सब चल सकता है, जिस दिन भी मैं जेल के बाहर होऊंगा, उस दिन सारी दुनिया यह सारी हरकत जानेगी और किस आधार पर आप चाहते हैं कि मैं डेविड वाशिंगटन का नाम अपना नाम बताऊं? यह तो कोई छोटी-मोटी बुद्धि का आदमी भी समझ सकता है कि इसका मतलब यह हुआ कि अगर आप मुझे मार भी डालें, तो पता भी नहीं चल सकता कि मैं कहां गया, क्योंकि आपकी फाइल में मेरा नाम भी नहीं है और कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि डेविड वाशिंगटन नाम का आदमी मैं था- किसी को पता भी कैसे होगा? इसलिए मैंने कहा कि अगर आपको उत्सुकता है तो आप डेविड वाशिंगटन नाम लिखें, फार्म भरें, दस्तखत मैं करूंगा। जेलर को भी जाना था, आधी रात तक, कब तक वह बैठा रहे, उसको भी परेशानी थी, क्योंकि मेरे साथ उसको भी बैठना पड़े। इसलिए उसने फार्म भरा, लेकिन उसको यह समझ में नहीं आया कि फार्म भरकर वह गलती कर रहा है- हैंड राइटिंग उसकी होगी और दस्तखत तो मैं अपने नाम के करूंगा। जब मैंने दस्तखत किये तो वह हैरान हुआ की यह आपने क्या लिखा है! मैंने कहा, डेविड वाशिंगटन ही होगा। पर किस भाषा में? मैंने कहा, मैं अपनी भाषा में ही लिखूंगा। भाषा के संबंध में तो कोई बात तय न हुई थी।
और मैंने उससे कहा, कुल सुबह टेलीविजन पर और सारे न्यूज पेपर्स में और रेडियो पर यह खबर होगी कि अब मेरा नाम डेविड वाशिंगटन हो गया है। उसने कहा, आप मुझे धमकी दे रहे हैं, यह कैसे हो सकता है? हम दो के सिवा यहां कोई भी नहीं है। मैंने कहा, कल सुबह आप देखना। क्योंकि मेरे साथ एक युवती, जो किसी अपराध में कैद थी, वह भी कार में जेल तक लायी गयी थी। हवाई जहाज में उसने मेरे साथ यात्रा की थी। उसने मेरी किताबें पढ़ी होंगी, टेलीविजन पर मेरे प्रवचन सने होंगे। उसने कहा कि मैं आपकी कोई सेवा कर सकूं... तो मैंने उससे

कहा, इतना ही ख्याल करना कि जेल के भीतर जेलर से मेरी जो बातचीत हो- क्योंकि वह कल सुबह मुक्त होने वाली है- जेल से- मुक्त होते ही पहला काम यह करना कि पत्रकार बाहर ही दरवाजे पर मिल जायेंगे, जो बात तू सुने, उनसे तू कह देना।
और उस लड़की ने ठीक-ठीक एकदम ब्यौरा पत्रकारों को सुबह छह बजे दे दिया। सात बजे की न्यूज बुलेटिन पर सारे अमेरिका में खबर हो गयी। घबराहट में उन्होंने मुझे उसी क्षण उस जेल से बाहर निकाला, क्योंकि तब उस जेल में रखना मुश्किल हो गया उन्हें।
हर जेल में उन्होंने किसी न किसी तरह से तरकीब की चोट पहुंचाने की। एक जेल में एक आदमी के साथ मुझे रहने को मजबूर किया, जिसके पास छह महीने से किसी को नहीं रखा गया था, क्योंकि वह आदमी मर रहा है संक्रामक बीमारी से- हर्पीज से। और उसके पास किसी भी व्यक्ति का होना निश्चित रूप से बीमारी को पकड़ लेना है। और छह महीने से उस छोटे-से कमरे में वह अकेला रह रहा है और छह महीने से दूसरे व्यक्ति को उस कमरे में नहीं रखा गया है। सिर्फ इसलिए कि कहीं दूसरे को बीमारी न पकड़ जाये लेकिन डाक्टर मौजूद है, जेलर मौजूद है और न डाक्टर ने एतराज किया और न जेलर ने एतराज किया। मुझे उस कमरे में बंद किया, वह आदमी मरने के करीब है, वह आदमी दूसरे दिन मर गया।
उस आदमी ने मुझसे कहा कि मैं ज्यादा अंग्रेजी नहीं बोल सकता हूं (वह आदमी क्यूबा से था) मगर इतना मैं आपको कह देना चाहता कि आप इस बीमारी से मरें। और इन लोगों की सारी चेष्टा यह है कि यह बीमारी आप को पकड़ जाये, इसलिए आप दरवाजे से अंदर न आयें, दरवाजे पर ही खड़े रहें और दरवाजे को ठोकें, चाहे रात भर दरवाजा ठोंकना पड़े। आप कमरे में भीतर प्रवेश न करें, दरवाजे पर ही खड़े रहें, जब तक कि ये दरवाजा न खोलें।
एक घंटा मुझे दरवाजा ठोंकना पड़ा, तब जेलर आया, डाक्टर आया। मैंने उनसे पूछा कि छह महीने से जब इस कमरे में किसी को नहीं रखा गया, तो तुम्हें शर्म नहीं आती कि तुम मुझे इस कमरे में रख रहे हो जो कि अपराधी भी नहीं है। और कल तुम क्या जवाब दोगे अखबारों को, टेलीविजन को और दुनिया को। और यह आदमी कहीं तुमसे ज्यादा आदमी है। और तुम डाक्टर हो, तुम्हें आत्महत्या कर लेनी चाहिए, तुमने कसम खायी है डाक्टरी की कि तुम लोगों के जीवन को बचाओगे और तुम यहां चुपचाप खड़े रहे, तुम्हारी कसम का क्या हुआ?
तत्काल मुझे दूसरे कमरे में ले जाया गया, कोई जवाब नहीं है उनके पास, लेकिन परोक्ष रूप से मुझे किसी भी तरह चोट पहुंच जाये, किसी भी तरह परेशान किया जाये, किसी भी तरह हैरान किया जाये, इसकी बारह दिन सतत चेष्टा की। वे बेचारे कुछ कर न पाये, इसका मुझे अफसोस है।
मगर एक बात साफ हो गयी कि लोकतंत्र के नाम पर दुनिया में कहीं भी लोकतंत्र नहीं है। मेरे मन में अमेरिका के लोकतंत्र की इ जत थी। लेकिन मैं यह जो देखकर लौटा हूं और जो अनुभव करके लौटा हूं, वह यह कि कोई लोकतंत्र कहीं भी नहीं है। और रोनाल्ड रीगन हिटलर नंबर एक- असली हिटलर बेचारा अब नंबर दो हो गया है।
प्यारे भगवान, आपके नाम के साथ सेक्स गुरु, अमीरों के गुरु इत्यादि भ्रांतिपूर्ण विशेष्ण क्यों जुड़े हुए हैं? क्या आपको भ्रांतियों में घेरे में रखने के पीछे कोई साजिश है?
हर्षिदा, साजिश बड़ी है। कहना चाहिए अंतर्राष्ट्रीय है। झूठ को भी अगर बार-बार दोहराया जाये तो वह सच मालूम होने लगता है।
मेरे नाम से कम से कम चार सौ किताबें प्रकाशित हुई हैं। मैंने तो कोई किताब लिखी नहीं, जो बोलता हूं, वह किताब बन जाती है। उन चार सौ किताबों में एक किताब है जिसका नाम है "संभोग से समाधि की ओर"। वह बंबई में दिए गये पांच प्रवचन हैं। जो भी उस किताब को पढ़ेगा, वह यह समझ सकता है कि वह किताब सेक्स के ऊपर नहीं है, सेक्स को कैसे अतिक्रमण किया जाये, इसके संबंध में है। उसी किताब का अंग्रेजी में अनुवाद हुआ हैः "फ्राम सेक्स टु सुपरकांशसनेस।" कैसे व्यक्ति कामवासना से ध्यान के माध्यम से, आहिस्ता- आहिस्ता चेतना के ऊंचे से ऊंचे शिखर को छू सकता है- यह उस किताब का मूल विषय है।

लेकिन किसी को न तो किताब पढ़नी है, न किसी को किताब में लिखी गयी बात
का प्रयोग करना है। बस लोगों की बुद्धि में एक शब्द डाल देना काफी है। चूंकि सेक्स शब्द का प्रयोग हुआ है, इसलिए अखबार वाले, राजनीतिज्ञ, धर्मगुरु, वे सारे लोग जिनके न्यस्त स्वार्थों पर मैं चोट कर रहा हूं और जिन्हें मेरी बातों का जवाब खोजे से नहीं मिलता, उन्होंने उस शब्द को ही पकड़ लिया है। और जब सारे धर्मगुरु सारे राजनेता और सारे अखबार उनके हाथों में हैं- या तो धर्म नेताओं के हाथों में हैं या राजनेताओं के हाथों में हैं या धनपतियों के हाथों में हैं। सारी दुनिया में उन्होंने प्रचारित कर रखा है कि मैं सेक्स गुरु हूं।
सचाई यह है कि मेरे अतिरिक्त दुनिया में इस समय कोई भी सेक्स से पार कैसे जाया जाये, इस संबंध में शिक्षा देने वाला व्यक्ति मौजूद नहीं है। और वही बात- कि मैं धनियों का गुरु हूं। क्योंकि मैंने इस बात को बार-बार कहा है कि जिसके पास धन है, उनको ही दिखाई पड़ता है कि धन व्यर्थ है। धन को व्यर्थता जानने के लिए धन का होना जरूरी है।
जैनों के चौबीस तीथऋकर, महाराजओं के बेटे हैं। बुद्ध महाराजा के बेटे हैं। राम और कृष्ण सब महाराजओं के बेटे हैं। तुमने कभी किसी भिखमंगे के बेटे को तीथऋकर होते देखा? किस भिखमंगे के बेटे को तुमने कभी अवतार होते देखा? भिखमंगे को फुरसत नहीं है। अभी धन को व्यर्थ कहे, इसके पहले कम से कम धन तो चाहिए, धन का अनुभव तो चाहिए।
तो चूंकि मैंने यह बात कही कि धर्म का ठीक-ठीक स्थापन, केवल समृद्ध देशों में हो सकता है। और भारत में भी तब धर्म का स्थापन था, जब भारत समृद्ध था।
आज क्या है?
गरीबी, भूख, बीमारी- रोटी मांगती है। भूखे आदमी के पास जाकर तुम कहो कि मैं तुम्हें ध्यान करना सिखाऊंगा तो तुम्हें खुद ही शर्म आयेगी मैं चाहता हूं, यह देश समृद्ध हो। मैं चाहता हूं कि दुनिया में कोई भी गरीब न रहे, कोई भूखा न रहे। और क्यों चाहता हूं? इसलिए कि अगर सारी दुनिया में समृद्धि हो तो हम सारी दुनिया में अध्यात्म की प्यास को हजार गुना बढ़ा सकते हैं। हम उसे एक जंगल की आग की तरह फैला सकते हैं।
अब मेरी इस बात से अगर कोई यह मतलब निकाल ले कि मैं धनपतियों का गुरु हूं और उसके पास अगर साधन हों प्रचार के तो वह प्रचार कर सकता है। अब मेरी मुसीबत यह है कि मैं अकेला आदमी हूं और सारी दुनिया से अकेला लड़ रहा हूं। मेरे पास फुरसत भी नहीं है कि मैं उन सारे अखबारों को देख सकूं, जिनमें मेरे संबंध में खबरें छपती हैं। दुनिया की सारी भाषओं में।
अभी परसों इजरायल के एक अखबार ने खबर छापी है कि अब मैं योजना बना रहा हूं इजरायल आने की। और इजरायल आकर मैं अपने को यहूदी धर्म में दीक्षित कर दूंगा। और एक बार यहूदी धर्म में दीक्षित हो जाने के बाद मैं घोषणा करूंगा कि मैं यहूदी धर्म के संस्थापक मूसा का अवतार हूं।
अब मैं इन लोगों को क्या जवाब दूं? और जवाब देने का मतलब भी क्या है?
और किस-किस को जवाब दूं? और दुनिया भर के अखबारों में क्या छपता है। सात वर्ष से तो मैं कुछ पढ़ता ही नहीं। मैंने पढ़ना ही छोड़ दिया, क्योंकि फिजूल की बातों को पढ़ने से क्या प्रयोजन है। सात वर्षों से न मैंने कोई किताब पढ़ी है, न कोई अखबार पढ़ा है, कोई बहुत जरूरी बात होती है तो मेरे संन्यासी मेरे तक पहुंचा देते हैं।
तो मेरे संबंध में जितने झूठ प्रचारित करने हों, बहुत आसान है, क्योंकि मुझे पता ही नहीं चलता कि मेरे संबंध में झूठ प्रचारित किये जा रहे हैं। और चूंकि मैं उनका खंडन नहीं करूंगा, लोग उन्हें मान ही लेंगे कि ठीक होंगे, नहीं तो मुझे खंडन करना चाहिए।
जनता कुछ भी संवेदनशील, सनसनीखेज बात चाहती है। अखबार उसे छापने को तैयार रहते हैं। उनके खिलाफ छापने में तो उन्हें घबराहट होती है, जिनके हाथ में ताकत है। क्योंकि ताकत उनको परेशान करेगी। अगर कोई व्यक्ति राजनीति में किसी बड़े पद पर है तो उसके खिलाफ सच्ची बात को भी नहीं छापा जा सकता। मेरे हाथ में तो कोई ताकत नहीं है। मैं किसी को कोई नुकसान पहुंचा सकता नहीं। मेरे संबंध में जितनी झूठी बातें छापनी हों, छापी जा सकती हैं।

लेकिन झूठ में प्राण नहीं होते। और धीरे-धीरे सारी दुनिया में लोगों को एक बात समझ में आ गयी है कि मेरे खिलाफ सुनिश्चित रूप से कोई षड़यंत्र चल रहा है।
अभी यहां एक सप्ताह पूर्व मेरे संन्यासी विमलकीर्ति की पत्नी मौजूद थी। विमलकीर्ति जर्मनी के अंतिम सम्राट का प्रपौत्र है। वह मेरा संन्यासी था, उसकी पत्नी भी मेरी संन्यासिन है। वह संन्यासी की हालत में ही मृत्यु को उपलब्ध हुआ। उसके पिता, उसकी मां, उसके भाई, सब उसकी मृत्यु के समय यहां मौजूद थे। डाक्टरों ने पहले ही दिन से कह दिया था कि उसके जिंदा बचने की कोई उम्मीद नहीं है, क्योंकि उसकी मस्तिष्क की नस फट गई है और वह बीमारी आनुवांशिक है। उसके दादा की मृत्यु भी वैसे ही हुई थी। और अभी दो महीने पहले उसके काका की मृत्यु भी ठीक वैसे ही हुई। और उस नस के फट जाने के बाद वह बेहोश है, उसको कृत्रिम श्वास देकर हम लाश को जिंदा समझ सकते हैं, मगर यह व्यर्थ की मेहनत है। और पांच दिन के बाद तो डाक्टरों ने बिल्कुल इनकार कर दिया कि फिजूल हमारा समय खराब करवाया जा रहा है। अब इस व्यक्ति के लौटने का को कोई उपाय नहीं है। उसके मस्तिष्क का सब कुछ समाप्त हो गया है। पर मैंने उनसे प्रार्थना की कि कम से कम उसके मां-बाप को आ जाने दो। और मां- बाप के आ जाने के बाद उन लोगों ने उसकी कृत्रिम श्वास की जो नली थी, वह अलग कर ली और अलग करते ही वह मर गया। वह मर तो चुका था सात दिन पहले, सिर्फ, मां- बाप के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे। यूरोप के किसी अखबार ने यह खबर छाप दी कि मैंने उसे मरवा डाला, कि मैंने डाक्टरों को कहा कि उसकी नली अलग कर लो। उसकी पत्नी मौजूद थी, उसकी बेटी मौजूद थी। जब नली अलग की गई, तब उसकी पत्नी और बेटी मौजूद थीं अस्पताल में।
लेकिन उसकी पत्नी अभी यहां थी, उसने मुझे कहा कि आप हैरान होंगे जानकर
यह बात कि ग्रीस की महारानी भारत के एक शंकराचार्य की शिष्या है। ग्रीस की महारानी का एक बेटा इग्लैंड का राजा है प्रिंस फिलिप, एलिजाबैथ का पति। एक लड़की विमलकीर्ति की मां जर्मनी के पदच्युत सम्राट की पत्नी है। दूसरी लड़की हालैंड की, तीसरी लड़की किसी और देश की। ये सारे राज परिवार अभी महारानी के मृत्यु पर इकट्ठे हुए थे। तुरीया, विमलकीर्ति की पत्नी भी महारानी की मृत्यु पर इकट्ठी हुई। क्योंकि करीब-करीब यूरोप के सारे राज परिवारों में किसी न किसी तरह का संबंध, कोई लड़का, कोई लड़की कहीं ब्याहा हुआ है, किसी की लड़की उसके यहां है। ग्रीस की महारानी करीब-करीब सारे यूरोप के राज परिवारों के ऊपर अधिकार रखे हुए है। तुरीया ने मुझे बताया कि मरने से पहले उसने कहा कि कुछ भी हो, भगवान के हाथ से तुरीया और उसकी लड़की को निकालो, क्योंकि शंकराचार्य ने मुझे कहा है कि इससे ज्यादा खतरनाक व्यक्ति और दूसरा नहीं हो सकता। यह आदमी धर्म का दुश्मन है।
और एक बैठक हुई सारे यूरोप के राज परिवारों की, जो वहां मौजूद थे अंतिम संस्कार के लिए, जिसमें यह तय किया गया कि किसी भी तरह से मेरे आंदोलन को नष्ट किया जाए और किसी भी तरह से मुझे नष्ट किया जाये और एक व्यवस्थित योजना बनाई जाये। निश्चित ही ये सारे लोग या तो अब भी राज्य उनके हाथ में है, जैसे कि प्रिंस फिलिप... प्रिंस फिलिप के हाथ में पूरा का पूरा काम सौंपा गया कि वह षड़यंत्र कैसे रचा जाये, इसकी व्यवस्था करें। और जो लोग अब राज्य में नहीं हैं फिर भी उनकी सत्ता तो है, फिर भी राजनीतिज्ञों पर उनका दबाव तो है, फिर भी धनपतियां पर उनका प्रभाव तो है। अगर यूरोप के सारे देशों की पार्लियामेंट मेरे खिलाफ यह कानून बना सकती है कि मैं उनके देश में प्रवेश नहीं कर सकता, तो निश्चित ही साजिश अंतर्राष्ट्रीय है और पीछे धर्मगुरुओं का हाथ है, राजनेताओं का हाथ है, धनपतियों का हाथ है। उनके पास ताकत है।
लेकिन यह बात मैं स्पष्ट बात कर देना चाहता हूं कि झूठ के पास कितनी
ही ताकत हो, सत्य के समझझूठ नपुंसक है। वे सारी साजिशें बेकार हो जायेंगी। जो मैं कह रहा हूं, अगर वह सच है और जो मैं कर रहा हूं, अगर वह अस्तित्व के अनुकूल है, जो मैं बोल रहा हूं, वह सनातन धर्म है तो सारे षड़यंत्र, सारी साजिशें मिट्टी में मिल जायेंगी, उनकी कोई कीमत नहीं है। इसलिए मैं उनके खंडन करने का और व्यर्थ अपना समय नष्ट करने की चेष्टा भी नहीं करता हूं।
वे अपनी मौत मर जाने वाले झूठ हैं।

मैं तो उसका गुरु हूं जिसका हृदय प्रेम का धनी है। मैं तो उसका गुरु हूं जिसके प्राणों में ध्यान का धन है। मैं तो उसका गुरु हूं, जिसके भीतर सत्य को, सत्य के धन को खोजने की प्यास जगी है। अगर धनियों का गुरु ही कहना है तो निश्चित ही मैं धनियों का गुरु हूं, लेकिन तब मेरे धन की परिभाषा तुम्हें समझ लेनी होगी। जिनके पास केवल सोने और चांदी के ठीकरे हैं, उनको मैं भिखमंगे कहता हूं। धनी तो वह है, जिसके हृदय में शांति है, आनंद है, उल्लास है, जिसके पैरों में नृत्य है, जिसकी श्वासों में बांसुरी है। जिसके भीतर परमात्मा ने थोड़ी सी झलक दिखा दी है। बस वही केवल धनी है और सब गरीब हैं।
लेकिन यह मेरा धंधा ही खराब धंधा है। सुकरात को जब जहर दिया गया तो उसने यही कहा कि इसमें कसूर जहर देने वालों का नहीं है, मेरा धंधा ही खराब है। शह सत्य बांटने का धंधा खतरनाक धंधा है। मीरा ने कहा है, "जो मैं ऐसा जानती प्रेम किये दुख होय, जगत ढिंढोरा पीटती, प्रीत न करियो कोय।" परमात्मा से प्रेम किया तोझंझट शुरू हुई। अब मैं तो मुसीबत में फंसा हूं, तुमको भी फसाऊंगा। साथ ही तैरेंगे, साथ ही डूबेंगे।
प्यारे भगवान, चालीस वर्षों की स्वतंत्रता के बावजूद यह देश समृद्धिशाली क्यों नहीं है, जबकि इतने समय में रूस, चीन, जापान इत्यादि देश विश्व शक्तियों में तबदील हो चुके हैं? क्या आपका जीवन दर्शन भारत को समृद्ध बना सकता है? क्या आप रजनीशपुरम जैसा स्वर्ग समस्त भारत में उतार सकते हैं?
निश्चित ही। भारत को समृद्ध होने में कोई बाधा नहीं है; सिवाय भारत की प्राचीन धारणाओं के।
कुछ मौलिक बातें भारत के मस्तिष्क में उतर जायें तो केवल दस वर्षों के भीतर दुनिया की विश्व शक्ति बन सकता है।
पहली बात कि दरिद्रता में कोई अध्यात्म नहीं है। यह और बात है कि कोई समृद्ध व्यक्ति अपनी समृद्धि को लात मारकर भिखारी हो जाये, लेकिन उसके भिखारीपन में और एक साधारण भिखारी में जमीन आसमान का अंतर है। उसका भिखारीपन समृद्धि के बाद ही सीढ़ी है और साधारण भिखारी अभी समृद्धि तक ही पहुंचा है, अभी समृद्धि के पार वाली सीढ़ी पर कैसे पहुंचेगा? भारत के मन में दरिद्रता के प्रति जो एक झूठा भाव पैदा हो गया है कि यह आध्यात्मिक है, उसका कारण है, क्योंकि बुद्ध ने राज्य छोड़ दिया है महावीर ने राज्य छोड़ दिया। स्वाभाविक तर्क कहता है जब धन को छोड़कर लोग चले गये, गरीब हो गये, नग्न हो गये, तो तुम बड़े सौभाग्यशाली हो, तुम नग्न ही हो, कहीं छोड़ कर जाने की जरूरत ही नहीं है। न राज्य छोड़ना है, न धन छोड़ना है। मगर तुम भूलते हो। बुद्ध के व्यक्तित्व में जो गरिमा दिखाई पड़ रही है, वह साम्राज्य को छोड़े बिना नहीं हो सकती थी। साम्राज्य का अनुभव एक विराट मुक्ति का अनुभव है, कि धन तुच्छ है, इससे कुछ पाया नहीं जा सकता।
लेकिन इससे पूरे भारत ने एक गलत नतीजा ले लिया कि गरीब ही बने रहने में सार है। क्या फायदा है? सम्राट गरीब हो रहे हैं तो तुम्हारी गरीबी को छोड़ने से क्या फायदा है?
भारत के मन से गरीबी का आदर मिटा देना जरूरी है।
भारत में जनसंख्या को तीस वर्षों तक बिल्कुल रोक देना जरूरी है।
पांच वर्षों तक रजनीशपुरम में एक भी बच्चा पैदा नहीं हुआ। कोई जोर-जबरदस्ती नहीं थी, कोई बंदूक लेकर नहीं खड़ा था पीछे। सिर्फ समझाने, समझ कि बात है। हमारे पास जितनी जमीन है; जितनी चादर है, उससे ज्यादा पैर मत फैलाओ। नहीं तो या तो पैर उघड़ जायेंगे या सिर उघड़ जायेगा। कुछ न कुछ उघड़ जायेगा।
तीस वर्षों तक भारत ही जनसंख्या न बढ़े।
भारत के विश्वविद्यालयों में, विद्यालयों में, स्कूलों में, उन विषयों पर जिनका आज जीवन को समृद्ध करने में कोई सहयोग नहीं है, जोर न दिया जाये, जैसे भूगोल, इतिहास। तकनीकी ज्ञान, साइंस और ध्यान ये भारतीय शिक्षा का आधार बन जाएं। और इन दोनों के बीच संतुलन बना रहे कि जितना विज्ञान बढ़े, उतना ही ध्यान बढ़े। विज्ञान बढ़ जाये और ध्यान न बढ़े तो खतरा है। क्योंकि तब ऐसा होगा, जैसे छोटे बच्चे के हाथ में नंगी तलवार आ गई।

भारत में इतने धर्म हैं, जिनमें रोज झगड़ा है। इस मूर्खता को छोड़ा जाये।
कम से कम भारत पहल करे दुनिया में कि धर्म एक है।
और उसका संबंध न हिंदू से है, न मुसलमान से है।
उसका संबंध तो भीतर की वीणा के तार गुंंजाने से है। संन्यास के नाम से मैंने उसी एक धर्म को फैलाने की कोशिश की है ताकि जो शक्ति व्यर्थ लड़ने में लग जाती है, वही शक्ति भारत में सृजन के काम आ जाये।
भारत के चालीस वर्ष खराब हुए, उसके पीछे कारण हैं। पहला कारण तो यह है
कि महात्मा गांधी की जीवन दृष्टि बहुत आदिम थी, विकासशील नहीं थी। चर्खे पर रुक गयी थी। चर्खे को भुलाना पड़ेगा, दफनाना पड़ेगा, समादर सहित। गांधी को आदर दो, क्योंकि उन्होंने देश की आजादी के लिए अथक प्रयास किया। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि जो लोग देश की आजादी के लिए लड़ना जानते हैं, वही लोग देश का निर्माण करना भी जानते होंगे। ये दोनों अलग बातें हैं। देश की आजादी के लिए लड़ना एक बात है। यह एक सैनिक की बात है। एक योद्धा की बात है। मेरे परिवार में सारे लोग जेल गये। मैं उन सब से पूछता था, मुझे तुम बताओ कि तुम्हारी आजादी अंग्रेजों से आजादी है यह तो ठीक, लेकिन आजादी किसलिए? आजादी किससे यह तो समझ में आता है। लेकिन किसलिए? तुम्हारे पास अगर आजादी आज आ जाये तो तुम क्या करोगे? देश के बड़े-बड़े नेताओं से, मैं तो छोटा था, जयप्रकाश से मैंने पूछा, अगर आज आजादी आ जाए तो क्या करोगे? तुम्हारे पास आजादी के बाद क्या करना है इसकी कोई योजना, कोई स्पष्ट धारणा नहीं है। और मुश्किल यही हो गई कि जो लोग आजादी का युद्ध लड़े, उन्हीं के हाथ में आजादी की सत्ता गई। वे लड़ना तो जानते थे, मगर सृजन करना और निर्माण करना नहीं जानते थे। उससे उनका कोई नाता नहीं था। वह उन्होंने कभी सोचा नहीं था।
अब जरूरत है हमें कि हम उन लोगों के हाथ में सत्ता दें, जो देश में सृजन, नयी जीवन दृष्टि नये आयाम खोलने की क्षमता रखते हों।
और उन लोगों की कमी नहीं है। हिंदुस्तान में वैज्ञानिक कोई पैदा होता
है तो उसे पश्चिम में नौकरी करनी पड़ती है, क्योंकि हिंदुस्तान में पहली तो बात उसके लिए प्रयोग करने के लिए कोई साधन नहीं है। कोई प्रयोगशाला नहीं है। ज्यादा से ज्यादा वह प्रोफेसर हो सकता है। सृजनात्मक कुछ भी उससे न हो सकेगा। और भारत को निर्माण करना हो तो हमें सृजन पर जोर देना चाहिए।
पांच हजार लोगों के कम्यून में वैज्ञानिक थे, सर्जन थे, डाक्टर थे, मनोवैज्ञानिक थे, मनोचिकित्सक थे, अणुविद थे। और मैं उन सबको भारत ला सकता हूं। मेरे संन्यासियों में कोई आदिवासी नहीं है। यह कोई ईसाई मिशनरियों का मामला नहीं है अनाथालय के बच्चे और आदिवासी। मेरे संन्यासियों में जगत के श्रेष्ठतम प्रतिभाशाली लोग हैं। मैं उन सबको भारत ला सकता हूं, पूरे दस लाख संन्यासियों को और यहां भारत में उनको पूरे सृजन में लगा सकता हूं। लेकिन इस देश की सरकार मुझ पर रोक लगाना चाहती है कि कोई भी बाहर से संन्यासी हिंदुस्तान न आ सके। नासमझी की एक सीमा होती है। इनको पता होना चाहिए कि हम अपने बच्चों को पढ़ाते हैं, लिखाते हैं, उन पर खर्च करते हैं।े उनको पश्चिम पढ़ने भेजते हैं और जब वे पढ़-लिख कर तैयार हो जाते हैं, तो पश्चिम उन्हें पी लेता है। सारा खर्च हमारा, प्रतिभा हमारी, लेकिन उसका अंतिम फल पश्चिम को मिलता है। अमेरिका जानता है कि किस तरह सारी दुनिया से प्रतिभाशाली लोगों को खींच लेना।
मेरे पास वह प्रतिभाशाली लोगों की जमात है।
लेकिन एक मूढ़ सरकार हमारी है, वह मेरे संन्यासियों को भारत आने से रोक रही है। कानूनन तो नहीं रोक सकत। तो पार्लियामेंट में तो मिनिस्टर कहते हैं कि हम संन्यासी को नहीं रोकेंगे और एम्बैसीज को खबरें दी जाती हैं कि संन्यासियों को आने मत देना। जगह-जगह से संन्यासी मुझे खबर भेज रहे हैं कि हम एम्बैसी में जाते हैं और वहां से खबर मिलती है कि संन्यासी को भारत जाने की कोई जरूरत नहीं है!
मेरे एक मित्र ने अभी आस्ट्रेलिया से मुझे खबर की। सुनकर मुझे धक्का लगा कि भारतीय राजदूत ने एक युवक को, इंजीनियर को कहा, जो कि संन्यासी हैं, कि तुम किसलिए भारत जाना चाहते हो। उसने कहा मैं भारत ध्यान सीखने जाना

चाहता हूं। भारतीय राजदूत ने कहा कि भारत, ध्यान, योग इत्यादि सीखने के लिए अब कोई जगह नहीं है। वे जमाने लद गए। अब इस तरह के लोगों को हम भारत नहीं जाने देंगे।
यह हमारे राजदूत हैं! कोई व्यक्ति ध्यान सीखने भारत आन चाहता है और हमारे राजदूत उससे कहते हैं कि वे जमाने लद गए, अब भारत कोई ध्यान सीखने नहीं जा सकता।
और मेरे लिए भारत सिवाय ध्यान सीखने के और किसी बात का प्रतीक नहीं है। यह ध्यान का विश्वविद्यालय है। और यह आज नहीं सदियों से ध्यान का विश्वविद्यालय है।
जो चालीस वर्ष हमने खोए हैं, वह दस वर्ष में हम वापिस पा सकते हैं। लेकिन बस मजबूरी तो यह है कि उल्लू मर जाते हैं, औलाद छोड़ जाते हैं। और उल्लू ही ठीक थे, औलाद और भी उपद्रव है।
प्यारे भगवान, भारतवासियों के लिए आपका कोई ऐसा संदेश है, जिसे आप उन
तक पहुंचाना चाहेंगे?
हर्षिदा, इतना ही कहना चाहता हूं भारत से कि तुम अपने असली चेहरे को पहचानो तुम गौतम बुद्ध के देश हो। और तुम्हारे राजदूत कह रहे हैं कि ध्यान के लिए भारत जाने के लिए अब द्वार बंद हैं। तुम कृष्ण के देश हो। तुम पतंजलि के देश हो। तुमने उन सितारों को जन्म दिया है, जिसका कोई मुकाबला दुनिया में नहीं है। सारे आकाश के तारे तुम्हारे तारों के सामने फीके हैं। तुम जागो, ताकि दो कौड़ी के राजनीतिज्ञ तुम्हारा और तुम्हारी आने वाली पीढ़ियों का शोषण न कर सकें। ताकि अंधे लोग एक आंख वालों के देश का मार्गदर्शन न कर सकें। तुम जरा याददाश्त से भरो। तुम जरा उन सारी सुगंधों को फिर से याद करो। उपनिषदों की गूंज, कबीर के गीत, मीरा के नृत्य, तुम अद्वितीय हो।
छोटे-मोटे लोग तुम्हारे ऊपर अधिकार किए बैठे हैं। इन्हें उतार फेंको। तुम्हारा देश अभी भी बुद्धिमानों से खाली नहीं है। लेकिन बुद्धिमान व्यक्ति चुनाव में भिखमंगों की तरह तुम्हारे पास वोट मांगने नहीं आएंगे। जो तुम्हारे पास वोट मांगने आये, उसे वोट मत देना। जिसे तुम वोट देने योग्य समझो, उसके पैर पड़ना, उसे समझाना-बुझाना कि तुम खड़े हो जाओ, हम तुम्हें वोट देना चाहते हैं। जो तुम्हारे पास वोट भीख मांगने आता है, वह दो कौड़ी का है। जिसकी कोई कीमत है और जिसकी कोई आत्मा है और जिसका कोई स्वाभिमान है, वह तुमसे भीख मांगने नहीं आयेगा। तुम्हें उससे जाकर प्रार्थना करनी होगी।
भारत को एक नये ढंग को लोकतंत्र दुनिया को देना होगा, जहां नेता भीख नहीं मांगता, जहां जनता बुद्धिमानों को, विचारशीलों को प्रार्थना करती है थोड़ा-सा समय, थोड़ी सी बुद्धिमत्ता इस गरीब देश के लिए भी दे दो।
27 अक्टूबर 1986 संध्या, सुमिला जुहू बंबई

फिर पत्तों की पाजेब बजी
दूसरा प्रवचन

मैं केवल एक मित्र हूं

आपके अमेरिका के अनुभव के बाद, अब आप शारीरिक और मानसिक रूप से कैसा अनुभव करते हैं?

यह सवाल बड़ा जटिल है; हालांकि सरल दिखाई देता है।
मनुष्य को तीन तलों पर विभाजित किया जा सकता हैः शारीरिक, मानसिक, आत्मिक। और एक और भी तल है, जिसे युगों-युगों से रहस्यदर्शियों ने कोई नाम नहीं दिया। भारत में उसको कहते हैं, "तुरीय"। अंग्रेजी में हम उसको "द फोर्थ" कह सकते हैं।
और मैं अपने मार्ग को तुरीय का, "द फोर्थ का मार्ग कह सकता हूं। मैं तुरीय हूं। तुम भी तुरीय हो। कोई जानता हो या न जानता हो, लेकिन तुरीय उसकी वास्तविकता है। वह हमारी चेतना है। वह अस्तित्व का परम विकास है। एक बार तुमने तुरीय को जान लिया, तो बाकी तीन तुमसे अलग हो जाते हैं। मैं देखता हूं कि मेरे शरीर को सताया जा रहा है, लेकिन मुझे नहीं लगता कि मैं सताया जा रहा हूं। मैं अपनी भूख देख सकता हूं, लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं भूखा हूं- शरीर भूखा है और मैं देख रहा हूं।
ये बारह दिन मेरे लिए अत्यंत अर्थपूर्ण थे। मैं अमेरिका के फासिस्ट शासन के प्रति अनुगृहीत हूं कि उन्होंने मुझे यह अवसर दिया। उन्होंने हर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ढंग से मुझे उत्पीड़ित किया, सताया। उन्होंने मुझे चोट पहुंचाने की कोशिश की, लेकिन वे बड़े हैरान हुए।
एक जेलर ने मुझसे पूछा, आपका राज क्या है? क्योंकि आपको ऐसे हालतों में रखा गया है, जो कि आपके शरीर के लिए बहुत कष्टप्रद है। आपको ऐसे लोगों के साथ रखा गया है, जो आपको रात भर सोने नहीं देते। सुबह छह बजे से लेकर रात के बारह बजे तक आपको दो-दो टेलीविजन सेटों पर बिठाया जाता है, जो बड़े जोर से चालू रहते हैं। और जब टेलीविजन सेट बंद हो जाएंगे तब कैदी इस कोठरी से उस कोठरी तक बातचीत करने लगेंगे।
अब वहां पर बारह कोठरियां हैं। पहली कोठरी का आदमी बारहवीं कोठरी के आदमी से बात कर रहा है। स्वभावतः, उनको जोर से चिल्लाना पड़ता है। बारह दिन तक उन्होंने मुझे एक क्षण सोने नहीं दिया। लेकिन मेरे भीतर कोई तनाव नहीं था। इसीलिए उसने मुझसे पूछा कि क्या राज है?
मैंने कहा, राज बड़ा सरल है। मैं जो भी घट रहा होता है, उसे सिर्फ देखता रहता हूं। मैं इस तरह नहीं सोचता कि तुम मेरे साथ यह कर रहे हो। मैं अलग हूं। जैसे तुम किसी और के साथ कर रहे हो और मैं देख रहा हूं। मैं क्यों चिंता लूं? तुम मुझे मार सकते हो लेकिन तुम मुझे विचलित नहीं कर सकते। तुम मुझे जहर दे सकते हो लेकिन मैं उसे वैसे ही पी जाऊंगा जैसे मैं एक गिलास रस पीता हूं। उससे मेरे भीतर कोई गड़बड़ कोई भय पैदा नहीं होगा। क्योंकि मैंने जान लिया है कि मेरी वास्तविकता अमृत है; उसे कोई नहीं मार सकता।
इसका कोई राज नहीं है। और अगर तुम राज जानना चाहते हो, तो मेरे कम्यून में आओ और ध्यान सीखो।
बारह दिनों में मेरा आठ पाउण्ड वजन कम हुआ। क्योंकि मैं जो भोजन मांगता, वे हमेशा कहते, वह उपलब्ध नहीं है। जो कि सच नहीं था। क्योंकि बाकी कैदियों ने मुझे बताया कि वह उपलब्ध था; उपलब्ध ही नहीं बल्कि हम आपको उपलब्ध करवा दें। मैंने फलों की मां की- फल नहीं हैं। और पंद्रह मिनटों के भीतर बाकी कैदी, सेब और अन्य फल ले आते। और वे कहते कि उन्हें यह सब मिलता है, तो फिर आपको क्यों नहीं मिलता?
शाकाहारी भोजन... उपलब्ध नहीं है। मैंने कहा, मैं कुछ विशेष चीज नहीं मांग रहा हूं- सिर्फ सब्जियों का सलाद, दही या दूध, ब्रेड और योगर्ट... मुश्किल है। हम एक आदमी के लिए व्यवस्था नहीं कर सकते। हमें चार सौ लोगों की देखभाल करनी पड़ती है। तो मैंने तो फिर तुम जिस चीज की भी व्यवस्था कर सको। और फिर मैं देखूंगा कि उसमें से मैं क्या खा सकता हूं।

तो बारह दिन तक मैं करीब-करीब भूखा रहा; सिर्फ कभी-कभी पानी पीता रहा।
उन कैदियों ने मुझे फलों का रस लाकर दिया। यह चमत्कार था। जेलर कहता है, वह नहीं ला सकता, और कैदी मेरे लिए रस की बोतलें ले आते थे।
और इस घटना ने मुझे उन लोगों का बहुत अच्छा अनुभव हुआ, जिनको हम अपराधी कहते हैं। वे उन लोगों से कहीं अधिक मानवीय हैं, जो दुनिया भर की नौकरशाही में होते हैं। मैं टूथपेस्ट मांगूंगा, तो उसे लाने में दो दिन लग जाएंगे; और उस पर भी, यदि टूथपेस्ट आया तो टूथ ब्रश नहीं होगा। मैं साबुन के लिए कहूंगा, और वह तब आएगा जब मैं दूसरे जेल के लिए रवाना हो रहा होऊंगा।
लेकिन जैसे ही उन कैदियों को इसका पता चलता, वे अपने भोजन में से कुछ चीजें ले आते। वे कहते, यह बिल्कुल ताजा है, हमने इसका उपयोग नहीं किया है। आप देख सकते हैं कि यह बंद है। भगवान, आपने इसे स्वीकार किया तो हमें बहुत खुशी होगी।
प्रत्येक कारागृह में मैंने देखा कि वहां के कैदी अधिक मानवीय, अधिक प्रेमपूर्ण थे। नौकरशाही के लोगों की अपेक्षा उनकी विकास की संभावना अधिक थी। नौकरशाही तो बिल्कुल कुरुप थी। और ऊपर ओढ़े हुए लोकतंत्र के मुखौटे के कारण, वह और भी कुरूप हो जाती है। अगर तुम ईमानदार हो, और तुम कहते हो कि तुम एक तानाशाही हो, तो मैं उसके बारे में कुछ नहीं कहना चाहता। लेकिन लोकतांत्रिक होने का दिखावा करना, और फिर इस तरह के ढंग अपनाना...
उदाहरण के लिए, उन्होंने मुझे ऐसी कोठरी में रखा, जिसमें हर्पीज जैसे संघतक रोग का मरीज रखा हुआ था। और छह महीने से उसकी कोठरी में किसी भी कैदी को नहीं रखा गया था। डाक्टर उसकी इजाजत नहीं देते थे। और जब मुझे वह कोठरी दी गयी, तब वह डाक्टर मौजूद था, वह जेलर मौजूद था। अब मैं नहीं कह सकता, कौन अधिक मानवीय है- वह डाक्टर, जेलर या वह व्यक्त स्वयं।
वह आदमी क्यूबा का था, इसलिए वह ज्यादा अंग्रेजी नहीं बोल पाता था। लेकिन उसने कागज के एक टुकड़े पर लिखा कि भगवान, वे आपको सता रहे हैं। मैं हर्पीज का प्रमाणित रोगी हूं। और उन्होंने इस आशा में आपको यहां रखा है कि आपको यहां रखा है कि आपको यहां रखने से आपको हर्पीज हो जाएगा। जहां तक संभव हो, मैं सब कुछ साफ-सुथरा रखने की कोशिश करूंगा। लेकिन अच्छा होगा कि आप इन कुत्तों को फिर से बुलाएं और उनसे कहें।
मैंने जेलर को दुबारा बुलाया और उसे वह पर्चा दिखाया, और उससे कहा कि डाक्टर यहां मौजूद था; छह महीने से आपने यहां किसी को रखा नहीं है, और मैं कैदी भी नहीं हूं, मेरे ऊपर मुकदमा भी नहीं चला है। तुमने यहां मुझे बिना किसी मुकदमे के व्यर्थ ही कैद कर रखा है।
और अब तुम मुझे इस आदमी के साथ रख रहे हो! तुमने क्या समझ रखा है, मैं यहां सदा रहूंगा? कल मैं बाहर जाऊंगा, और मैं इस बात का इंतजाम करूंगा कि पूरे विश्व प्रेस को इसकी जानकारी हो।
तत्क्षण, बिना कुछ कहे... और मैंने उस डाक्टर से कहा- उसी डाक्टर से, तुम्हारे भीतर मनुष्य का हृदय नहीं है। यह मरीज तुमसे अधिक मानवीय है। इससे तो अच्छा होता कि उसके बजाय तुम हर्पीज के शिकार हो जाते।
एक बहुत बड़े जेल में... मैं वहां आधी रात पहुंचा, और मुझे उन्होंने वहां एक फार्म भरने के लिए कहा, लेकिन मेरा नाम होगा, डेविड वाशिंगटन। मैंने कहा, मेरा नाम डेविड वाशिंगटन क्यों हो? मेरा अपना नाम है... आर यह अमेरिकन मार्शल कह रहा है। और मैंने उस आदमी से कहा कि तुम इस देश के कानून लागू करने वाले अधिकारी हो। तुम्हारे कोट पर लिखा है "विधिशास्त्र"- कानून- न्याय विभाग।" यह किस तरह का न्याय है? तुम मुझे झूठ बोलने के लिए कह रहे हो!
उसने कहा, आप कुछ भी कहें, कोई भी दलील काम नहीं आएगी। या तो आप अपने हस्ताक्षर करें या इस लोहे की कड़ी बेंच पर बैठें। और हमें आपकी पीठ की हालत के बारे में पता है। रात भर इस कड़ी बेंच पर बैठना... नहीं तो हम एक कोठरी का इंतजाम कर देंगे, और फिर आप सो सकते हैं। लेकिन आपको हस्ताक्षर करने होंगे।
मैंने कहा, मैं हस्ताक्षर करूंगा। लेकिन फार्म तुम्हें भरना होगा। क्योंकि मुझे तो डेविड वाशिंगटन का स्पेलिंग भी पता नहीं है। तुम फार्म

भर दो। वह मेरी चाल समझ नहीं सका। उसका ख्याल यह था कि बाहर तख्ती पर मेरा कोई उल्लेख नहीं होगा। तो यदि वे मुझे मार भी दें, या मुझे कुछ हो जाए, तो यह खोजने का कोई उपाय नहीं होगा कि मैं कहां खो गया, मेरा क्या हुआ। क्योंकि मेरा नाम कारागृह में दर्ज ही नहीं किया गया था।
तो मैंने उसे डेविड वाशिंगटन, और अन्य सब जानकारी लिखने के लिए बाध्य किया। और मैंने हिंदी में अपना ही नाम लिख दिया। उसने मेरे हस्ताक्षर देखे, लेकिन वह समझ नहीं सका कि वह क्या था। और मैंने प्रेस से कहा कि आप जाकर देख सकते हैं। आप पूछ सकते हैं कि डेविड वाशिंगटन कौन था? और इन निशानों का क्या मतलब है। क्योंकि मेरे हस्ताक्षर पूरी दुनिया में विख्यात हैं। और पूछो कि यह कैसे हुआ? और आपने उनके साथ जबरदस्ती क्यों की?
एक युवती, जिसकी रिहाई होने वाली थी, इस पूरे वार्तालाप को सुन रही थी। मैंने उस मार्शल से कहा, तुम मुझे ज्यादा देर तक नहीं रख सकोगे। वह युवती बाहर गई... क्योंकि जिस कारागृह में वे मुझे रखने के लिए ले जाते, वहां प्रेस पहुंच जाती, प्रसार माध्यम पहुंच जाता। और समाचार माध्यम ने मेरी अपरिसीम सहायता की।
और पहली बार यह बात मेरी समझ में आयी कि किसी भी दूरदर्शन पर किसी भी रेडियो पर सरकारी नियंत्रण नहीं होना चाहिए, वह खतरनाक है। क्योंकि दूरदर्शन रेडियो, अखबार- इन सबने उस फासिस्ट नौकरशाही को बाध्य किया कि मुझे नुकसान न पहुंचाये।
सुबह रेडियो पर यह पहली खबर थी कि मुझसे झूठे नाम से दस्तखत करवाये गये हैं। उन्होंने तत्क्षण वह कारागृह बदल दिया, क्योंकि तब वहां रहना खतरनाक था। अब डेविड वाशिंगटन वहां पर है। अगर वे पूछते कि डेविड वाशिंगटन कहां है, तो वे पैदा नहीं कर सकते थे। और सब ओर यह खबर फैल गई थी कि डेविड वाशिंगटन के पीछे मैं हूं। सुबह तड़के मुझे दूसरी जेल ले जाया गया। यह क्रम बारह दिनों तक जारी रहा... पांच जेलों में।
इसके पीछे क्या उद्देश्य था?
उद्देश्य बिल्कुल सीधा साफ था। उद्देश्य यह था कि मुझे इस सीमा तक सताएं कि मेरे लोग भी... पांच हजार संन्यासियों से मिलकर एक सुंदर कम्यून बनाया है- मानो एक स्वप्नलोक साकार हुआ था। और वे लोग उसे कम्यून से डरते थे। वह कम्यून राजनीतिकों की छाती में शूल जैसा चुभ रहा था। क्योंकि कम्यून में इतनी सारी बातें घट रहीं थीं, जो उनकी कल्पना के बाहर थीं; यह कैसे हो सकता है? न कोई गरीब था, न कोई अमीर था। और वहां कोई तानाशाही नहीं थी। कोई तुम पर जबरदस्ती नहीं कर रहा था कि तुम्हें तुम्हारी संपदा बांटनी है।
मैंने एक छोटी सी तरकीब काम में लायी, और वह यह थीः कम्यून के भीतर पैसे का उपयोग न किया जाए। बाहर की दुनिया के साथ हम पैसे का उपयोग कर सकते हैं,, लेकिन कम्यून के भीतर पैसे का उपयोग नहीं हो। और इस छोटी-सी नीति से सारी गरीबी और सारी अमीरी खत्म हो गई। अगर पैसे का उपयोग नहीं होता, तो तुम लाखों के मालिक हो या तुम्हारे पास एक डालर भी नहीं है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। और हर चीज कम्यून जुटाएगा। तो तुम्हें जिस चीज की भी जरूरत हो- तुम्हें सिर्फ मांगने की जरूरत है।
पहली बार उन्होंने देखा कि साम्यवाद किसी तानाशाही के बगैर सफल हो सकता है। और उन्होंने यह भी देखा कि हमने मरुस्थल को मरूद्यान में बदल दिया है हमने पांच हजार लोगों के लिए पूरी तरह से वातानुकूलित मकान बनाए थे। हमने काम करने के लिए बाहर के किसी व्यक्ति को नहीं बुलाया। हमने स्वयं मेहनत की। हमने तालाब बनाये, जल प्रपात बनाये हम उसे एक मनभावन स्वर्ग में बदलना चाहते थे। हम पूरी तरह आत्मनिर्भर थे। हम अपनी आवश्यकतानुसार अनाज, सब्जियां फल दूध के उत्पादन स्वयं पैदा कर रहे थे। और वह जमीन पचास सालों से बंजर पड़ी हुई थी, उसे कोई खरीदने के तैयार नहीं था।
तो चारों तरफ यह सवाल उठाया जा रहा था कि अगर ये लोग इस मरूद्यान को बदल सकते हैं, प्रसन्नता से रह सकते हैं, सुविधा में रह सकते हैं, कड़ी मेहनत कर सकते हैं, और फिर भी ध्यान कर सकते हैं... हम दिन की शुरुआत ध्यान

से करते थे; उसके बाद काम, फिर पांच हजार लोग एक रेस्तरां में खाना खाते- एक रसोईघर, एक परिवार। तुम अनुमान नहीं कर सकते कि कौन गरीब है, कौन अमीर है।
क्योंकि सभी के पास एक जैसी चीजें हैं।
संन्यासियों कि लिए हमारे पास पांच सौ कारें थीं, जिनका कोई भी उपयोग
कर सकता था। पांच हवाई जहाज थे। सौ बसें थीं जो निरंतर दौड़ती रहती थीं। तुम्हें कहीं भी जाना हो, हर पांच मिनट बाद बस मिल जाती। वे डर गए और ईष्या से भर गए कि यह कम्यून उनके लिए उपद्रव खड़ा करने वाला है- कि तुम क्या कर रहे हो? अमेरिका में तीन करोड़ लोग गलियों कूचों में रह रहे हैं, जिनके पास रोटी, कपड़ा, मकान कुछ भी नहीं है। उनमें से दो सौ लोग हमारे यहां आये थे। वे हमारे साथ घुलमिल गए थे। और हमने पाया कि वे बड़े प्यारे लोग हैं। चार सालों में वहां कोई अपराध नहीं हुआ, कोई हत्या नहीं, कोई बलात्कार नहीं, कोई आत्महत्या नहीं, न कोई पागल हुआ। वह इतना स्वस्थ और...
मैं तुम्हें अभी बताता हूं।
कम्यून को विनष्ट करने का एकमात्र उपाय था- या तो वे मुझे खत्म कर डालें, या मुझे इतना सताएं कि मैं वह देश छोड़ दूं, या वे मुझे निर्वासित कर दें, ताकि मेरे लोग व्यथित हो जाएं। और वे व्यथित हुए! उन बारह दिनों में उनमें से कई लोग खाना नहीं खाते थे। इस सबके पीछे यही ख्याल थाः मुझे उत्पीड़ित करते रहना, जिससे कि कम्यून बिखर जाए। क्योंकि यद्यपि में कम्यून का सदस्य नहीं था, या कम्यून का कोई पदाधिकारी भी नहीं था, लेकिन मैं उनकी आत्मा था।
और तुम मुझे पूछ रहे हो, यह ख्याल मैंने क्यों छोड़ दिया?- इसलिए कि वही समस्याएं फिर से पैदा होंगी।
क्या इसी कारण से आप पूना नहीं लौट रहे हैं?
नहीं, पूना का आश्रम अभी भी कार्यरत हैं लेकिन उन्हीं समस्याओं के साथ। यदि मैं वहां जाऊंगा तो समस्याएं और बढ़ेंगी। अभी तो वे किसी भांति चला रहे हैं, लेकिन मेरे वहां पहुंचने से वहां तत्क्षण समस्याएं कई गुना बढ़ जाएंगी।
तो मैंने तय किया है कि जब तक मुझे कोई सरकार निमंत्रित नहीं करती, सहयोग नहीं देती, जमीन नहीं देती, तब तक मैं कम्यून शुरू करने वाला नहीं हूं। विश्व भर में मेरे कम्यून हैं। तो मैं कहीं भी रहूंगा। और वहीं से मेरे सभी कम्यूनों का मार्गदर्शन करूंगा। लेकिन मेरा किसी भी कम्यून में रहना उस कम्यून के लिए खतरनाक सिद्ध होगा।
मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। पूरे संसार में रामकृष्ण मिशन फल-फूल रहा है, उन्हें किन्हीं समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता, फिर आपके ही कम्यून को, या मिशन को- जो भी उसका रूप हो- इतनी समस्याओं का सामना क्यों करना पड़ रहा है?
बात सरल है। रामकृष्ण मिशन किसी धर्म के खिलाफ नहीं है, किसी राजनीति
के खिलाफ नहीं है। मेरी स्थिति ठीक इससे उलटी है। मैं सभी संगठित धर्मों के खिलाफ हूं।
क्योंकि मेरी दृष्टि में सत्य संगठित नहीं किया जा सकता। और जैसे ही तुम उसे संगठित करते हो, तुम उसकी हत्या कर देते हो। मैं उन सभी अंधविश्वासों के खिलाफ हूं, जो हजारों सालों में इकट्ठे हुए हैं।
अब जैसे भारत में, मनुस्मृति पांच हजार साल पुरानी है, लेकिन अभी भी उसकी हिंदू मन पर पकड़ है। रामकृष्ण मिशन उसके खिलाफ एक भी शब्द नहीं कहता- मनु संहिता के खिलाफ। और मैं चाहता हूं कि मनु संहिता जला दी जाए क्योंकि उसके कारण भारत में इतने उपद्रव हो रहे हैं, कि इसकी तुलना और किसी भी किताब से नहीं की जा सकती। उसने वर्ण व्यवस्था पैदा की। उसने भारत के एक चौथाई अंश को अमानवीय हालत में डाल दिया है, लेकिन रामकृष्ण मिशन उसके विषय में कुछ नहीं कहेगा।
लेकिन रामकृष्ण मिशन, रामकृष्ण परमहंस देव और स्वामी विवेकानंद्-- जरा एक मिनिट रुकना। इन दो नामों का एक साथ प्रयोग मत करो। क्योंकि मेरे लिए ये दो नाम बिल्कुल भिन्न हैं, ऐसे दो व्यक्तियों के हैं, जिनकी गुणवत्ता बिल्कुल ही भिन्न हैं।

पहले रामकृष्ण मिशन। रामकृष्ण मिशन की स्थापना रामकृष्ण परमहंस ने नहीं की, वह विवेकानंद की उपज है।
तो एक बात- वह ज्ञानोपलब्ध मस्तिष्क की उपज नहीं है। विवेकानंद बड़े होशियार राजनीतिक हैं। अगर वे ईसाइयों के बीच बोलते हैं, तो वे क्राइस्ट की प्रशंसा करेंगे। उनमें किसी भी मुद्दे पर उनकी आलोचना करने की हिम्मत नहीं है। मैं वैसा नहीं कर सकता। यदि मैं देखता हूं कि कुछ गलत है, तो मुझे उसे कहना ही पड़ेगा। और कुछ अच्छाई दिखाई दी, तो मैं प्रशंसा करता हूं। लेकिन मैं आलोचना करने का हक भी रखता हूं। अगर वे बौद्धों के बीच बोल रहे हैं, तो वे बुद्ध और बौद्ध शास्त्रों के खिलाफ कुछ नहीं बोलेंगे। तो उन्होंने रामकृष्ण मिशन को सब धर्मों के संश्लेषण की तरह शुरू किया।
अब, मेरी दृष्टि में, सब धर्मों के संश्लेषण की धारणा ही, सब झूठों के संश्लेषण जैसी मालूम होती है- जो कि एक और भी बड़ा झूठ होगा। इतने धर्मों की कोई जरूरत नहीं है। जरूरत है धार्मिकता की, एक खास गुणवत्ता की जो न हिन्दू है, न मुसलमान है, न ईसाई है। जब तुम सच्चे होते हो, तब तुम धार्मिक होते हो, जब तुम प्रेम-पूर्ण होते हो, तब तुम धार्मिक होते हो। जब तुम जीवन के प्रति सम्मान से भरे होते हो, तब तुम धार्मिक होते हो। इसका यह मतलब नहीं है कि तुम हिंदू हो; इसका यह मतलब नहीं है कि तुम बौद्ध हो।
मैं चाहता हूं कि यह पूरा जगत धार्मिक हो जाए- लेकिन ईसाइयत, यहूदी धर्म, इस्लाम और हिंदू धर्म का संश्लेषण नहीं। और वह किस प्रकार का संश्लेषण होगा? तुम सिर्फ कल्पना करोगे, तो पाओगे कि वह बिल्कुल खिचड़ी हो जाएगी।
मोहम्मद कहते हैं, चार पत्नियों की इजाजत है। अब तुम उनके साथ संश्लेषण कैसे करोगे, जो कहते हैं कि धार्मिक व्यक्त सिर्फ एक पत्नी रख सकता है? उससे ज्यादा हों तो वह पाप है। तो फिर संश्लेषण होगाः दो पत्नियां। इस बात से न मुसलमान सहमत होंगे, न गैर-मुसलमान सहमत होंगे। स्वयं मोहम्मद ने नौ औरतों से शादी की। स्वभावतः वे कोई साधारण आदमी नहीं है। साधारण आदमी चार औरतों से शादी कर रहे हैं, और असाधारण आदमी- ईश्वर के पैगम्बर को, नौ औरतों से शादी करनी ही पड़ेगी।
तुम संश्लेषण कैसे करोगे?
जैन सोचते हैं, जब तक कि तुम नग्न नहीं होते, और बिना किसी परिग्रह के नग्न नहीं रहते, तब तक तुम ज्ञान को उपलब्ध नहीं होओगे,। अब जैनों के अनुसार, गौतम बुद्ध भी ज्ञानी नहीं हैं क्योंकि वे कपड़े पहनते हैं। तुम इन लोगों का संश्लेषण किस तरह करोगे?
यदि तुम जैनों, बौद्धों और हिंदुओं से पूछो कि जीसस क्राइस्ट की सूली मनुष्यता की मुक्ति के लिए हुई थी; मनुष्यता को बचाने के लिए यह बड़े से बड़ा बलिदान था, जो परमात्मा ने दियाः अपना खुद का बेटा दिया। तो वे तीनों हंसेंगे। वे कहेंगे, यह निपट मूढ़ता है। परमात्मा, को कि सर्वशक्तिमान है, पूरे विश्व को बना सकता है, वह उसे किसी भी क्षण बदल सकता है- किसी बलिदान के बिना, किसी सूली के बिना... इस तरह के किसी भी नाटक के बिना।
दूसरी बात, वे जीसस को ज्ञानोपलब्ध नहीं मान सकते क्योंकि उनको सूली
पर चढ़ाया जा रहा है। हिंदुओं, जैनों और बौद्धों के अनुसार- जो भी धर्म भारत में पैदा हुए हैं- जो भी ज्ञान का उपलब्ध हुआ है, उसे सूली नहीं दी जा सकती। अस्तित्व इतना निर्दय नहीं है। निश्चय ही, भारत में ऐसा कभी नहीं हुआ है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि वे सही हैं। मैं केवल इतना ही कह रहा हूं कि तुम इन सब लोगों के बीच समझौता कैसे करोगे? वह एक बाजार होगा- हर मुद्दे पर, हर कोई हर किसी के साथ असहमत हो रहा है। मुसलमान कहते हैं, अल्लाह ने जानवरों को इसलिए पैदा किया कि मनुष्य उनको खा सके। इस पर बहस हो ही नहीं सकती; क्योंकि यह ईश्वर की किताब में लिखा है। और ईश्वर की किताब पर संदेह नहीं उठाया जा सकता।
अमेरिका का एक जेलर- एक बहुत सुशिक्षित आदमी- मुझे बाइबिल देने आया।
यह देखकर कि मैं दिन भर आंख बंद करके बैठा रहता हूं, कुछ करता नहीं, उसने सोचा होगा कि इस आदमी को परिवर्तित करने का यह अच्छा अवसर है। इसलिए उसने मुझे बाइबल दी। वह बोला "यह ईश्वर की किताब है।"

मैंने कहा, "अगर यह ईश्वर की किताब है तो निश्चित ही, मैं इसे सम्मानपूर्वक रखूंगा। लेकिन तुम्हें कैसे पता चला? ईश्वर ने तुम्हें कब बताया?" उसने कहा, "ईश्वर ने मुझे नहीं बताया, वह तो किताब में लिखा है। मैंने कहा, "तुम पढ़े लिखे हो, बुद्धिमान हो। मैं भी एक किताब लिख सकता हूं और उसमें लिख सकता हूंः ये ईश्वर के शब्द हैं। क्या तुम उस किताब पर भरोसा करोगे कि वे ईश्वर के शब्द हैं?" उसने कहाः "नहीं"।
"लेकिन फिर तुम जीसस के शब्दों में क्यों विश्वास करते हो? तुम्हारी दृष्टि में, मेरे शब्दों में और जीसस के शब्दों में भेद क्या है? और अगर यह ईश्वर की किताब है, तो कुरान के संबंध में क्या? वही दावा... । गीता के संबंध में क्या? वही दावा... ।"
तो रामकृष्ण मिशन एक राजनीतिक आंदोलन है, जो हर किसी से अच्छा व्यवहार करना चाहता है। इसलिए हर कोई अच्छा है, हर कोई भला है, और किन्हीं विवादास्पद मामलों को बीच में मत लाओ। सिर्फ उन्हीं बातों की तुलना करो, जिनकी बिना किसी विवाद के तुलना हो सकती है। इसलिए उनका विरोध नहीं होता। मेरी स्थिति बिल्कुल उल्टी है। मैं नहीं विश्वास करता कि कोई भी संगठित धर्म बचाने योग्य है। वे अति प्राचीन हैं, अत्याधिक सड़े-गले हैं और अत्यंत गंदे हैं। और जैसे-जैसे समय बीतता गया, उनसे और भी सड़ांध आने लगी है। जगत में एक सर्वथा नवीन धार्मिक चेतना की जरूरत है, जिस पर कोई लेबल नहीं होगा, हिंदू, मुसलमान, ईसाई।
और यही मेरा प्रयास है। मेरे लोग न हिंदू हैं, न मुसलमान हैं, न ईसाई हैं, न यहूदी हैं। वे सिर्फ व्यक्त हैं, मनुष्य हैं। स्वभावतः प्रत्येक धर्म मेरे खिलाफ हैं; क्योंकि मेरे उनके यहूदी छीन लिए, मैंने उनके हिंदू छीन लिए, मैंने उनके ईसाई छीन लिए। और प्रत्येक धर्म को मुझसे खतरा है। हैरान कर देनेवाली बात है, वे किसी मुद्दे पर राजी नहीं होते, वे सिर्फ एक बिंदु पर सहमत होते हैं, और वह है- मैं! वे इस बात से सहमत हैं कि मैं गलत हूं। अन्य किसी बात पर वे राजी नहीं होते। और कोई तर्क करने को तैयार नहीं हैं। मैं उन्हें खुले रूप से चुनौती दे रहा हूंः मेरे सामने आओ? और मैं तुम्हें अपने लोगों के बीच नहीं बुला रहा हूं, मैं तुम्हारी सभा में आऊंगा। और एक-एक मुद्दे पर मैं तुम्हारे साथ तर्क करने को तैयार हूं- कैसे तुम झूठे हो, और किस तरह तुम एक थोथी धार्मिकता पैदा कर रहे हो, जो किसी की सहायता नहीं करती। उल्टे वह सिर्फ युद्ध और रक्तपात करवाती है। पांच हजार वर्षों में कितने युद्ध लड़े गए?- जिहादः धार्मिक युद्ध। और वे सिर्फ एक-दूसरे की हत्या करते रहे हैं, और कुछ नहीं कर रहे हैं।
तो मेरी स्थिति रामकृष्ण मिशन से बिल्कुल भिन्न है।
और रामकृष्ण और विवेकानंद के संबंध में भी मेरा दृष्टिकोण भिन्न है। रामकृष्ण बुद्धत्व को उपलब्ध हुए हैं, लेकिन अशिक्षित थे, बोलने में कुशल नहीं थे अति सरल-ग्रामीण थे। वे धर्म का निर्माण नहीं कर सके। उन्हें धर्म का अनुभव तो था, लेकिन वे उसे अभिव्यक्त नहीं कर सकते थे।
यह एक मुश्किल है। ऐसे लोग हैं, जो उन बातों को अभिव्यक्त कर सकते हैं, जिनका उन्हें कोई अनुभव नहीं है; और ऐसे भी लोग भी हैं, जिन्हें अनुभव तो हुआ है लेकिन वे उसे अभिव्यक्त नहीं कर सकते। यह जरूरी नहीं है कि तुम सूर्यास्त को देखो, और उसका उसी भांति चित्र बना सको, जैसे पिकासो बनाता है। और यह संभव है, पिकासो बिना उसे देखे उसे बना सकता है; और तुमने देखा हो लेकिन तुम उसका चित्र न बना सको। ये दो अलग गुण हैं। और इसी से समस्या पैदा होती है।
रामकृष्ण जानते थे कि विवेकानंद का अपना कोई अनुभव नहीं है। लेकिन वे
उस आंदोलन के नेता बन गए। तो एक अंधा आदमी, जो बोलने में कुशल था, दूसरे अंधों का नेता बन गया। रामकृष्ण उसके बाहर छूट गए; उनका नाम भर उसमें रह गया। न तो उसका अनुभव उसमें है, न उस अनुभव की विधियां। मैं रामकृष्ण मिशन के अनेक लोगों से मिला हूं, वे रामकृष्ण को जरा भी नहीं समझते। वे उतना ही जानते हैं, जितना विवेकानंद ने कहा है। रामकृष्ण ने कभी एक भी किताब नहीं लिखी, कभी प्रवचन नहीं दिए। वे तो बस बैठे रहते, साधारण ढंग से बातचीत करते रहते।
उनके संबंध में आपके क्या विचार हैं?

वे महान व्यक्ति थे। रामकृष्ण ऐसे व्यक्ति थे, जिन पर गर्व किया जा सकता था, लेकिन विवेकानंद तीसरे दर्जे के व्यक्ति थे। लेकिन विवेकानंद महा-पुरोहित बन गए हैं। और उन्होंने ही पूर आंदोलन निर्मित किया। सब किताबें और सारा साहित्य विवेकानंद और उनके अनुयायियों ने निर्मित किया है। उसे रामकृष्ण मिशन कहने की बजाय विवेकानंद मिशन कहना ठीक होगा।
समय की इस लंबी धारा में जो बुद्धपुरुष हुए हैं, उनमें क्या आपको सिर्फ रामकृष्ण परमहंस देव पढ़ने योग्य लगते हैं?
नहीं, बहुत-से हैं। गौतम बुद्ध हैं, महावीर हैं, चीन में लाओत्सु, च्वांगत्सु हैं, जापान में बासो है, भारत में नार्गाजुन हैं, भारत में वसुबंधु हैं।
बुद्धत्व सिर्फ पूरब में घटा है क्योंकि पूरी पूर्वीय चेतना परम-सत्य खोज रही है। जैसे पूरी पश्चिमी चेतना वुस्तुनिष्ठ सत्य को खोज रही है।
तो विज्ञान ने पश्चिम में शिखर छू लिया है, और धर्म ने पूरब में शिखर
छू लिया है।
तो ऐसे अनेक लोग हुए हैं- सैकड़ों। तिब्बत में कई लोग हुए हैंः मिलारेपा, मारपा, नरोपा। भारत में- हजारों।
उसी समय, आप कह रहे थे कि गौतम बुद्ध ज्ञानोपलब्ध व्यक्ति थे। मेरा मतलब यह है कि कभी-कभी आप बौद्ध धर्म की निंदा करते हैं, जैसे महावीर और इस तरह की बातें... । आप कैसे... ?
हां, मैं समझा। गौतम बुद्ध ज्ञानोपलब्ध हैं। यह एक व्यक्तिगत अनुभव है, और उसे किसी भांति संगठित नहीं किया जा सकता। तुम बौद्ध धर्म निर्मित नहीं कर सकते। बौद्ध धर्म यानी बुद्ध के अनुयायी। बुद्ध का अनुसरण कोई नहीं कर सकता। बुद्धपुरुष आकाश में उड़ने वाला पक्षी की तरह होता है; वह अपने पदचिन्ह नहीं छोड़ता। इसलिए तुम उसका अनुसरण नहीं कर सकते। बुद्धपुरुषें के साथ एक ही बात संभव हैः तुम बुद्धपुरुष के साथ बैठ सकते हो, उन्मुख, उपलब्ध मौन। एक विशेष प्रकार की ऊर्जा उस व्यक्ति से निःसृत होती है; वह तुम्हें प्रदीप्त करती है, तुम्हें प्र वलित कर सकती है। यदि वह बोलने में कुशल है, तो शब्दों के द्वारा उसमें थोड़ा सहयोग करेगा। अगर वह कवि है, तो वह अपनी कविता द्वारा... या फिर चित्रों के द्वारा सहायता कर सकता है। लेकिन जैसे ही बुद्धपुरुष मर जाता है, तो जो लोग धर्म निर्मित करते हैं, वे बिल्कुल ही भिन्न कोटि के लोग होते हैं। वे लोग विवेकानंद जैसे होते हैं- विद्वान पंडित, ज्ञानी लोग।
बुद्ध के जीवन में वस्तुतः ऐसा घटा। जब तक वे जीवित थे तब तक कुछ भी नहीं लिखा गया। वे बयालीस साल तक, सुबह शाम प्रवचन देते रहे। उनके सामने ही कई लोग बुद्धत्व को उपलब्ध हुए। जब उनका निर्वाण हुआ तब उनके सभी शिष्यों की एक परिषद बुलायी गयी। इसलिए कि उन्होंने जो भी कहा है उसे हम शब्दांकित कर लें, ताकि आनेवाली पीढ़ियां उसका लाभ उठा सकें। जो लोग बुद्ध हो गए थे, वे खामोश रहे। उन्होंने कहा, उनकी उपस्थिति में हमने जो अनुभव किया है उसे अभिव्यकत नहीं किया जा सकता; उसे लिखा नहीं जा सकता; हम इस मामले में सहभागी नहीं हो सकते। हमें इसके बाहर छोड़ दो।
केवल एक व्यक्ति- आनंद, जो बयालीस सालों तक निरंतर बुद्ध के साथ रहा, उनकी देखभाल करता रहा, उसने उनके प्रवचन सुने, उपदेश सुने, उनकी भेंटवार्ता सुनी; उससे पूछा गया, लेकिन वह रोने लगा। वह बोला, "मुझे पता है कि उन्होंने क्या कहा लेकिन मुझे ज्ञान नहीं है, क्योंकि मुझे कोई अनुभव नहीं है। उन्होंने जो कहा है उसे मैं तोते की तरह दोहरा सकता हूं। लेकिन तुम मेरे शब्दों का भरोसा मत करो क्योंकि मैं अज्ञानी हूं।
इन बयालीस सालों में, निश्चित ही मैं बहुत कुछ भूल गया हूं; बहुत कुछ मैं अपनी ओर से भी मिलाऊंगा। और मैं नहीं जानता क्या सही है और क्या गलत, क्योंकि मुझे अपना खुद का कोई अनुभव नहीं है।"
लेकिन अंततः आनंद पर भरोसा करना ही पड़ा; क्योंकि वही अकेला व्यक्ति था, जो लिखने को तैयार था। और अब जो बौद्ध शास्त्र हैं, उनका उदगम आनंद है, जो रो-रोकर कह रहा था कि मेरा अनुभव कुछ भी नहीं है। मैं तो बस एक दोहराने वाला यंत्र हूं।

तो मैं संगठित धर्मों के खिलाफ हूं; इसलिए, क्योंकि वह लोग को अपने बल
पर सत्य की खोज करने से रोकता है। वह उन्हें यह ख्याल देता है कि तुम विश्वास करो, और तुम पहुंच जाओगे; कि यह रहा दर्शन, उसके सहारे जीयो- और तुम सही मार्ग पर हो। लेकिन क्या गारंटी है?
मैं तुम्हें एक विधि सिखाता हूं, दर्शन नहीं। मैं तुम्हें एक खास वैज्ञानिक दृष्टिकोण देता हूं, ताकि तुम अपने केंद्र पर पहुंच सको। अगर तुम पहुंच जाओ, अच्छा है। अगर नहीं पहुंचते तो कोई और विधि आजमाओ। लेकिन मैं तुम्हें विश्वास नहीं देता। तुम मुझे धोखा नहीं दे सकते क्योंकि मैं तुमसे वफादारी या विश्वास का सवाल नहीं है। यह एक गहरी मित्रता का और प्रेम का सवाल है। यदि मैं तुमसे प्रेम करता हूं, तो मैं तुम्हें वह विधि बताऊंगा, जिससे मुझे रोशनी मिली है- शायद वह तुम्हारे अनुकूल हो जाए।
मैं कहूंगा कि महावीर का नाम महान बुद्धपुरुषें में गिना जा सकता है। क्योंकि वे अपना हर वाक्य "स्यात" (शायद) से शुरू करते थे। यह बात विरल है। उनके विद्यार्थियों और शिष्यों ने भी उनसे पूछा कि आप अपना वाक्य हमेशा "स्यात" से क्यों शुरू करते हैं? उन्होंने कहा, जो मुझे घटा है, जरूरी नहीं कि
तुम्हें भी घटे। मैं तुम्हें धोखा देना या तुम्हारे साथ छल करन नहीं चाहता। यदि वह तुम्हें नहीं घटता तो तुम स्मरण रखोगे कि मैंने कहा था, "स्यात"। यदि वह घटा, तो अच्छा ही है। और अगर नहीं घटा, तो पहले ही तुम्हें धोखे में नहीं रखा गया है।
और सभी धर्म विश्वास में विश्वास करते हैं; और मेरा पूरा दृष्टिकोण हैः विश्वास न करना, श्रद्धा नहीं रखनी, बल्कि खोजना। सच्चे खोजी की आधारशिला विश्वास नहीं होनी चाहिए; संदेह उसकी आधारशिला होनी चाहिए। जैसे संदेह सब वैज्ञानिक अनुसंधान की नींव होती है, वैसे ही संदेह संपूर्ण आंतरिक यात्रा की भी नींव होनी चाहिए।
मेरी दृष्टि में, विज्ञान और धर्म दो पंख हैं; लेकिन दोनों का आधार है, संदेह। एक बाहर वस्तुनिष्ठ जगत की ओर ले जाता है, दूसरा भीतर आत्मनिष्ठ जगत में प्रवेश करवाता है। देर-अबेर, इससे बेहतर और अधिक परिष्कृत जगत में, धर्म नहीं होंगे, केवल धर्म होगा- अंतर्मुखी संदेह। और विज्ञान होगा- बहिर्मुखी संदेह।
क्या इसलिए आप वादों (इ म) के खिलाफ हैं?
मैं सभी वादों (इ म) के नितांत खिलाफ हूं।
एक छोटे से वाक्य में बताएंः आपने रामकृष्ण मिशन को राजनीतिक क्यों कहा?
मैं उन्हें राजनीतिक कहता हूं, इसका सीधा कारण यह है कि वह धार्मिक नहीं है- एक बात। और यह राजनीति है...
मेरे पास भी, हर रोज लोगों की सलाहें आती हैं- शुभाकांक्षी लोग हैं- कि अगर मैं ईसाइयों के सामने बोल रहा हूं, तो जीसस के विरोध में कुछ न बोलूं। लोगों को क्यों नाराज करना?
और इसको मैं राजनीतिक षड़यंत्र कहता हूं। मुझे जो बोलने जैसा लगता है वही बोलना चाहिए। मेरी नजर इस पर नहीं होनी चाहिए, कि कौन सुन रहा है, और उसकी क्या राय होगी।
तो उसका उद्देश्य क्या है? इन मिशनों का लक्ष्य क्या है?
ये मिशन उसी तर शोषण कर रहे हैं, जिस तरह बाकी धर्म शोषण कर रहे हैं। स्त्रियों के प्रति आपका दृष्टिकोण क्या है? स्त्रियों के प्रति समाज का दृष्टिकोण क्या होना चाहिए? ईश्वर क्या है और ईश्वर को पाने का वास्तविक अर्थ क्या है?
पहले तो हम ईश्वर का मामला सुलझा लें। ईश्वर है ही नहीं, इसलिए उसे पाने का सवाल ही पैदा नहीं होता। यदि कोई कहे कि उसने ईश्वर पाया है तो यह जान लो कि जरूर उसके दिमाग में कुछ गड़बड़ है।
स्त्री ईश्वर से कहीं अधिक महत्वपूर्ण मामला है। स्त्री हर तरह से पुरुष से समानता रखती है। कई बातों में तो वह उससे थोड़ी श्रेष्ठ भी है। और यह श्रेष्ठता ही बेचारी स्त्री के लिए समस्या बन गई है।

उदाहरण के लिए, पुरुष हीनता अनुभव करता है कि वह बच्चों को जन्म नहीं
दे सकता। स्त्री वह कर सकती है। उसमें पुरुष का योगदान बिल्कुल नगण्य है। एक सीरिन्ज वह काम कर सकती है। प्रजनन के लिए पुरुष किसी भी तरह से आवश्यक नहीं है। और यह भाव कि स्त्री जीवन का निर्माण कर सकती है, इसके कारण पुरुष के भीतर गहन हीनता पैदा होती होगी। और जब भी किसी में हीनता का भाव होता है, तो उसकी पूरी चेष्टा यही होगी कि दूसरे को नीचा दिखा दे, ताकि स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध कर सके। और सदियों-सदियों से यही किया गया है।
स्त्रियों को हर तरह से कनिष्ठ रहने को मजबूर क्यों किया गया है?- कोई शिक्षा नहीं, कोई धार्मिक शिक्षा नहीं, कोई समाज में घूमने फिरने की आजादी नहीं- हर तरह से कुण्ठित, अवरुद्ध कैद। इसका कारण है, पुरुष का भय। लेकिन अगर तुम्हारा आचरण भय से निकलता है, और तुम स्त्री की स्वतंत्रता नष्ट करते हो, तो वह प्रतिक्रिया करने ही वाली है। और स्वभातः वह कर्कशा हो गई है। इसने सब स्त्रियों को कर्कशा बना दिया है। वे सब तुम्हारे पीछे पड़ी रहती हैं। वह सताने का उनका ढंग है। तुमने उनकी स्वतंत्रता छीन ली, अब बदले में वे तुम्हें जितना संभव है उतना उद्विग्न और विषद-ग्रस्त बनती हैं। तो पूरी मनुष्यता व्यर्थ संताप में जी रही है।
पहली बातः स्त्री को पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। उन्हें वे सब अवसर मिलने चाहिए, जो पुरुषों को मिलते हैं। और इसे स्वीकार करना चाहिए कि उसके भीतर कुछ श्रेष्ठताएं हैं। उदाहरण के लिए, अगर एक सौ दस लड़के पैदा होते हैं, तो सौ लड़कियां पैदा होती हैं। क्योंकि इसके पहले कि उनकी उम्र विवाह योग्य हो जाए, दस लड़के मर जाते हैं। लेकिन वे सौ लड़कियां बनी रहती हैं। लड़कों में बीमारी के प्रति प्रतिरोध कम होता है। और संतुलन बनाये रखने के लिए प्रकृति ज्यादा लड़के पैदा करती है और कम लड़कियां पैदा करती है। क्योंकि विवाह के समय तब उनकी संख्या समान हो जाती है। अब इसे स्वीकार करने में कोई नुकसान नहीं है कि यह एक तथ्य है। इसमें अपने को हीन मानने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता।
स्त्री पुरुष से ज्यादा जीती है- पांच साल ज्यादा। अगर पुरुष पचहत्तर साल की उम्र में मरता है, तो स्त्री अस्सी साल में मरेगी। अब यह एक साधारण तथ्य है। तुम उसके लिए कुछ नहीं कर सकते। और उसके कारण अपने को हीन मानने की भी कोई जरूरत नहीं है।
पुरुष की अपेक्षा स्त्री की पागल होने की संभावना कम है। पुरुषों की पागल होने की संख्या स्त्रियों से दोगुनी है। आत्महत्या करनेवालों में भी पुरुषों की संख्या स्त्रियों से दोगुनी है। तथ्य जैसा हैं वैसे ही हमें स्वीकार करने चाहिए, और उनके कारण खोजने की कोशिश करनी चाहिए। और उनका दमन करने की बजाय उनके संबंध में क्या किया जाए यह खोजने की कोशिश करनी चाहिए। उदाहरण के लिए, ऐसे कुछ हार्मोन हो सकते हैं, जो स्त्रियों को दीर्घयु बनाते हैं, वे हार्मोन पुरुषों के भीतर डाले जा सकते हैं। ऐसे कुछ हार्मोन हो सकते हैं, जो स्त्रियों को बीमारियों के प्रति अधिक प्रतिरोधक शक्ति देते हैं; उन्हें पुरुषों के भीतर डाला जा सकता है। ऐसे कुछ हार्मोन हो सकते हैं, जो स्त्रियों को कम पागल बनते हैं... वे बहुत बोलती रहती हैं कि पागल हो जाऊंगी- लेकिन होती नहीं हैं। वे आत्महत्या करने की घोषणा अधिक करती हैं, वस्तुतः करती नहीं।
तो वे हार्मोन पुरुष को दिये जा सकते हैं। सच पूछो, तो अपने को निकृष्ट समझने की कोई जरूरत ही नहीं है। पुरुष और स्त्री भिन्न हैं बस। और अगर भेद ऐसे हैं, जिनके संबंध में कुछ किया जा सकता है, तो एक दूसरे को सहायता करना अच्छा होगा।
और कुछ ऐसे गुण हैं, जो खास पुरुषों के हैं। उसका शरीर हुष्ट-पुष्ट होता है। उसके पास स्त्री से अधिक पाशविक ताकत होती है। वह स्त्री से अधिक विस्तार से सोच सकता है। स्त्री की उत्सुकता पास-पड़ोस में अधिक होती है- किसकी पत्नी किसके ऊपर डोरे डाल रही है... सुदूर आकाश में चमकते हुए सितारों की बजाए इन बातों में उसकी उत्सुकता अधिक होती है। किसे फिक्र है कि सितारों में क्या घट रहा है! जो घटता है, घटे। यहां किसी की पत्नी भाग रही है! उसके सोच-विचार का दायरा बड़ा संकीर्ण होता है। पुरुष का दायरा

विशाल होता है। वे दोनों एक दूसरे के परिपूरक हो सकते हैं; क्योंकि दोनों की जरूरत है।
ऐसा हुआ, एक विख्यात वैज्ञानिक, आर्किमिडीज, जो कि एक ज्योतिर्विद भी था, एक रात- एक निरभ्र रात, सितारों का निरीक्षण करते हुए रास्ते पर चला जा रहा था। चलते-चलते वह एक कुंए में गिर पड़ा। सुनसान रास्ता था, सिर्फ एक छोटी-सी झोंपड़ी... एक बुढ़िया ने उसे बाहर निकाला। आर्किमिडीज उस बुढ़िया से बोला, "तुझे पता नहीं है मैं कौन हूं। मैं एक महान ज्योतिर्विद हूं, एक बड़ा वैज्ञानिक हूं। पूरे यूरोप से कितने ही सम्राट मुझसे सीखने-समझने आते हैं। लेकिन जहां तक तेरा संबंध है, तूने मेरी जान बचायी है; तू कल मेरे घर आ सकती है। मैं तेरी कुंडली देखूंगा और तेरे भविष्य के संबंध में बताऊंगा। वह स्त्री हंसी। उसने कहा, "रहने दो। तुम एक फीट आगे कुंआ है यह नहीं देख सकते, तुम भविष्य में क्या देखोगे।
लेकिन दोनों परिपूरक हैं। ऐसे व्यक्ति की जरूरत है, जो सितारों का निरीक्षण करे- कुएं में गिरने का खतरा हो, तब भी! लेकिन कोई ऐसा भी हो, जो कुएं को ख्याल रखे; अन्यथा जीवन अस्त-व्यस्त हो जाएगा।
तो मेरा अपना मानना यह है कि स्त्री और पुरुष एक दूसरे के अनुपूरक हैं; और इनका कनिष्ठता या श्रेष्ठता- इस तरह का वर्गीकरण नहीं करना चाहिए। वे एक-दूसरे के अनुपूरक हों। और निश्चित ही पुरुष अकेला है; जैसे स्त्री अकेली है। दोनों मिलकर ही वे एक सावयव संपूर्णता बनते हैं।
इसीलिए मेरे मन में प्रेम के प्रति इतना सम्मान है। क्योंकि प्रेम वह कीमिया है, जो स्त्री और पुरुष को पूर्ण बनाती है। वे अपने वैयक्किता खोते हैं, अपने अहंकार खो देते हैं। और पहली बार पुरुष विलीन हो जाता है, स्त्री विलीन हो जाती है- सिर्फ एक ऊर्जा। और उसी ऊर्जा का सम्मान किया जाना चाहिए।
अब तक आपने कई विषयों पर चर्चा की, लेकिन सेक्स के संबंध में एक शब्द
भी नहीं कहा। लेकिन सेक्स के संबंध में आपके उदार विचारों के लिए आप विख्यात थे; और कई वर्गों ने आपकी बहुत आलोचना भी की है।
उसका सीधा-सा कारण यह है कि सदियों-सदियों से लोग दमित सेक्स जीवन जीते रहे हैं। उन्हें सभी धार्मिक पुरुषों ने, मसीहाओं ने और पैगंबरों ने कहा था कि सेक्स पाप है। मेरी समझ यह है कि सेक्स तुम्हारी एकमात्र ऊर्जा है; जव जीवन ऊर्जा है। तुम उसके साथ क्या करते हो, यह तुम पर निर्भर करता है। वह पाप भी बन सकता है, और वह तुम्हारी चेतना का परमोच्च शिखर भी बन सकता है। वह सब तुम पर निर्भर करता है- तुम ऊर्जा का उपयोग कैसे करते हो। एक समय था, जब हमें विद्युत का उपयोग करना नहीं आता था। विद्युत सदा उपलब्ध थी, और लोगों को मार डालती थी, लेकिन अब वह तुम्हारी नौकर बन गई। वह वे सब काम कर रही है जो तुम उससे करवाना चाहते हो।
सेक्स जीवित विद्युत है। सवाल सिर्फ इतना है कि उसका उपयोग कैसे किया जाए। उसका पहला मूल तत्व हैः उसकी निंदा मत करो। जैसे ही तुम किसी चीज की निंदा करते हो, तुम उसका उपयोग नहीं कर सकते। इसलिए मैं उसके दमन के खिलाफ था। मैं सेक्स की शिक्षा नहीं दे रहा था। मैं सिर्फ यह सिखा रहा था कि जीवन के एक सामान्य और प्राकृतिक तथ्य की भांति सेक्स स्वीकृत होना चाहिए। जैसे नींद है, भूख है, या बाकी सब बातें हैं... ।
और दूसरी बात, मैं जिस बात की शिक्षा दे रहा था, उसकी आलोचकों ने बिल्कुल ही उपेक्षा कर दी। मेरी शिक्षा यह थी कि सेक्स को ध्यान से के साथ कैसे जोड़ा जाए। और जैसे ही सेक्स ध्यान के साथ जुड़ता है, उसकी गुणवत्ता बदल जाती है। सेक्स के साथ अगर ध्यान का संयोग न हो, तो वह सिर्फ बच्चे पैदा कर सकता है। ध्यानपूर्ण सेक्स तुम्हें एक नया जन्म दे सकता है, एक नया मनुष्य बना सकता है।
यानी ध्यान करते वक्त संभोग करना?
हां, या इससे उलटा कहो- संभोग करते समय ध्यान करो। क्योंकि छोटी-सी बदलाहट से बहुत बड़ा फर्क पड़ता है।
एक आश्रम में दो संन्यासी बातचीत कर रहे थे। रोज सांझ को एक या दो घंटे के लिए उन्हें ध्यान करने के लिए या टहलने के लिए समय दिया जाता था। वे दोनों सोच रहे थे कि धूम्रपान करना ठीक होगा या नहीं। क्योंकि उन पर

कोई रोक नहीं लगायी गई थी, फिर भी वे डर रहे थे। इसलिए उन्होंने सोचा कि मठाधीश से पूछ ही लें।
दूसरे दिन, उनमें से एक बहुत नाराज था। और जब उसने दूसरे को देखा कि वे सिगरेट पीते हुए चला आ रहा है, तो उसे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ। उसने पूछा, "क्या हुआ?"
मैंने मठाधीश से पूछा कि क्या मैं ध्यान करते समय सिगरेट पी सकता हूं? उन्होंने कहा, कभी नहीं। और वे बहुत नाराज थे। और इधर तुम सिगरेट पी रहे हो! क्या तुमने नहीं पूछा?
वह बोला, मैंने भी पूछा, लेकिन मैंने उनसे पूछा, मैं सिगरेट पीते समय ध्यान कर सकता हूं? और उन्होंने कहा, यह तो बढ़िया ख्याल है। समय क्यों गंवाते हो? जब तुम सिगरेट पी रहे हो तब तुम ध्यान भी कर सकते हो, तो यह तो बहुत बढ़िया ख्याल है। सिगरेट पीते समय जरूर ध्यान करो।
तो मैं नहीं कहूंगा कि जब तुम ध्यान कर रहे हो, तब संभोग करो। नहीं मैं कहूंगा, जब तुम प्रेम कर रहे हो, तब ध्यान करो। और वह सर्वाधिक शांत, मौन और समस्वरित अवस्था है, जहां ध्यान सरलतम होता है। जब तुम आरगास्म (कामोल्लास) का अनुभव के करीब पहुंचते हो तब तुम्हारे विचार रुक जाते हैं। तुम ऊर्जा ज्यादा होते हो, अधिक प्रवाहमान, सब और स्पंदित- और वही क्षण है सजग होने का। जो भी हो रहा हो- वह स्पंदन, कामोल्लास, का बिंदु करीब आ रहा है... और तुम जानते हो कि एक बिंदु होता है, जिसके बाद तुम लौट नहीं सकते। सिर्फ देखो। और यह सर्वाधिक रहस्यमय और आंतरिक सजगता होगी। और यदि तुम इसको देख सको, तो तुम जीवन में किसी भी चीज को देख सकोगे। क्योंकि वह तुम्हारे सबसे निकट है, और सबसे डुबाने वाला अनुभव है।
मैंने सिर्फ एक छोटी-सी किताब लिखी है। उस किताब का नाम हैः संभोग से समाधि की ओर। लेकिन समाधि पर किसी का ध्यान नहीं गया- सिर्फ सेक्स! और जो लोग उसे पढ़ते रहे हैं, वे हैंः भिक्षु, सभी धर्मों की भिक्षुणियां। और मैंने सब तरह के विषयों पर चार सौ किताबें लिखी हैंःऐसे विषय, जो सत्य की खोज करनेवाले साधकों के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। लेकिन नहीं, मुश्किल यह है कि वे पीड़ा में हैं। और वे इसलिए पीड़ा में हैं क्योंकि्--।
आप कह रहे हैं कि सिर्फ सेक्स अधिकाधिक बच्चे पैदा करता रहेगा। लेकिन फिर ध्यानपूर्ण सेक्स क्या पैदा करेगा?
तुम स्वयं को पैदा करोगे- बिल्कुल नये।
स्वयं को?
स्वयं को। तुम पाओगे कि तुम जैसे हो वहीं पर तुम्हारा अंत नहीं है। तुम्हारी चेतना के, तुम्हारी बुद्धि के उच्चतर तल हैं। और जैसे-जैसे तुम अपनी चेतना के, अपनी बुद्धि के उच्चतर तल निर्मित करने लगोगे, वैसे-वैसे तुम आश्चर्यचकित होओगे कि तुम्हारा सेक्स में रस खोने लगेगा। क्योंकि अब सेक्स जीवन से भी बहुत बड़ी चीज पैदा कर रहा है- वह चेतना पैदा कर रहा है। जीवन निम्न तत्व है, चेतना श्रेष्ठतर तत्व है।
और एक बार तुम चेतना निर्मित करने में सक्षम हुए, तो ऐसा कोई अवरोध नहीं है कि तुम संभोग नहीं कर सकोगे, लेकिन वह बड़ा फीका लगेगा। उससे तुम्हें कोई आनंद नहीं मिलेगा, वह ऊर्जा का अपव्यय मालूम पड़ेगा। तुम चाहोगे कि उससे तो बेहतर होगा कि तुम्हारी ऊर्जा, तुम्हारे भीतर ऊर्जा के ऊंचे से ऊंचे पिरामिड बनाये- तब तक, जब तक कि तुम अंतिम बिंदु तक न पहुंचो, जिसे मैं बुद्धत्व कहता हूं।
जो तो भी चेतना-रहित है, वह पाप है। क्या यही आप कहना चाहते हैं?
वस्तुतः पाप शब्द का मौलिक अर्थ है, विस्मरण। और इसे स्मरण रखना अच्छा होगा। चेतना यानी स्मरण, जागरण; और पाप यानी मूर्च्छा विस्मरण। लेकिन मैं पाप शब्द का उपयोग नहीं करूंगा क्योंकि सभी धर्मों ने उसका उपयोग कर उसे प्रदूष्ति किया है। मैं उसे सिर्फ अचेतन अवस्था कहूंगा, विस्मरण कहूंगा, जो कि इस शब्द के मौलिक अर्थ हैं।
पुण्य क्या है?
चेतना। हर चीज के प्रति अधिक होश। एक बार तुम पूरी तरह से जाग जाओ, तो तुम्हारा पूरा जीवन पुण्य हो जाता है। तुम जो भी करते हो उसमें पवित्रता की सुगंध होती है, दिव्यता की महक होती है।

आपकी यह धारणा- मेरा मतलब है तुलना में- संसार के गरीब वर्ग की बजाए अमीर वर्ग को क्यों प्रीतिकर लगी? और आपके ऊपर "अमीरों के गुरु"- ऐसा लेबल क्यों लगा है?
कारण सरल है। भूखे आदमी को मोजार्ट का संगीत प्रीतिकर नहीं लगेगा। अब
यह न तो मोजार्ट की गलती है, न भूखे आदमी की गलती है। बात इतनी ही है कि भूखा आदमी मोजार्ट के संगीत की ऊंचाई से बहुत दूर है। भूखा आदमी दोस्तोवस्की, तुर्गनेव या चेखोव को नहीं समझ सकेगा। वह वानगाग या पिकासो के चित्र नहीं समझ सकेगा, क्योंकि उसकी मूलभूत जरूरतें ही पूरी नहीं हुई हैं। गरीब आदमी सिर्फ इस अर्थ में गरीब नहीं है कि उसके पास कपड़े नहीं हैं, भोजन नहीं है। वह इस अर्थ में गरीब है कि में जीवन में जो भी महान है, वह सब, जो सदियों से परिष्कार से उपलब्ध हुआ है, उससे वह वंचित रह जाएगा। जो आदमी तीन दिन तक भूखा रहा हो, उसे पूर्णिमा की रात में चांद नहीं दिखाई पड़ेगा, आकाश में रोटी तैरती हुई दिखाई देगी।
तो इसके लिए मैं क्या कर सकता हूं? मेरी परिपूर्ण समझ यह है कि धर्म जीवन का आखिरी विलास है क्योंकि वह परमोच्च चेतना है।
भूखा पेट निम्नतम चेतना के तल पर जीता है।
तो इस धारणा के अनुसार, आप पूरी तरह से संपूर्ण जगत के पक्ष में नहीं होंगे?
मैं हो सकता हूं, क्योंकि मैं उन भूखे लोगों को बदल सकता हूं। हमारे धर्म और हमारे राजनीतिक उन्हें भूखे बने रहने पर मजबूर कर रहे हैं। क्योंकि एक तरह से उन लोगों के गरीब बने रहने में इनके न्यस्त स्वार्थ हैं।
उदाहरण के लिए, क्या तुम एक भी ऐसा हिंदु खोज सकते हो, जो अमीर हो, पढ़ा- लिखा हो, और जिसने ईसाई या कैथोलिक धर्म अपनाया हो? क्यों नहीं? सिर्फ अनाथ, भिखारी, गरीब आदिवासी- ये ही लोग क्यों धर्म-परिवर्तन करते हैं। अब यह पोप के हित में है, मदर टेरेसा के हित में है, पूरी ईसाइयत के हित में है कि गरीब, गरीब बना रहे। इतना ही नहीं बल्कि गरीब और भी गरीब होता चला जाए। गरीब जितने ज्यादा होंगे उतनी कैथोलिक की संख्या बढ़ेगी। और यही उनका पूरा सपना है। पूरे संसार को ईसाई बनाना।
लोगों को गरीब बनाये रखने में राजनीतिकों का भी रस है; क्योंकि गरीब लोगों को खरीदना आसान होता है। पढ़े-लिखे, धनी लोगों, को खरीदा नहीं जा सकता है। और जहां तक मेरा संबंध है, दुनिया में सब गरीबी हटा देना इतना सरल है कि यह बढ़े आश्चर्य की बात है... मामला एकदम साफ है कि यह बात लोगों के ख्याल में क्यों नहीं आती।
एक बातः तीस साल तक जनसंख्या में कोई वृद्धि नहीं। और इसके सरल उपाय उपलब्ध हैं। लोगों को सिर्फ इस बात के प्रति जागना है कि अगर तुम मदर टेरेसा और पोप और शंकराचार्य इसकी सुनते रहे- जो लोग संतति निरोध के खिलाफ हैं, तो इस सदी के अंत तक भारत की जनसंख्या एक अरब होगी। आधा देश भूखा रहेगा, और हमारे पास कोई उपाय नहीं रहेगा कि हम क्या करें। और फिर भी तुम मदर टेरे सा का समर्थन करते रहते हो, उसे इनाम देते हो, पुरस्कार देते हो, नोबल पुरस्कार देते हो, और इस तथ्य को नहीं देखते कि ये ही लोग गरीबी के लिए जिम्मेदार हैं।
ये सब धार्मिक लोग, जो लोगों को संतति-निरोध के खिलाफ शिक्षा देते हैं, उन्हें तुरंत कैद किया जाना चाहिए। लोगों को संतति-निरोध के खिलाफ शिक्षा देना जुर्म होना चाहिए- सबसे बड़ा जुर्म। अन्यथा पूरा देश मानने वाला है। जो आदमी किसी एक व्यक्ति का खून करता है, उसे तुम मृत्यु दंड देते हो। और तुम्हारे पोप, और तुम्हारी मदर टेरेसा, और तुम्हारे शंकराचार्य सिर्फ इसी देश में, इस सदी का अंत होते-होते आधा अरब लोगों को जान से मार डालनेवाला है।
अब पोप आनेवाले हैं, और तुम्हारा शासन उनके शानदार स्वागत की तैयारियां कर रहा है। अगर तुम्हारे शासन में जरा भी हिम्मत है, तो उसे पोप को साफ कह देना चाहिए कि यहां वे संतति निरोध के खिलाफ शिक्षा नहीं दे सकते, गर्भपात के खिलाफ नहीं बोल सकते। वे आध्यात्मिक मसलों पर बोल सकते हैं, वह उनका क्षेत्र है। लेकिन वे ऐसी कोई शिक्षा नहीं दे सकते, जिससे कि

यह देश और गरीब हो जाए। अगर वे वैसा करते हैं, तो तत्क्षण उन्हें देश के बाहर निकाल दिया जाएगा।
पूरे समाज का ढांचा बदलने में तीस साल लग जाएंगे।
नहीं, तीस साल नहीं। वह तुरंत बदलना शुरु हो जाएगा। क्योंकि मैं कुछ
और बातें कहना चाहता हूं। यह कार्यक्रम तो लंबी कालावधि के लिए है। हम जो भी करते हैं, उस पर बढ़ती हुई आबादी पानी फेर देती है। इसलिए पहले ही हम पूरा संतति-निरोध लागू करें।
और कुछ दिनों के लिए, जो हर देश इतना सारा पैसा, श्रम, बुद्धिमत्ता, विज्ञान, टेक्नालाजी, सब कुछ युद्ध के काम में ला रहा है, वह पूरी तरह रोक देना चाहिए। सोवियत यूनियन भी बहुत समृद्ध नहीं है। लोग गरीब हैं। धनी होने का सपना साठ साल से सपना ही रह गया है; वह साकार नहीं हुआ है। अमेरिका में भी तीन करोड़ लोग रास्तों पर हैं। और फिर भी वे उनकी पूरी ऊर्जा, उनकी टेक्नालाजी, उनका विज्ञान, और उनके सर्वश्रेष्ठ मस्तिष्क अधिकाधिक आणविक शस्त्र बनाने में लगाते हैं। किसलिए? अभी उनके पास इतने शस्त्र हैं कि मनुष्यता को सात सौ बार मार सकते हैं। अब मुझे इसमें कोई तुम नहीं दिखाई देती- और ज्यादा पैदा करने में क्या सार है?
तो अगर युद्ध के सब प्रयास छोड़ दिए जाएं... और उन्हें छोड़ना ही पड़ेगा।
यह थोड़ी सी बुद्धिमानी का सवाल है। तो वही ऊर्जा पूरी की पूरी, गरीबों की गरीबी हटाने में लगायी जा सकती है। हम युद्ध के प्रयासों में इतना पैसा और इतनी ताकत व्यर्थ गंवा रहे हैं कि अगर वह पूरा पैसा वहां से मुक्त किया जाए, तो गरीबी ऐसी विलीन हो जाएगी जैसे सुबह सूरज उगते ही ओस-कण विदा हो जाते हैं।
और युद्ध में अब कोई सार नहीं है। युद्ध का सारा अर्थ ही खो गया है। किसी दिन वह अर्थपूर्ण था; जब कोई जीतता और कोई हारता। अब न किसी की हार होगी, न किसी की जीत होगी। पूरी पृथ्वी नष्ट हो जाएगी। इसलिए अब युद्ध अर्थपूर्ण नहीं है; उसका पुराना अर्थ खो गया है। अब संसार के बुद्धिजीवियों को मिलकर इन मूढ़ राजनीतिकों पर दबाव डालना चाहिए कि निर्णय ले लो और सभी युद्ध के प्रयास बंद कर दो; और तुमने जो भी ऊर्जा इकट्ठी कर ली है, उसके संबंध में वैज्ञानिकों को सोचने दो कि रचनात्मक योजनाओं में कैसे उसका उपयोग किया जाए। गरीबी तुरंत हटायी जा सकती है।
मैं गरीबों के खिलाफ नहीं हूं, गरीबी के खिलाफ हूं। और एक बार गरीबी नष्ट हो गई, तो फिर तुम देखोगे कि मेरे पास गरीब भी उसी तरह गाएगा जैसे अमीर आता है। उनके भीतर एक-जैसी क्षमता है, आर उनका एक जैसा भविष्य है।
और मुझे धनवानों का गुरु कहना निपट मूढ़ता है। लेकिन यह पीली पत्रकारिता कुछ भी कहती रहती है।
पांच सालों से मैंने कुछ भी पढ़ा नहीं है। और खास कर मेरे संबंध में... क्योंकि मैं कुछ पढ़ता नहीं हूं- न कोई किताब, न अखबार, न पत्रिका। मैंने दूरदर्शन भी देखा नहीं है। इन मूर्ख्रतापूर्ण सूचनाओं से मैं बिल्कुल ऊब गया हूं।
मैं किसी का गुरु नहीं हूं- न गरीब का, न अमीर का। मैं केवल एक मित्र हूं, जो तुम्हारी सहायता करने के लिए उपलब्ध है, यदि तुम्हें उसकी जरूरत हो तो। और वह भी तुम्हारी स्वतंत्रता है। मेरे साथ आना या नहीं आना। जब तुम आते हो तब मैं तुम्हारा स्वागत करता हूं और जब तुम विदा होते हो, मैं उतने ही प्रेम के साथ तुम्हें विदाई देता हूं। इसमें न कोई वफादारी का सवाल है, न बेवफाई का।
यदि आपके कुछ प्रश्न शेष हों, तो फिर आइए।

बहुत-से प्रश्न बाकी हैं।

फिर पत्तों की पाजेब बजी
तीसरा प्रवचन

एक पृथ्वी, एक मनुष्यता

प्रश्न-टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।

मैं झंझावात का केंद्र बिन्दु हूं, इसलिए मेरे आसपास जो भी घटता है उससे मेरे लिए कोई फर्क नहीं पड़ता- फिर चाहे वह तूफान हो या किसी झरने का कल-कल निनाद हो; मैं दोनों का साक्षी हूं। और यह साक्षित्व निश्चल बना रहता है। जहां तक मेरे अंतरतम अस्तित्व का सवाल है, हर परिस्थिति में मैं केवल साक्षी होता हूं।
और यही मेरी सारी देशना है कि चीजें बदलती रहेंगी लेकिन तुम्हारी चेतना बिल्कुल अचल बनी रहे। चीजों की बदलाहट अनिवार्य है, वह उनका स्वभाव है। एक दिन तुम सफल होते हो, एक दिन तुम असफल होते हो। एक दिन तुम शिखर पर होते हो, दूसरे दिन तुम खाई में होते हो; लेकिन तुम्हारे भीतर कुछ तत्व हमेशा बिल्कुल अचल होता है। वही कुछ तत्व तुम्हारी वास्तविकता है। और मैं अपनी वास्तविकता में जीता हूं, उन स्वप्नों और दुःस्वप्नों में नहीं, जो वास्तविकता को घेरे रहते हैं।
क्या आप यहां रहने की योजना बना रहे हैं?
मैं कभी कोई योजना नहीं बनाता।
टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।
मैंने दो कम्यून बना कर देख लिए- एक भारत में, एक अमेरिका में। दोनों
ही अत्यंत सफल रहे। लेकिन वे जितने सफल हुए उतने ही राजनीतिक उनके खिलाफ हो गए। यदि मैं कम्यून बनाने में असफल होता तो राजनीतिक जरा भी विरोध नहीं करते; सफलता के कारण उपद्रव शुरू हुआ। क्योंकि मेरे कम्यून ने एक आदर्श निर्मित किया था।
अमेरिका के कम्यून में पांच हजार लोग रहते थे और उसका क्षेत्र एक सौ छब्बीस वर्ग मील का था। हमने चार साल के भीतर उस मरुस्थल को मरुद्दान में बदल दिया। पचास साल से वह भूमि बंजर पड़ी थी, उसे खरीदने के लिए कोई तैयार नहीं था। और हमारी कोशिश के कारण वह जमीन हमारे लिए सब्जियां, फल, अनाज उगाने लगी और दूध के उत्पादन तथा कम्यून की हर जरूरत पूरी करने लगी। कम्यून बड़े सुविधाजनक ढंग से, आनंद से सृजनात्मक जीवन जी रहा था।
कम्यून में न कोई गरीब था, न कोई अमीर था। और इसके लिए जो सरल उपाय मैंने किया था, वह था, कम्यून में पैसे का उपयोग न करना। कम्यून के अंदर पैसे का कोई विनिमय करने की इजाजत नहीं थी। कम्यून के द्वारा हर चीज हर व्यक्ति को दी जाती थी। तुम लखपति हो या निर्धन, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था; तुम्हारी हर जरूरत पूरी की जाती थी। और लोग प्रतिदिन बारह से चौदह घंटे काम करते थे, वे स्वयं कभी छुट्टी नहीं लेते थे। क्योंकि जिसका निर्माण वे इतने उल्लास से कर रहे थे, वह उनकी अपनी जगह थी। उनके दिन की शुरुआत ध्यान से होती थी। उसके बाद काम, और अंततः, उनके दिन का समापन नृत्य, गीत और साजों पर धुन छेड़ने से होता था। वह मानो एक स्वप्नलोक था। जल्दी ही पूरे अमेरिका में खरब फैल गई। प्रसारण माध्यम के लोग वहां आने लगे। उनको विश्वास नहीं हो रहा था कि वहां कोई शासन नहीं था, कोई पदानुक्रम नहीं था, कोई नौकरशाही नहीं थी, और फिर भी हम एक उच्चकोटि के साम्यवाद का प्रयोग कर रहे थे- जिसमें कोई तानाशाही नहीं थी।
यह अमेरिकन राजनीतिकों के लिए एक बड़ा सिरदर्द बन गया। अगर पांच हजार लोगों के साथ एक जगह पर यह घटना घट सकती है तो कहीं अन्यत्र यह संभव क्यों नहीं हो सकता? और हमारे हाथ में कोई सत्ता नहीं थी; उनके हाथ में पूरी ताकत थी। दुनिया की सारी संपदा उनके पास थी, और फिर भी अमेरिका में तीन करोड़ भिखारी हैं। हमने दो सौ भिखारियों को अपने कम्यून में प्रवेश दिया था। उन्होंने अपनी चोरी करने की, शराब पीने की, और अन्य सभी बुरी आदतें छोड़ दी थीं। क्योंकि पहली बार उन्हें मनुष्य होने की गरिमा मिली थी। और कम्यून के अन्य सदस्यों की तरह उन्हें भी सम्मान मिलता था।

जिस तरह इन लोगों ने अमेरिका का कम्यून नष्ट किया है और जिस तरह भारत
का कम्यून नष्ट किया है, उसने हमें काफी सबक सिखाया है। मैं कोई कम्यून स्वतः निर्मित नहीं करूंगा- जब तक कि कोई शासन मुझे निमंत्रित नहीं करता, मेरा सहयोग नहीं करता और मुझे एक आदर्श गांव बनाने का निमंत्रण नहीं देता- ऐसा गांव जो पूरे देश को उपलब्ध हो। और उस गांव में एक छोटा सा विश्वविद्यालय भी हो, जहां हम तीन महीनों या छह महीनों के कोर्स शुरू कर सकते हैं। दूसरे गांवों के लोग वहां आकर सीख सकते हैं कि हमने किस तरह यह निर्माण किया है, ताकि वे लोग भी कर सकें। हम अपने लोगों को भी दूसरे गांवों में भेज सकते हैं, जो वहां के लोगों को सिखाएंगे कि हमने किस तरह गांव बसाया है। और हम अन्य लोगों को मार्गदर्शन करने के लिए चीजें निर्मित करने के लिए, हमारे लोगों को भेज सकते हैं। लेकिन मैं अपने से कुछ भी शुरू करने वाला नहीं हूं।
टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।
यह बिल्कुल बकवास है। तुम जरा मेरे लोगों को देखो, उनमें से नब्बे प्रतिशत साधारण लोग हैं। और यह किसी के लिए भी बंद नहीं है। मैंने भिखारियों को भी स्वीकार किया है। लेकिन उन भिखारियों और साधारण आदमियों को मैंने धनी बना दिया है। जब कोई साधारण आदमी मेरे कम्यून में आता है, तो वह साधारण ही होता है, लेकिन मेरे कम्यून में रहने से वह बहुत आसाधारण बन जाता है।
यह तो बिल्कुल झूठ है।
भगवान, नाम को गलत समझे जाने के आधार क्या हैं?
उसका आधार यह है कि भारत में तीन धर्म हैं। हिन्दू धर्म में भगवान का अर्थ होता है- ईश्वर। बौद्ध धर्म और जैन धर्म भी भगवान शब्द का उपयोग करते हैं, लेकिन उनका अर्थ ईश्वर नहीं होता, क्योंकि न बौद्ध धर्म ईश्वर को मानता है, न जैन धर्म मानता है। उन धर्मों में कोई ईश्वर नहीं है। लेकिन बुद्ध को "भगवान गौतम बुद्ध" कहा जाता है और महावीर को "भगवान वर्धमान महावीर" कहा जाता है। भगवान का उनका अर्थसर्वथा भिन्न है। उनका अर्थ हैः धन्यभागी वह जो चेतना के अंतिम शिखर तक पहुंच गया। तो जितने प्राणी हैं, उतने भगवान हो सकते हैं। वह प्रत्येक का जन्मसिद्ध अधिकार है। हिंदू धर्म में ईश्वर का एकाधिकार है, वह फासिस्ट है। जैन और बौद्ध धर्म में भगवान महज तुम्हारी क्षमता है।
यह समस्या इसलिए खड़ी हुई, क्योंकि मैं जैन धर्म में पैदा हुआ हूं; और भगवान मेरे लिए ईश्वर कभी नहीं था। मेरे लिए वह हमेशा परम चेतना का प्रतीक रहा है, जो हर कोई उपलब्ध कर सकता है। यह गलतफहमी सिर्फ मेरे साथ नहीं है, यह हजारों वर्ष पुरानी है। अब जैसे, हिंदु महावीर को भगवान कभी नहीं मानेंगे, क्योंकि उन्होंने यह संसार निर्मित नहीं किया। वे तो ईश्वर के आंशिक अवतार भी नहीं हैं। वे राम को ईश्वर का आंशिक अवतार मानते हैं। वे कृष्ण को ईश्वर का पूर्णावतार मानते हैं। लेकिन बौद्ध और जैन उनसे सहमत नहीं होंगे। क्योंकि कृष्ण का पूरा चिंतन ही हिंसा का है।
गीता एकमात्र ऐसी किताब है जो इतनी स्पष्टता से हिंसा की शिक्षा देती है। सच पूछा जाए तो महात्मा गांधी उसकी वजह से जड़बुद्धि प्रतीत होते हैं। वे अहिंसा के संबंध में और अहिंसा के दर्शन के संबंध में बातचीत करते हैं, और गीता को अपनी माता कहते हैं, और वह कल्पना भी नहीं कर सके कि गीता पूरी हिंसा से भरी है। अर्जुन को कृष्ण सिखा रहे हैं, उस पूरी शिक्षा का सार यही है कि युद्ध में उतर, लड़। यही तेरा धर्म है। तू योद्धा है। मारना और मरना ही तेरा जीवन है। और यही परमात्मा की इच्छा है।
मैं खुद कृष्ण को भगवान शब्द के मेरे अर्थ में भगवान नहीं कहूंगा। वे राजनीतिक हैं, और बड़े धूर्त राजनीतिक हैं। मैं राम को भगवान नहीं कहूंगा। राम को भगवान कहना इस शब्द का मूल्य कम करने जैसा है। क्योंकि यही यह आदमी है जिसने शूद्र के कानों में पिघला हुआ सीसा डलवाया, क्योंकि यही वह आदमी है जिसने शूद्र के कानों में पिघला हुआ सीसा डलवाया, क्योंकि उस शूद्र ने पेड़ के पीछे छिपकर वेदों के मंत्र सुन लिए थे- और यह महापाप था। जो आदमी परम चेतना को उपलब्ध है, वह इस तरह आचरण करेगा? उसके लिए भी कोई शूद्र है,

और उसे इस कुरूप ढंग से सजा देती है? मैं राम को भगवान कहने की कल्पना भी नहीं कर सकता।
तो यह विवाद हजारों साल पुराना है। मैं गौतम बुद्ध और महावीर के पक्ष में हूं, राम, कृष्ण, या महात्मा गांधी के पक्ष में नहीं हूं। महात्मा गांधी भी धार्मिकता का मुखौटा ओढ़े हुए राजनीतिक हैं। पाकिस्तान बना इसके लिए महात्मा गांधी और उनका धार्मिकता का, साधुता का मुखौटा जिम्मेदार है। अन्यथा जिन्ना कांग्रेस के सदस्य थे और उन्होंने सोचा भी नहीं था कि मुसलमान भारत से अलग हों। लेकिन जब उन्होंने देखा कि गांधी हिंदु संत बन रहे हैं, गीता को माता कहते हैं, लेकिन कुरान को पिता नहीं कहते, उनका सारा आचरण जीवन हिंदु संत जैसा हो रहा है तो स्वभावतः जिन्ना को डर पैदा हुआ कि यह आदमी हिंदू अधिराज्य बनाने वाला है। और इस देश में मुसलमानों के लिए कोई स्थान नहीं रह जाएगा। तो मैं मोहम्मद अली जिन्ना को पाकिस्तान के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराता। पाकिस्तान के लिए महात्मा गांधी जिम्मेदार हैं, और उनकी तथाकथित अहिंसा, जो कि बिल्कुल थोथी थी; क्योंकि गीता और अहिंसा, ये दो बातें एक साथ नहीं हो सकतीं।
क्या तुमने कभी सुना है कि अर्जुन को उस दर्शन की शिक्षा देने के कारण
और भारत में महायुद्ध करवाने के कारण- जिसके बाद भारत फिर खड़ा नहीं हो सका- जैन पुराण में कृष्ण अब भी नर्क में हैं? उस युद्ध से भारत की रीढ़ ही टूट गई। सिर्फ जैन शास्त्रों में कृष्ण नर्क में सड़ रहे हैं। उनको भगवान कहने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता।
महात्मा गांधी फिर एक बार वही भूमिका अदा कर रहे हैं- महात्मा का मुखौटा, अहिंसा की चर्चा, और फिर भी गीता की शिक्षा। गीता की तुलना में तो कुरान भी अहिंसक है। कृष्ण की तुलना में तो मोहम्मद भी अहिंसक हैं। तो यह डर पैदा कर दिया कि हिंदुओं द्वारा इस देश का शासन होगा। दूसरे, चूंकि वे अहिंसा की बात कर रहे थे, उन्होंने सारे देश की हिंसा को दबा दिया। और जैसे ही ब्रिटिश देश छोड़ कर गये और देश का बंटवारा हुआ तो चालीस साल तक महात्मा गांधी जिस हिंसा को दबा रहे थे उसका विस्फोट हुआ। दस लाख लोग मारे गए। और मैं फिर महात्मा गांधी की ओर अंगुलि-निर्देश करता हूं। इस सबके लिए वे ही जिम्मेदार हैं।
जब मेरे लोग मुझे भगवान कहने लगे तो मेरे ईश्वर होने का कोई सवाल ही नहीं था। ईश्वर तो बिल्कुल ही निरर्थक धारणा है, उसका कोई अर्थ ही नहीं है। वह तो एक परिकल्पना भी नहीं है। अस्तित्व में कोई ईश्वर नहीं है। अस्तित्व में कोई ईश्वर नहीं है। अस्तित्व स्वयं में काफी है। मेरी दृष्टि में भगवान का अर्थ है- प्रत्येक की परम क्षमता। तुम्हारा भगवान सुप्त हो सकता है, मेरा भगवान जाग्रत हो सकता है, लेकिन जहां तक हमारी भगवत्ता संबंध है, उसमें कोई फर्क नहीं है।
आपने कहा कि विदेशियों की अपेक्षा भारतीय संन्यासियों की संख्या बहुत कम है। अब आप भारत में रहेंगे तो शायद परिस्थिति उल्टी होगी। (आगे टेप में सुना नहीं जा सकता)
वस्तुतः मैं राष्ट्रों में विश्वास नहीं करता। मेरे लिए पूरी पृथ्वी
एक है और पूरी मनुष्यता एक है। जैसे ही तुम देशी और विदेशी की भाषा में सोचने लगते हो, तुम व्यर्थ विभाजन पैदा करते हो जो अंततः युद्ध, नफरत, निकृष्टता, श्रेष्ठता और सभी तरह की कुरूप मनोवृतियों की ओर ले जाता है। यह बात सच है कि जिन्हें तुम्हारी भाषा में गैर-भारतीय कहते हैं, वे लोग ज्यादा हैं। लेकिन उसका कारण इतना है कि दुनिया में गैर-भारतीयों की संख्या अधिक है। इसके लिए मैं क्या कर सकता हूं? भारतीय ज्यादा नहीं हैं। छह आदमियों में एक आदमी भारतीय है। और मैं सोचता हूं कि मैंने वह अनुपात अच्छी तरह से बनाये रखा है। मेरे शिष्यों में तुम पाओगे कि छह शिष्यों में एक शिष्य भारतीय है। मैं भारत में रहा तो भी इसमें कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। उसका कारण यह है कि मैं जो शिक्षा दे रहा हूं उसके लिए एक खास बुद्धिमानी चाहिए, एक खास शिक्षा, एक खास संस्कृति चाहिए जो दुर्भाग्य से अधिकांश भारत में नहीं पाई जाती।
तो जब मैं इस तरह की बातें कहता हूं जैसे मैंने राम के संबंध में कहीं,
वे मुझे भारतीयों से तोड़ने के लिए काफी हैं। वे मुझे कोई प्रत्युत्तर

नहीं दे सकते। वे यह स्पष्ट नहीं कर सकते कि वह पूरी तरह समर्थनीय है। लेकिन उनके अचेतन संस्कार ऐसे हैं कि मैंने राम के खिलाफ कुछ कहा नहीं कि उनकी नजरों में मैं निंदित हो जाता हूं, मैं उनका दुश्मन हो जाता हूं।
और इसमें फर्क होता है। अमेरिका में मैं जीसस की ऐसी आलोचन करता रहा हूं जैसी कभी किसी ने न की हो- यहूदियों ने भी नहीं। उन्होंने जीसस को सूली दी लेकिन उनकी आलोचना नहीं की। और खास कर अब तो जीसस की आलोचना करने की हिम्मत किसी में नहीं है, और वह भी एक ईसाई देश में। लेकिन पांच हजार ईसाई सुन रहे थे, समझने की कोशिश कर रहे थे, तथ्य को देख रहे थे। यहां तो कल्पना भी नहीं कर सकता कि मैं राम की, कृष्ण की आलोचना कर रहा हूं और पांच हजार हिंदु सुन रहे हैं।
एक अरसे से हिंदु मस्तिष्क का विकास रुका हुआ है। पांच हजार साल पहले मनु के साथ ही उसका विकास रुक गया। तबसे वह विकसित नहीं हुआ है; लेकिन ये वही लोग हैं जिनकी एक खास संस्कृति है, खास तरह की शिक्षा है और खुला हुआ मन है।
जैसे, मेरे संन्यासियों में तुम मुसलमान मुश्किल से पाओगे। मेरे कुछ मुसलमान संन्यासियों हैं, लेकिन उनकी संख्या नगण्य है। इसका कारण इतना ही है कि वे सोच भी नहीं सकते कि कुरान के पार भी कुछ हो सकता है। चौदह सौ साल पहले इतिहास रुक गया है, जम गया है। हजरत मोहम्मद के साथ उसका पूर्ण विराम हो गया। उसके बाद हम व्यर्थ ही जी रहे हैं, मरणोपरान्त जी रहे हैं। अब न कुछ खोजने योग्य है, न कुछ पाने योग्य है।
मेरा अपना अनुभव बड़ा अजीब रहा है। मेरे संन्यासियों में चालीस प्रतिशत यहूदी हैं। अब मैं समझ सकता हूं कि यहूदियों को इतने अधिक नोबल पुरस्कार क्यों मिलते हैं। वे लोग सचमुच बुद्धिमान हैं। और चूंकि उनकी भूमि उनसे छिन गयी, वे विभिन्न देशों में बिखर गये। किसी एक भूमि और एक देश में उनकी जड़ें जम न सकीं, वे उखड़ गईं। और अपनी जड़ों के उन्मूलन के कारण एक अर्थ में वे मुक्त हो गए। तुम्हें सुनकर आश्चर्य होगा कि इस पूरी सदी पर यहूदियों का अधिकार है। कार्ल मार्क्स यहूदी है। अब आधी से ज्यादा दुनिया उससे प्रभावित है सिग्मंड फ्रायड यहूदी है। जो भी स्वयं को बुद्धिजीवी मानता है वह फ्रायड से प्रभावित होगा ही। अलबर्ट आइंसटीन यहूदी है। हिरोशिमा और नागासाकी उसके निर्माण हैं।
और मैं यहूदी धर्म की कड़ी से कड़ी आलोचना करता रहा हूं लेकिन एक भी यहूदी संन्यास छोड़कर नहीं गया।
वह खुला मन हिंदुओं के पास नहीं है, जो उस बात को त्याग करने के लिए तत्क्षण तैयार हो जाते हैं, जो उनके तर्क बुद्धि को गलत मालूम होते हैं। जिनके पास ऐसा मन है, वे मेरे पास आ रहे हैं। भारत में मेरे लगभग एक लाख संन्यासी हैं। और जब मैं यहां रहूंगा तब उनकी संख्या बढ़ जाएगी। लेकिन उनके साथ मुश्किल यह है कि उन सबकी एक विशिष्ट धारणा होती है। यदि मैं उनका समर्थन करूं तो वे मेरे साथ होंगे। वे मेरे साथ नहीं होते, वे अपनी धारणा के साथ होते हैं। और मेरा काम कुल इतना है कि तुम्हारी सारी विचारधाराओं को विनष्ट कर दूं ताकि तुम पूरी तरह से ताजे और मुक्त हो जाओ और अपने बल पर गति कर सको।
उसके स्थान पर मैं तुम्हें कुछ नहीं देता। मैं तुम्हारा सारा ढांचा नष्ट करता हूं। तुम मेरे धर्म को ढांचा तोड़ने का धर्म कह सकते हो। और फिर मैं तुम्हें कोई नया ढांचा दिये बिना अकेला छोड़ देता हूं। मैं तुम्हारी निजता का सम्मान करता हूं और तुम्हारी स्वतंत्रता का सम्मान करता हूं। और मैं तुम्हारे आसपास कोई पिंजरा निर्मित नहीं करता। क्योंकि मैं जानता हूं कि पंख खोलकर आकाश में उड़ने वाले पक्षी से सोने के पिंजरे में कैद पक्षी बिल्कुल भिन्न होता है। वह पिंजरा कीमती हो सकता है लेकिन पक्षी मर जाता है। उसकी स्वतंत्रता छिन जाती है।
कल ही कोई दो पक्षी मुझे भेंट करने के लिए लाया था। जब मेरे पास लाये
गए थे तब दोनों मुर्दा थे, वस्तुतः मृत थे। मैंने उनसे कहा कि तुमने उनकी स्वतंत्रा छीन ली; और उसी क्षण वे मर गए। उनकी स्वतंत्रता उनकी आत्मा है। और मेरे संन्यासियों के साथ मुझे जो काम करना है, वह किसी धर्म का या संगठन का निर्माण नहीं बल्कि ऐसे व्यक्ति तैयार करने, जो अपने पैरों पर

खड़े हो सकें, वे आकाश में जितनी दूर चाहें उतनी दूर तक उड़ान भर सकें। तो कोई भी- चाहे वह हिंदू हो या ईसाई हो या यहूदी हो, जो भी खुला है, वह मेरे पास आ सकता है।
टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।
उसी कारण से। वही भारतीय मन, बंद मन। मैंने उनसे कभी सहानुभूति की अपेक्षा नहीं की थी। वस्तुतः मेरे साथ जो हुआ उससे तो हृदय की गहराई में उन्हें खुशी ही हुई होगी। मेरी हत्या की जाती तो शायद वे उत्सव मनाते। अमेरिकन प्रेस नितांत सुहानुभूतिपूर्ण थी। विश्व भर की प्रेस मुझसे सहानुभूति रखती थी, सिर्फ भारतीय प्रेस को छोड़कर। भारत में पैदा होना दुर्भाग्य है।
आपने धर्मों के संबंध में कहा है लेकिन प्रेस (टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता)
वे लोगों का शोषण कर रहे हैं। क्योंकि लोग हजारों वर्षों से सोचते आये हैं कि कामवासना पाप है, उसका दमन करना चाहिए। और ये लोग, जिन्हें सदियों से सिखाया गया है कि कामवासना पाप है, खंडित हो गये हैं। क्योंकि काम तुम्हारी ऊर्जा है। तुम्हारे पास अन्य कोई ऊर्जा नहीं है। तुम काम ऊर्जा ही पैदा हुए हो। तुम काम ऊर्जा से ही सृजन करते हो, प्रजनन करते हो।
सभी महान सर्जक अति कामुक होते हैं। मनुष्य के पूरे इतिहास में तुम एक
भी नपुंसक आदमी नहीं दिखा सकते जिसने कुछ भी सृजन किया हो- कोई सुंदर कविता या शिल्प या चित्र। नपुंसक आदमी तो साधु भी नहीं हुआ है, जो कि उसे होना चाहिए; क्योंकि उसे कामवासना की कोई समस्या नहीं है। अगर कामवासना के सारे निंदक सही हैं, तो सिर्फ नपुंसकों पर ही ईश्वर की कृपा होनी चाहिए; और नपुंसकता को आध्यात्मिक गुण मानना चाहिए। लेकिन एक भी नपुंसक आदमी संत नहीं बना है।
यह क्या दिखाता है? यह दिखाता है कि तुम्हारी सारी ऊर्जा- फिर तुम बच्चे पैदा करो, या चित्र बनाओ, या संगीत का निर्माण करो, या बुद्ध हो जाओ; कुछ भी करो वह एक ही ऊर्जा है जो अलग-अलग आकारों में, अलग अभिव्यक्तियों में, अलग-अलग आयामों में गति करती है।
तो जब मैंने कहा कि कामवासना का दमन न किया जाए बल्कि उसे हमारे स्वाभाविक अस्तित्व की तरह स्वीकृत किया जाए, तभी हम उसे रूपांतरित कर सकते हैं, उससे ऊंची उड़ान भर सकते हैं; तो तत्क्षण पूरा भारतीय प्रेस उसमें उत्सुक हो गया। मैंने चार सौ किताबें लिखी हैं, उनमें सिर्फ एक किताब सेक्स के संबंध में हैं। भारतीय पत्रकारों को बाकी तीन सौ निन्यानबे किताबों की कोई जानकारी नहीं है। उनकी दृष्टि में मेरी एक ही किताब है; और वह भी उन्हें पूरी-पूरी पता नहीं है। किताब का नाम है, "संभोग से समाधि की ओर।" उसका सिर्फ पहला हिस्साः सेक्स, उन्होंने इतना भी कष्ट नहीं उठाया कि वह किताब सेक्स के संबंध में नहीं है। वह किताब संभोग का समाधि में रूपांतरण करने के संबंध में है। और पहले दमन को विसर्जित करना होगा, तभी वह रूपांतरण संभव है। वस्तुतः में पूरी दुनिया में सेक्स का सबसे बड़ा दुश्मन हूं, लेकिन आश्चर्यों का आश्चर्य तो वह जो भारतीय पत्रकारों ने किया है। उन्होंने मुझे ठीक वही बना दिया है, जो मैं नहीं हूं। और मैं समाचारपत्र या पत्रिकाएं पढ़ता नहीं हूं क्योंकि वे एकदम घटिया होती हैं। उन्हें पढ़ना अपना समय खराब करना है। वे लोगों का शोषण कर रहे हैं। वे सनसनी फैला रहे हैं, झूठ को गढ़ रहे हैं और चीजों को संदर्भ के बाहर रखकर प्रस्तुत कर रहे हैं।
लेकिन विश्व प्रेस की यह स्थिति नहीं है। और मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूं कि जब मैं अमेरिकन प्रसारण माध्यम की बात कर रहा था, तो मुझे साफ दिखायी पड़ रहा था कि वे मेरी बातों को विकृत नहीं करेंगे; और उन्होंने नहीं किया। बल्कि मैं तो वहां कोई नहीं था, एक विदेशी था। यदि मुझे जेल में सताया भी जाता तो अमेरिका के प्रेस को मुझसे क्या लेना-देना था? लेकिन पूरी प्रेस दूरदर्शन, आकाशवाणी, समाचारपत्र, मासिक पत्रिकाएं, ये सब मैं जिस जेल में जाता उसे घेर लेते। और इस प्रसारण माध्यम के कारण ही वे मेरा बाल भी बांका न कर सके। वे उनसे भयभीत थे।

भारतीय शासन भारतीय प्रेस से जरा भयभीत नहीं है। भारतीय प्रेस अभी प्रौढ़ नहीं हुआ। और वस्तुतः भारतीय पत्रकारों को सरकार से मांग करनी चाहिए कि दूरदर्शन, रेडियो, सरकार द्वारा नियंत्रित नहीं होने चाहिए। वे प्रसारण माध्यम के अंग हैं, और वे सार्वजनिक होने चाहिए।
इस प्रसारण माध्यम ने मेरा संरक्षण किया। अमेरिकन मार्शल ने भी मुझसे कहा कि हम आपको छू नहीं सकते, आप बिल्कुल सुरक्षित हैं, क्योंकि विश्व भर का प्रसारण माध्यम देख रहा है। आपके साथ कुछ भी किया तो तो अमेरिका की भर्त्सना होगी। लेकिन भारतीय प्रेस के बारे में वही नहीं कहा जा सकता। भारतीय पत्रकारिता में अच्छे लोग हैं। जब मैं आप जैसे लोगों को देखता हूं, ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्होंने मुझे देखा हुआ है, तो मुझे आश्चर्य होता है कि आप लोगों का अपने समाचार पत्रों से तालमेल कैसे बैठता है। आप अपने को इतने अपमानित कैसे कर सकते हैं? समाचार माध्यम में काफी अच्छे और बुद्धिमान लोग हैं, लेकिन वे उसी ढांचे में समाने की कोशिश करते हैं। वे विद्रोही नहीं हैं।
मैं चाहूंगा कि पहला विद्रोह तो यह हो कि रेडियो तथा दूरदर्शन पर शासन
का नियंत्रण न हो। क्योंकि वह नवीनतम प्रसारण माध्यम है, और शीघ्रतम भी। और लोग खास कर भारत जैसे देशों में पढ़ नहीं सकते लेकिन देख सकते हैं, सुन सकते हैं। तो देश के अधिकांश लोग अगर पढ़ सकते तो देख और सुन तो सकते हैं। और दूरदर्शन और रेडियो सरकार द्वारा नियंत्रित हैं। देश का अधिकांश क्षेत्र प्रसारण माध्यमों के लिए उपलब्ध नहीं है, वह सिर्फ सरकार के प्रचार के लिए उपलब्ध है।
वस्तुतः अमेरिकन अधिकारी आश्चर्यचकित थे। जेल का एक शेरिफ मुझसे बोला बड़े आश्चर्य की बात है कि भारतीय सरकार बिल्कुल खामोश है। बारह दिन तक मुझे सताया गया और अंततः जब अदालत मुझे रिहा करने वाली थी, उससे सिर्फ दो घंटे पहले सान फ्रांसिस को से एक युवक वहां पहुंचा। उसने कहा कि भारतीय राजदूत ने मुझसे प्रत्यक्ष पूछताछ करने के लिए उसे भेजा है। भारत सरकार मेरे मुंह से जानना चाहती है कि मुझे क्या चाहिए।
मैंने कहा, "तुमने बड़ी देर कर दी। मेरी दो घंटे में रिहाई होने वाला है। बारह दिन तक तुम कहां थे? और उसके बाद भी... मेरी रिहाई हो गई, मैं अपने कम्यून में वापिस आ गया, और तब वाशिंगटन से राजदूत का फोन आता है कि क्या आपको हमारी कोई मदद चाहिए है? मैंने कहा, अब क्या मदद करोगे? बारह दिन तक तुम कहां थे?
और बारह दिन प्रसारण माध्यम एक ही बात को दोहरा रहा था कि क्यों मैं व्यर्थ ही सताया जा रहा हूं? न मेरी अदालत में कोई पेशी हुई है, गिरफ्तारी के वारंट के बिना मुझे पकड़ा गया है, जो कि बिल्कुल गैर-कानूनी है। मेरी गिरफ्तारी का कोई कारण नहीं दिया गया। और एक निहत्थे आदमी को तुम बारह बंदूकों से घेर कर गिरफ्तार करते हो। और तुम कोई प्रत्युत्तर नहीं देते। तुम्हारे पास गिरफ्तारी का वारंट नहीं है, न कोई करण है; और भारतीय राजदूत वहां चुप्पी साधे हुए बैठा रहता है! और जब मैं छूट गया तो उसने पूछा, आपकी क्या मदद करें? मैंने कहा "मुझे कोई मदद नहीं चाहिए। हां, आप अगर कोई मदद चाहते हों तो मुझसे मांग सकते हैं। मैं आपकी मदद कर सकता हूं। तुम्हें शर्म आनी चाहिए और इस्तीफा देना चाहिए तुम जरा सी आवाज भी न उठा सके? तुम दूरदर्शन से एक भेंटवार्ता प्रसारित कर सकते थे कि यह बिल्कुल गैर-कानूनी है। तुम अमेरिकन सरकार पर दबाव डाल सकते थे।
लेकिन उन्होंने कुछ भी नहीं किया। उल्टे अभी एक विश्वसनीय सूत्र से मुझे पता लगा है कि अमेरिकन सरकार ने भारत के कुछ संसद सदस्यों को खरीद लिया है, ताकि संसद यदि किसी भांति मेरी सहायता करे तो वे संसद में मेरा विरोध करें। कभी-कभी ऐसा लगाता है कि अपने आपको भारतीय कहलाना कुरूप बात है। कभी-कभार मुझे लगता है कि मैं प्लास्टिक सर्जरी करवा लूं ताकि यह चमड़ी भारतीय न रहे। मुझे सचमुच शर्म आती है।
टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।
हां, प्रेस साधारण आदमी को मुझसे दूर रख रही है। राजनीतिक चाहते हैं
कि साधारण जन मुझसे दूर रहें। धार्मिक नेता चाहते हैं कि साधारण जनता मुझसे दूर रहे।

अब वे चिंतित हैं, हिमाचल प्रदेश चिंतित है कि वह मुझे यहां रहने दे
या नहीं। भारतीय सरकार चिंतित है कि मुझे भारत में बसने दे या नहीं। कोई भी प्रांत मुझे अपने प्रदेश में रहने नहीं देगा। क्योंकि मैं जो भी कहूंगा वह न्यस्त स्वार्थों के विपरीत पड़ेगा।
और मैं कोई राजनीतिक नहीं हूं। मैं सबकी प्रशंसा में अच्छी-अच्छी बातें नहीं कहता रहूंगा। अगर वक्त पड़े तो मैं इस देश के बाहर जाऊंगा लेकिन अपनी मातृभूमि में बिना बुलाये मेहमान की तरह नहीं रहूंगा। अमेरिका में कम से कम इतनी सांत्वना तो थी कि मैं यहां विदेशी हूं और वे मेरे साथ दुर्व्यवहार कर रहे हैं। लेकिन भारत में यह सांत्वना नहीं है। यह मेरा देश है और वे मेरे साथ दुर्व्यवहार कर रहे हैं। और मैं सोचता हूं कि इसमें प्रेस मेरी बहुत मदद कर सकती है। बस थोड़ा सा साहस चाहिए।
मैंने यहां अमेरिका में कोई जुर्म नहीं किया है। लेकिन शायद एक अपराधी को माफ किया जा सकता है, पर एक विद्रोही को नहीं। लेकिन उस मामले में मैं किसी भी तल पर समझौता नहीं करूंगा। मैं विद्रोही बना रहूंगा, और मैं वही बातें कहता रहूंगा, जो मेरी चेतना को ठीक दिखाई पड़ती है- जब तक कि कोई उनको गलत सिद्ध नहीं करता, उनके खिलाफ तर्क नहीं जुटाता।
और मैं किसी के साथ कोई भी तर्क करने के लिए सदा तैयार हूं- राजनीतिक हो, धर्मगुरु हो या कोई भी। क्योंकि मैं जो भी कहता हूं वह अपने अधिकार से कहता हूं। मैं गीता का सहारा नहीं लेता हूं, मैं कुरान का सहारा नहीं लेता हूं, मैं केवल अपनी चेतना पर निर्भर करता हूं। लेकिन लगता है अंधों की घटी में आंखों का होना खतरनाक है।
टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।
बुद्धत्व को उपलब्ध होने वाले हर व्यक्ति के साथ प्रत्येक व्यक्ति के भीतर कुछ चेतना तो उत्पन्न होती है। लेकिन एक बुद्ध पूरी दुनिया को रूपांतरित नहीं कर सकता। कम से कम दो सौ बुद्ध चाहिए। इस पृथ्वी पर दो सौ बुद्ध हों तो वे निश्चित रूप से पूरी हवा बदल देंगे, धर्म विलीन होंगे, राष्ट्र विलीन होंगे, युद्ध विलीन होंगे। और आदमी पहली बार बिना किसी दमन के, बिना किसी निंदा के आजादी से जी सकेगा। आदमी जैसा है वैसा स्वीकृत होना चाहिए। उसके ऊपर कोई कर्तव्य या अकर्तव्य थोपना नहीं चाहिए। वह जिस दिशा में विकसित होगा उसी दिशा में, वैसे ही उसे प्रेम और सम्मान मिलना चाहिए। लेकिन कम से कम दो सौ ज्ञानोपलब्ध व्यक्ति चाहिए। और यह भी मेरा एक मूलभूत काम है।
सारी दुनिया में मेरे दस लाख संन्यासी हैं। और अब मैंने अन्य लोगों के लिए भी द्वार खोल दिये हैं। वे लोग, जिनकी सहानुभूति थी लेकिन जो उनके कपड़े, उनकी नौकरी या परिवार नहीं छोड़ सके। अब मैंने संन्यास सबके लिए खुला कर दिया है। यदि तुम्हारा मन नहीं है तो तुम्हें कपड़े बदलने की कोई जरूरत नहीं है। तुम्हारी इच्छा न हो तो माला भी पहनने की जरूरत नहीं है। लेकिन तुम ध्यान तो कर सकते हो। कपड़ों से काई फर्क नहीं पड़ता। वह तो एक आयोजन था कि संन्यास एक तथ्य की तरह पहचाना जा सके। अब वह पहचाना जाने लगा है। अब उसमें कोई सार नहीं है।
तो मैंने द्वार खोल दिए हैं। अगर दस लाख लोगों ने संन्यास लिया है तो
कम से कम तीस लाख लोग संन्यास लेने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। उन्हें सिर्फ माला और कपड़ों का भय था; अन्यथा वे सहानुभूतिपूर्ण थे। और चार अरब लोगों में अब एक ऐसी संभावना पैदा हुई है जो पहले कभी नहीं थी।
बुद्ध कभी बिहार से बाहर नहीं गए। महावीर कभी बिहार से बाहर नहीं गए।
सच तो यह है कि बिहार नाम ही इसलिए मिला क्योंकि बुद्ध और महावीर वहां विहार करते थे। विहार यान घूमना। यदि बिहार जैसी छोटी-सी जगह में बुद्ध बीस लोगों को ज्ञानी बना सके तो पच्चीस सदियों के बाद, ध्यान की अधिक परिष्कृत विधियों के रहते...
जीसस कभी जूड़िया के बाहर नहीं गये। और तैंतीस साल की उम्र में उनकी मृत्यु हुई। उनका शिक्षा-काल सिर्फ तीन साल रहा। रामकृष्ण बंगाल से ही बंधे रहे। लेकिन मैंने पूरी दुनिया में संपदा निर्मित की है। अब हर देश में मेरे कम्यून हैं, और ऐसा एक भी देश नहीं है जहां संन्यासी नहीं हैं। यहां तक कि सोवियत रूस में भी, जो साम्यवादी देश है उसमें भी।

तो इसकी संभावना है और समय भी आ गया है कि दो सौ बुद्ध निर्मित किए जाएं। अन्यथा यह पृथ्वी नष्ट होने वाली है। राजनीतिक उसको नष्ट करने को तैयार बैठे हैं, उसे नष्ट करने के लिए अधिक से अधिक आणविक शस्त्रास्त्र बना रहे हैं। धर्म इस जगत को बचाने में उत्सुक नहीं है। उनकी पूरी उत्सुकता है गरीब लोगों को कैथोलिक या हिंदू या फलां-ढिकां बनाने में। किसी को उस महाविनाश की फिक्र ही नहीं है जो क्षितिज पर मंडरा रहा है। लेकिन दो सौ ज्ञानापलब्ध व्यक्ति इस पूरे वातावरण को निश्चित रूप से बदल सकते हैं।
टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।
यह भय के कारण है। ईश्वर की कोई जरूरत ही नहीं है। आदमी इतना भयग्रस्त होकर जीया है कि उसे किसी सुरक्षा की जरूरत थी। बीमारी का भय था, मृत्यु का भय था। अधिकतर मृत्यु ही आदमी को इतना भयभीत कर देती है कि उसे अपनी रक्षा करने के लिए मृत्यु के पास का कोई चाहिए।
ईश्वर कोई खोज नहीं है, वह अविष्कार है। और ईश्वर के नाम पर पुरोहित बड़ी सुगमता से शोषण कर सके। कहते हैं, वेद ईश्वर ने लिखे हैं; और उन वेदों में इतनी मूढ़तापूर्ण बातें हैं कि यदि ईश्वर ने उन्हें लिखा है तो वेदों के साथ वह भी निंदित हो जाएगा। ईसाई कहते हैं बाइबिल परमात्मा ने लिखी है और यदि बाइबिल परमात्मा ने लिखी है तो उसमें कम से कम पांच सौ पृष्ठ हैं जो अश्लीलता से भरे हैं। तब फिर परमात्मा पूरे अस्तित्व में बड़े से बड़ा अश्लील साहित्यिक हैं।
तुम हिंदू पुराणों को देखोगे तो वहां सिर्फ अश्लीलता पाओगे। हिन्दुओं ने भी शिवलिंग को परमात्मा बनाया है। यह अच्छा हुआ कि सिग्मंड फ्रायड कभी शिवलिंग के बारे में जान न पाया कि ऐसे भी लोग हैं जो अपने मंदिरों में लैंगिक प्रतीकों की पूजा करते हैं; और जो इससे बिल्कुल बेखबर हैं कि वह किसकी पूजा कर रहे हैं।
ईश्वर है ही नहीं। ईश्वर के पक्ष में दिए जाने वाले सभी तर्क असिद्ध
हो जाते हैं। वे लोग जो वस्तुतः चेतना के उच्चतम शिखर पर पहुंचे हैं, उन्होंने कभी ईश्वर की धारणा को स्वीकार नहीं किया। पतंजलि- वह आदमी, जिसने उसके पूरे योग का विज्ञान निर्मित किया, ईश्वर को नहीं मानता। उसी तरह बुद्ध, शायद महानतम मानव जो इस धरती पर चला हो... एच. जी वेल्स ने उनके संबंध में लिखा है, "वे सर्वाधिक ईश्वर विहीन व्यक्ति थे और फिर भी सबसे अधिक ईश्वरतुल्य।
ईश्वर के पक्ष में एक भी तर्क नहीं है। वह बिल्कुल ही निरर्थक परिकल्पना है। और अच्छा होगा कि हम उस परिकल्पना को बिल्कुल ही त्याग दें। क्योंकि उस त्याग के साथ ही इस्लाम, हिंदू धर्म, ईसाइयत, यहूदी धर्म एकदम विलीन हो जाते हैं; और उनके साथ ही उनके चर्च, हजारों कार्डिनल; बिशप, पोप भी जो मनुष्यता के शोष्क हैं और कुछ भी नहीं, वे सब खो जाएंगे।
ईश्वर सबसे बड़ी विपदा है। हां, लोग ईश्वर तुल्य हों। जिसका मतलब है,
वे सच्चे हों, प्रामाणिक हों, प्रेमपूर्ण हो, होशपूर्ण हों। ये सब गुण उन्हें ईश्वर तुल्य बनाएंगे। लेकिन इससे वे ईश्वर नहीं हो जाते।
तो मैं तो ईश्वर को नष्ट कर रहा हूं और भगवत्ता को हर मनुष्य तक पहुंचा रहा हूं। उसे एक मंदिर में प्रतिमा बनाकर पूजने की बजाय यदि उसे एक गुणवत्ता की तरह, एक सुगंध की तरह दूर-दूर तक फैलाएं तो ज्यादा अच्छा होगा। जब तुम वही हो सकते हो तो उसकी पूजा क्यों करना।
टेप में प्रश्न सुना नहीं जा सकता।
और कुछ? फिर वापिस आना। और इस बात की कोशिश करो कि भारत में पत्रकारिता का वही तल हो जो पूरे विश्व में है। हमें पीछे नहीं छूटना चाहिए। सरकार की नौकरशाही की विशाल यंत्रणा के खिलाफ व्यक्ति की स्वतंत्रता अक्षण्ण बनाये रखने का वह एक सशक्त साधन है। एक अकेला व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता।
अमेरिका के एक कारागृह में ऐसा हुआ। वहां के मार्शल ने मुझझूठे नाम के नीचे हस्ताक्षर करने के लिए कहा- डेविड वाशिंगटन। मैंने कहा, "यह बिल्कुल पागलपन है, यह मेरा नाम नहीं है। मैं इसके नीचे क्यों हस्ताक्षर करूं? तुम न्याय विभाग में काम करते हो। यह किस तरह का न्याय है?

उसने कहा, "मुझे आपके साथ बहस नहीं करनी है। अगर आप हस्ताक्षर नहीं करते हैं जो आपको इस इस्पात की कड़ी बैंच पर बैठना होगा- सारी रात; और मैं आपकी पीठ के बारे में जानता हूं। अगर आप इस पर हस्ताक्षर करते हैं तो मैं आपको एक कोठरी दिलवा सकता हूं और आप सो रहे हैं।
मैंने कहा, "ठीक है, तुम डेविड वाशिंगटन लिखो और मैं हस्ताक्षर करता हूं। उसने डेविड वाशिंगटन लिखा और पूरा फार्म भरा और मैंने नीचे सिर्फ अपना ही नाम हिंदी में लिख दिया। उसने पूछा," यह क्या है? "मैंने कहा," डेविड वाशिंगटन ही होगा।
लेकिन मैंने उससे कहा, याद रखना, कल सुबह दूरदर्शन की सब चैनलों पर सब केंन्द्रों से प्रसारित हो जाएगा कि तुमने मुझसे गैर-कानूनी कृत्य करवाया; और उसका कारण यह था कि तुम चाहते थे कि लोगों को पता न चले कि मैं इस कैद में हूं। तुम मुझे मार भी डालोगे तो भी वे मुझे खोज नहीं पाएंगे कि मैं कहां खो गया; क्योंकि तुम्हारे बोर्ड पर डेविड वाशिंगटन होगा। लेकिन कल सुबह सभी दूरदर्शन के परदे पर यह प्रकट हो जाएगा।
वह कहने लगा, यह आप कैसे कह सकते हैं? मैंने कहा "मैंने व्यवस्था कर ली है।
कुछ देर के लिए वह फार्म लाने गया था, और एक लड़की की रिहाई होने वाली थी, वह मेरे पासे ही बैठी थी। मैंने उससे कहा, "जब तुम बाहर निकलोगी तो सिर्फ एक बात करना। बारह पूरी प्रेस खड़ी है, तुम उन्हें सिर्फ दो बातें बताना- एक कि मुझसे जबर्दस्ती डेविड वाशिंगटन इस नाम के नीचे हस्ताक्षर करवाए गये हैं, और दूसरे मैंने अपना ही नाम हिंदी में लिख दिया है। वे आकर जांच कर सकते हैं।
और दूसरे दिन प्रातः पूरे अमेरिका में यह समाचार फैल गया- हर अखबार में, हर आकाशवाणी केंन्द्र में, हर चैनल पर... । तुम किसी निर्दोष व्यक्ति के साथ मनमानी नहीं कर सकते; खास कर उस हालत में, जबकि इतने विशाल और सशक्त प्रसारण माध्यम पर तुम्हारा कोई नियंत्रण नहीं है।
दूसरे ही दिन वे मुझे कारागृह में ले गए क्योंकि उन्हें डर पैदा हो गया। क्योंकि उन्होंने जो किया था वह सचमुच गैर-कानूनी था। और उसके बाद उन्होंने दुबारा मुझसे किसी नाम के नीचे हस्ताक्षर नहीं करवाये। भारतीय पत्रकारिता को ऊंचा उठाना है। कुछ व्यक्तियों को कुर्बानी होगी, लेकिन उसे विश्व प्रेस से स्तर पर लाना होगा। और यह मेरे अकेले का सवाल नहीं है। प्रेस का संरक्षण न हो तो एक अकेले व्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए नौकरशाही की शक्तिशाली यंत्रणा के खिलाफ क्या सुरक्षा है?
मेरी दृष्टि में, प्रेस को शासन से भी अधिक शक्तिशाली भूमिका निभानी है। शासन को प्रेस से डरना चाहिए, प्रेस को शासन से नहीं।
फिर कभी आइये।

फिर पत्तों की पाजेब बजी चौथा प्रवचन

सब प्रश्नों का एक उत्तरः ध्यान

भगवान, विश्व भर में आपके संन्यासी और प्रेमी आपके स्वास्थ्य को लेकर बहुत चिंतित हैं। अब आप कैसे हैं।
मेरा स्वास्थ्य ठीक है। उन्होंने मुझे नुकसान पहुंचाने की बहुत कोशिश की, लेकिन उन्हें इसमें सफलता न मिल सकी। दो कारण से; पहला कारण तो यह रहा कि जिन लोगों को उन्होंने नियुक्त किया था मुझे तकलीफ देने के लिए, छिपे-छिपे ढंग से ऐसी स्थितियां बनाने के लिए जिनके द्वारा मुझे पीड़ित किया जाए, वे लोग जल्दी ही मेरे प्रेम में पड़ गये। वे मुझसे कहने लगे, इस तरह का काम तो हम नहीं कर सकते।
एक जेल में तो खास तौर से ऐसा हुआ, उसे जेल का शेरिफ, उप शेरिफ, डॉक्टर, नर्सें और सारे कैदी व वहां नियुक्त तमाम व्यक्ति- तीन सौ साठ व्यक्ति- वह तो करीब-करीब कम्यून बन गया। छः दिन तक मैं वहां था, और जेल का सारा वातावरण ही बदल गया।
वे शेरिफ वृद्ध था, और वह मुझसे कहने लगा, "ऐसा पहली बार हुआ है और शायद अंतिम बार ही होगा कि आप जैसा व्यक्ति इस जेल में आया। हमने कभी इतनी शांति महसूस नहीं की; हमारे यहां के अपराधी भी इतने शांत कभी नहीं हुए। हमारे सारे कर्मचारी इस भांति आपके प्रेम में पड़ गये हैं कि चाहते ही नहीं कि आप यहां से छूट कर चले जाएं। वे चाहते हैं, आप यहीं रहें।
हेड नर्स बोली, "कल हम आपको देखना चाहेंगे और फिर हम आपको कितना याद करेंगे।"
व्यक्ति तो व्यक्ति है। बस, यदि तुम में भरपूर प्रेम है, तो तुम उनके हृदय एकदम सहज ही बदल सकते हो। इसलिए एक कारण यह भी था जो वे मुझे नुकसान नहीं पहुंचा सके।
दूसरा कारण था, प्रेस की स्वतंत्रता, असीम स्वतंत्रता। सारी विश्व-प्रेस, सिवाय भारत की प्रेस के, मुझ पर केंद्रित थी। प्रत्येक जेल, जहां भी मैं था, हैरान थे, यह हो क्या गया है! चौबीसों घंटे टेलीफोन बज रहे थे, हजारों तार, विश्व के हर कोने से हजारों फूल पहुंच रहे थे!
यदि इतने लोग इस आदमी के प्रेम में हैं, जरूर कहीं कोई गलती हो गई होगी।
और प्रेस के लोग निरंतर हर जेल के बाहर थे- अपने हैलीकाप्टरों में, अपने कैमरे साथ लिए। फाटकों पर कैमरे टिके थे, वृक्षों में कैमरे लगे थे। उन्होंने बारह दिन में कभी मुझे एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़ा। और एक जेल से दूसरे जेल तक मुझे जो जाना पड़ा। मुझे कम से कम दरवाजे के बाहर तो आना होता था, उन क्षणों में भी वे मुझसे पूछ लेते, "क्या वे आपको बहुत तकलीफ पहुंचा रहे हैं? आपका मात्र एक शब्द और सारा संसार अमेरिका के असली फासिस्ट चेहरे को जान पाएगा।
प्रेस से भयभीत होने के कारण वे बहुत कुछ न कर सके।
तो, मेरा स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक है।
भगवान, ध्यान के प्रति लोगों का उत्साह बढ़ाने के लिए कौन-सा तरीका सबसे अच्छा है? (प्रश्न का शेष हिस्सा रिकार्ड नहीं हो पाया)
तो तुम "ध्यान" के लिए जिन लोगों का उत्साह बढ़ाना चाहते हो, पहले तुम्हें उन में इस बात के प्रति जागरूकता लानी होगी कि वे हताश हैं, कि वे भूल चुके हैं, कि वे विषद से भरे हैं; कि वे याद नहीं कर सकते कि कब वे एकदम अपने हृदय से, गहन भीतर से हंसे थे, कि वे यंत्र मानव बन गए हैं; कि वे तमाम कार्य इसलिए करते हैं क्योंकि उन्हें करना ही है, वरना तो उन्हें करने में कोई रस नहीं है, आनंद नहीं है।
वे संयोगवशात जीवन जी रहे हैं। उनका जन्म एक संयोग है, उनका विवाह एक संयोग है, उनके बच्चे संयोगवश हो गए हैं। उनका काम-काज भी सांयोगिक है। उनके जीवन में आंतरिक विकास और सही दिशा की ओर बढ़ती गतिमयता की कोई सुवास नहीं है। इसलिए वे आनंदित नहीं हो सकते।

इसलिए तुम्हें पहले तो उन्हें इसके प्रति होश देना होगा कि वे कहां हैं। और प्रत्येक व्यक्ति करीब-करीब एक ही स्थिति में है। और मृत्यु निकट आ रही है। तुम ठीक-ठीक यह भरोसा भी नहीं कर सकते कि कल तुम यहां होगे। और तुम्हारा जीवन बिल्कुल मरुस्थल है, उसने कोई मरूद्यान नहीं पाया, उसे अपनी कोई अर्थवत्ता, अपना कोई ठीक अर्थ नहीं मिला; और मृत्यु कभी भी भविष्य की सारी संभावनाओं को नष्ट कर सकती है।
तो पहले तुम्हें उनके अर्थहीन, सांयोगिक, निराश-हताश जीवन के प्रति उन्हें सचेत करना है। वे इसे जानते हैं, लेकिन वे इस जानने को दबाने की कोशिश करते हैं बहुत तरीकों से। क्योंकि निरंतर इसका बोध बने रहने देना, बहुत पीड़ादायी है। इसलिए इसे भुला देने को वे फिल्में देखते हैं। वे पार्टियों में जाते, वे पिकनिकों का आयोजन करते हैं, वे शराब पी लेते हैं। कुछ भी करते हैं- बस, किसी भांति अपने जीवन की वास्तविकता, उसका खोखलापन, व्यर्थ बोध भुलाने के लिए।
यह सब से ज्यादा महत्वपूर्ण बात है- उन्हें यथार्थ का स्मरण दिलाना।
और जब कोई यह सब स्मरण में लेता है, तो उसे ध्यान की ओर ले जाना बहुत सरल हो जाता है, क्योंकि "ध्यान" मनुष्य के सारे प्रश्नों का एकमात्र उत्तर है।
यह निराशा हो सकती है, यह विषद हो सकता है, यह उदासी हो सकती है, एक अर्थहीनता हो सकती है, यह संताप हो सकता है- समस्याएं अनेक हो सकती हैं, लेकिन उत्तर एक ही होता है।
ध्यान उत्तर है।
और ध्यान की सरलतम विधि है- साक्षी होने का ढंग। एक सौ बारह विधियां हैं ध्यान की, लेकिन इन तमाम एक सौ बारह विधियों में साक्षीभाव एक आवश्यक तत्व है। इसलिए मेरे देखे तो साक्षीभाव ही एकमात्र विधि है। वे एक सौ बारह विधियां साक्षीभाव की विभिन्न प्रयुक्तियां हैं।
यह सीखना कि साक्षी कैसे हुआ जाए ध्यान का मूलभूत केंद्र, ध्यान की चेतना शक्ति है। तुम एक वृक्ष को देख रहे होते हो; तुम मौजूद होते हो, वृक्ष मौजूद होता है वहां, लेकिन क्या किसी और बात का तुम्हें पता नहीं चलता? कि तुम ही देख रहे होते हो वृक्ष को, कि तुममें कोई साक्षी मौजूद है, जो तुम्हें देख रहा है वृक्ष को देखते हुए।
यह जगत केवल द्रष्टा और दृश्य में ही बंटा हुआ नहीं है। इन दोनों के पार भी कुछ है। और वही "पार" वही अतिक्रमित ही ध्यान है।
तो प्रत्येक कृत्य में... और मैं नहीं चाहता कि लोग दृढ़तापूर्वक घंटा आधा घंटा सुबह या शाम बैठे रहें। उस तरह का "ध्यान" सदा काम न आएगा; क्योंकि अगर तुम घंटा भर ध्यान करते हो, तो तेईस घंटे तुम ठीक उसके विपरीत ही कर रहे होते हो।
ध्यान फलित नहीं होगा। साक्षीभाव ऐसी विधि है जो चौबीस घंटे तुम में उतरी रह सकती है।
भोजन कर रहे होते हो, तो भोजन करने वाले के साथ तादात्म्य मत बना लेना। भोजन वहां है, भोजन करने वाला भी वहां है, और तुम वहां होते हो, साक्षी रहते हुए। चल रहे होते हो, तो शरीर को चलने दो लेकिन तुम केवल ध्यान से देखते रहो। धीरे-धीरे कुशलता, सक्षमता आती है। और ये एक सक्षमता है, और जब तुम छोटी-मोटी बातों को ध्यानपूर्वक देख सको... यह कौआ कांव-कांव कर रहा है, तुम सुन रहे हो। ये दो बातें हुईं- व्यक्ति और विषय। लेकिन क्या तुम उस साक्षी तत्व को नहीं देख सकते जो उन दोनों को ही देख रहा है? कौआ, उसे सुनने वाला और फिर भी कोई एक जो दोनों को साक्षीभाव से देख रहा। यह एक बड़ी सरल-सहज घटना है।... तब तुम अस्तित्व की अधिक गहरी परतों में उतर सकते हो। तुम अपने विचारों के साक्षी हो सकते हो, तुम साक्षी हो सकते हो अपनी भावनाओं के, भावदशाओं के।
यह कहने की जरूरत नहीं है कि "मैं उदास हूं"। वास्तविकता यह है कि तुम साक्षी मात्र हो, उदासी की बदली तुम पर से गुजर रही है। क्रोध है- तुम उसके साक्षी मात्र हो सकते हो। यह कहने की कोई जरूरत नहीं है कि "मैं क्रोध में हूं"। तुम तो कभी क्रोध में नहीं होते, तुम्हारे क्रोधित होने का तो कोई उपाय ही नहीं है, तुम सदा साक्षी ही हो। क्रोध आता है और चला जाता है; तुम केवल दर्पण हो। घटनांए घटती हैं, उसमें प्रतिबिंबित होती हैं, आगे बढ़ जाती

हैं। और दर्पण खाली और साफ-सुथरा बना रहता है, प्रतिबिंब कोई खरोंच तक नहीं लगाते उस पर।
साक्षीभाव है तुम्हारे भीतर के दर्पण को खोज लेना। और एक बार तुम उसे खोज लेते हो, चमत्कार घटने शुरू हो जाते हैं।
जब तुम विचारों को केवल देख रहे होते हो, विचार विलीन हो जाते हैं। तब अचानक एक अदभुत मौन उतर आता है, जिसे तुमने पहले कभी नहीं जाना। जब तुम भावदशाओं को साक्षीभाव से देखते हो- क्रोध, उदासी, प्रसन्नता- वे अचानक विदा हो जाती है, और कहीं ज्यादा गहरे मौन की अनुभूति होती है।
और जब साक्षीभाव से देखने को कुछ नहीं होता- तब घटती है क्रांति। तब साक्षीभाव की ऊर्जा स्वयं की ओर मुड़ जाती है, क्योंकि फिर उसे बाधित करने को कुछ नहीं होता; कोई दृश्य, ऑब्जेक्ट नहीं बचता। अंग्रेजी का शब्द आब्जेक्ट सुंदर है। इसका केवल इतना ही अर्थ है कि वह, जो तुम्हें रोके रखता है, तुम्हें ऑब्जेक्ट करता है। जब तुम्हारे साक्षीभाव के लिए कोई वस्तु, ऑब्जेक्ट नहीं बचते, तो सहज ही वह पलटकर स्वयं तुम्हारी ओर ही, स्रोत की ओर ही आ पहुंचता है। और यही है वह बिंदु जहां कोई संबोधि को उपलब्ध होता है।
ध्यान केवल एक मार्ग है। मंजिल सदा बुद्धत्व है, संबोधि है। और इस परम क्षण को जानना सब कुछ जानना है। फिर कोई दुख नहीं है, हताशा नहीं है, अर्थहीनता नहीं है; फिर जीवन एक संयोगमात्र नहीं है। वह इस संपूर्ण ब्रह्माण्ड का हिस्सा बन जाता है- एक अनिवार्य हिस्सा। और एक अदभुत आनंद उमड़ने लगता है कि इस संपूर्ण अस्तित्व को तुम्हारी जरूरत है।
व्यक्ति की बड़ी से बड़ी जरूरत है कि उसकी आवश्यकता हो। यदि किसी को तुम्हारी जरूरत हो, तो तुम कितना सुख अनुभव करते हो। किन्तु यदि पूरे अस्तित्व को तुम्हारी जरूरत हो, तब तुम्हारे आनंद का कोई अंत नहीं है। और इस अस्तित्व को एक छोटे-से घस के फलक की भी उतनी ही जरूरत है, जितनी बड़े से बड़े सितारे की। असमानता का तो कोई प्रश्न ही नहीं है। कोई भी तुम्हारा स्थान नहीं ले सकता। यदि तुम न रहो, तो अस्तित्व भी कुछ कम हो जाएगा- और सदा कुछ कम रहेगा, वह कभी उतना आपूरित नहीं होगा।
यह अनुभूति कि यह संपूर्ण विशाल अस्तित्व को तुम्हारी जरूरत है, तुम्हारे सारे दुख-दर्द दूर कर देती है। पहली बार, तुम अपने घर हो।
भगवान, जिनके लिए चिकित्सीय कारणों से सक्रिय ध्यान अनुकूल नहीं पड़ता, उनके लिए आप कौन-से-ध्यान का सुझाव देंगे।
मैं इसका उत्तर दे चुका हूं।
भगवान, कृपया आप संयोजकों (को-ऑडिनेटर्स) की आवश्यकता के कारण बताएंगे?
जब भी एक से कहीं अधिक व्यक्ति हों, वहां सदा संभावना होती है झगड़े- झंझट की, संभावना होती है असहमति की, परस्पर दरार पड़ने की।
संन्यास एक आंदोलन है। ईसाइयत को संयोजकों की जरूरत नहीं है, क्योंकि
वह कोई आंदोलन नहीं है। वह जीवंत नहीं है। वह मृत है बाकी सभी धर्मों की भांति। उसकी अपनी जड़ बद्धताएं हैं। या तुम उसका अनुसरण करो या तुम अनुसरण मत करो। सहमत होने या असहमत होने को तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। तुम जीसस क्राइस्ट के साथ असहमत नहीं हो सकते- या तो तुम विश्वास रखो, या न रखो। लेकिन संन्यास कोई मृत, जड़ सिद्धांत नहीं है। वह एक प्रवाहमयी प्रक्रिया है, एक आंदोलन जिसमें मैं विश्वास आदि को समर्थन नहीं देता। मैं बढ़ावा देता हूं विचार-शक्ति को, बुद्धिमत्ता के। मैं समर्थन देता हूं संदेह को।
स्वभावतः संयोजकों (कोऑडिनेटर्ज) की जरूरत होती है, क्योंकि यदि आश्रम में बारह व्यक्ति हैं या कम्यून में पांच हजार मित्र हैं, तो हर छोटी-बड़ी बात पर असहमति हो सकती है। संयोजकों का कार्य किया जड़ सिद्धांत को जबरदस्ती लागू कर देना नहीं है; बल्कि उसका कार्य है, हर संभव तार्किकता, सार-तत्व को खुले रूप से स्पष्टतया सामने ले आना।
प्रत्येक व्यक्ति के अपने-अपने सुझाव देने के लिए बुलाना चाहिए और फिर अच्छी तरह से छांटकर, एकमत से उसे ही चुनना चाहिए जो सत्य के अत्याधिक निकट हो। संयोजक तो व्यवस्था के लिए होता है ताकि लोग बुद्धि और विवेक से

साथ हों, किसी विश्वास से नहीं- बुद्धिमत्ता से। विवेक से दबे हुए न हों बल्कि निजता के बढ़ाने वाले हों। मैं अपने संन्यासियों को मात्र विश्वास करने वालों के रूप मात्र में नहीं देखना चाहता।
अमेरिका में चर्च का एक कॉर्डिनल जेल में मेरे पास आया। वह शायद हर रविवार उस जेल में आता रहा होगा, और उसने सुना होगा मेरे बारे में। तो वह खास तौर से मेरे पास आया मुझे बाइबिल देने के लिए।
मैंने कहा, "यह क्या है?"
वह कहने लगा, यह ईश्वर की वाणी है।
मैंने कहा, तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि यह ईश्वर की वाणी है? क्या ईश्वर ने तुम्हें स्वयं बताया है?"
नहीं, वह बोला, यह तो बाइबिल में ही लिखा हुआ है।
मैंने कहा, लेकिन यही कुछ कुरान में भी लिखा हुआ है। यह वेदों में भी लिखा हुआ है। यही गीता में लिखा है। तो कैसे तुम पता करोगे कि ईश्वर के सत्य वचन कौन से हैं? उन सभी का दावा यही है कि "यही हैं ईश्वर के वचन। मैंने कहा, मैं इसे रख लेता हूं। तुम इतने प्रेम से लाए हो। लेकिन ख्याल रहे, यह ईश्वर की वाणी नहीं है। और क्या तुमने पुस्तक को ध्यान से पढ़ा है? तुम कार्डिनल हो, तुम जीवन भर, इस का अध्ययन करते रहे होओगे, धर्मविज्ञान के महाविद्यालयों में परीक्षाएं उत्तीर्ण की होंगी। क्या तुमने कभी ध्यान दिया कि बाइबिल में कम से कम पांच सौ पृष्ठ अश्लील हैं? तुम्हारा ईश्वर तो कोई अश्लील साहित्यकार जान पड़ता है।"
वह कहने लगा अश्लील साहित्य?
मैंने कहा, तुम कहीं भी खोलो पुस्तक और अश्लील लेखन ही मिलेगा और कुछ नहीं। और ऐसा केवल तुम्हारे साथ नहीं है; यही कुछ हिंदुओं के साथ है, मुसलमानों, यहूदियों, सभी के साथ यही है। उनके तथाकथित पवित्र गं्रथ हैं, लेकिन उन्हें कोई ध्यान से देखता-पढ़ता नहीं। धर्मनिष्ठा के कारण प्रत्येक व्यक्ति उसमें विश्वास किए चला जाता है।
कार्डिनल तो थोड़ी उलझन में पड़ गया। वह बोला, मुझे फिर इस बारे में सोचना पड़ेगा।
मैंने कहा, तुम्हें इस पर ध्यान देना ही होगा और तुम्हें विश्वास को साथ लिए ध्यान नहीं देना है, क्योंकि विश्वास अंधापन है। तुम्हें इसे ध्यान से पढ़ना होगा। बुद्धि-तर्क सहित, विवेक पूर्वक। जीसस ने स्वयं के लिए घोषणा कर दी कि वे ईश्वर के एकमात्र पुत्र हैं। अब, यदि तुम्हें रास्ते पर कोई यह दावा करता मिल जाए कि वे ईश्वर का भेजा उसका एकमात्र पुत्र है, तो क्या सोचोगे तुम उस आदमी के बारे में।
उसने कहा, मुझे लगेगा यह आदमी पागल है।
मैंने कहा, "तो तुम जीसस के बारे में अलग ढंग से क्यों सोचते हो? जीसस
के जीवन में एक भी रबाई या विद्वान, या कोई भी बौद्धिक, बुद्धिजीवी वर्ग का व्यक्ति- कभी उनका शिष्य नहीं बना। वे बारह व्यक्ति जो उनके धर्म के अग्रदूत बने, वे मछुआरे थे, लकड़हारे थे, किसान थे, मोची थे- अशिक्षित निम्न वर्ग के।
"जरा गधे पर बैठे व्यक्ति का चित्र अपनी आंखों के सामने लाओ। जीसस गधे
पर बैठा करते थे। जूदीया में यह बात प्रचलित थी। और उनके पीछे चलते थे बारह अनपढ़ व्यक्ति और जीसस दावा करते थे कि वे ईश्वर के भेजे, ईश्वर के एकमात्र पुत्र हैं।
कार्डिनल ने कहा, बस, अब आगे आप कुछ न कहें। आप मेरा विश्वास नष्ट कर सकते हैं। अब यह विचार कल्पना कि जीसस गधे पर बैठे हैं, उनके पीछे बारह अनपढ़ व्यक्ति चले आ रहे हैं- इससे ही छुटकारा पाने में मुझे वर्षों लग जायेंगे। संयोजक का काम है कि वह लोगों की मदद दे किसी भी समस्या के प्रति ज्यादा बुद्धिमान होने में, कि वे ज्यादा सुसंगत हो पाएं। दूसरी बात, उन्हें इस बात के प्रति सजग करें कि यह मेरे या तुम्हारे सच्चे होने का प्रश्न नहीं है, प्रश्न यह है कि सच्चाई क्या है? सत्य किसी का नहीं होता और हम सभी उसे खोजने वाले हैं।
संयोजक का कार्य बड़ा महत्वपूर्ण होता है। उसे बहुत विनम्र होना चाहिए; केवल तभी वह यह कार्य कर सकता है। उसे किसी भी रूप में सत्तात्मक

नहीं होना चाहिए, क्योंकि यदि वह स्वयं ही सत्ताशाली हो जाता है तो वह कैसे लोगों की मदद करेगा विवेकपूर्ण होने में, विकास पाने में।
भगवान, हम सत्तात्मक होने से कैसे बच सकते हैं?
बहुत सरल है यह। जो लोग सत्ता जमाते हैं, वे हीन भावना से पीड़ित होते हैं। अपनी हीन-भावना छिपाने के लिए वे अपनी उच्चता आरोपित करते हैं। वे यह प्रमाणित करना चाहते हैं कि वे "कुछ हैं, कि उनके शब्द सत्य हैं, कि उनकी बात कोई कानूनी नियम जैसी है। लेकिन भीतर कहीं गहरे में वे हीन-भावना से ग्रस्त व्यक्ति होते हैं।
एक कारण यह है कि सारे राजनेता हीन-भावना से पीड़ित होते हैं। जो व्यक्ति किसी हीनभावना से ग्रस्त नहीं होता वह कभी भी राजनीति में नहीं जाएगा। संसार में और भी कई सुंदर कार्य हैं करने को- चित्र बनाना, गाना, नृत्य करना, साहित्य रचना, सुंदर-सुंदर मूर्तियों का निर्माण करना, खुजराहो की सृष्टि करना। बहुत ज्यादा सर्जनात्मकता चारों और उपलब्ध है, किंतु वह उपलब्ध उसी व्यक्ति को होती है, जो हीन-भावना से पीड़ित नहीं है। इसलिए हमें अपने सभी संन्यासियों को स्पष्ट करना होगा कि इस जगत में कोई भी कहीं नीचे या कुछ कम नहीं है, और कोई भी ज्यादा बड़ा या ज्यादा ऊंचा नहीं है। ऐसी सभी धारणाएं बनावटी हैं, नकली हैं और उन्हीं लोगों की बनायी हुई हैं जिनके अपने न्यस्त स्वार्थ हैं। इसी ढंग की धारणा को उन्होंने कई ढंग से निर्मित किया है- कि पुरुष ज्यादा ऊंचा है, स्त्री कुछ कम है। आखिर कौन सी कसौटी रही है इसकी?
पुरुष की अपेक्षा स्त्री ज्यादा समय तक जीवित रह सकती है- करीब पांच वर्ष ज्यादा। स्त्री, पुरुष की अपेक्षा कम बीमार पड़ती है। जब सौ लड़के पैदा होते हैं, लड़कियां नब्बे ही पैदा होती हैं, क्योंकि जिस समय तक वे बच्चे विवाह योग्य होंगे, दस लड़के खत्म हो चुके होंगे। विवाह के समय तक वे सब बराबर की संख्या में नब्बे ही होंगे। लड़कियों में रोगों के प्रति ज्यादा सहनशक्ति, ज्यादा प्रतिरोधक शक्ति होती है। वे आत्महत्या की बातें ही करती हैं, लेकिन कभी करती नहीं। स्त्रियों की अपेक्षा करीब दुगुनी संख्या में पुरुष आत्महत्या करते हैं, और आखिर किस दृष्टि से पुरुष ज्यादा ऊंचा है? लेकिन एक विचार, एक धारणा गढ़नी पड़ी; क्योंकि इससे पुरुष को मदद मिली स्त्री को गुलाम बनाने में।
वह निम्नतर रही है, इतनी निम्न कि चीन जैसे देशों में स्त्री में कोई आत्म-तत्व, कोई अस्मिता ही नहीं है। एक पति अपनी पत्नी को मार सकता है- यह कोई अपराध नहीं होता। यह तो ऐसे है जैसे तुम अपनी कुर्सी तोड़़ देते हो। वह तुम्हारी कुर्सी है, तुमने दाम दिए हैं उसके; तो इसमें अपराध कैसा? और उन्होंने स्त्रियों को यह विश्वास दिला दिया है कि उनमें कोई आत्मा नहीं है; क्योंकि उन्होंने स्त्रियों को शिक्षित होने की कभी स्वीकृति नहीं दी; उन्हें कभी समाज में खुल कर घूमने फिरने की स्वीकृति नहीं दी। स्वभावतः वे तर्क न कर सकीं।
स्त्री के साथ तर्कयुक्त ढंग से बात करना इतना कठिन क्यों होता है? कोई इस पर विशेष ध्यान नहीं देता। यदि तुम स्त्री से वादविवाद करो तो वह चीखने-रोने लगेगी, चीजें पटक देगी; लेकिन वह तार्किक बातचीत न करेगी। और तुम यह तमाम दृश्य देख कर महसूस करोगे कि जो कुछ भी वह कह रही है, उसे मान लेना ही बेहतर है; वरना वह सारा घर सिर पर उठा लेगी, तहस-नहस कर देगी। और पड़ौसी देख रहे हैं, रास्ते पर चलते लोग तुम्हारे मकान के आसपास जमा होने लगे हैं। तो इसलिए यह बेहतर होगा अब तुम सही हो या गलत, इससे कुछ फर्क नहीं पड़ता- यह कह दो कि वह सही है।
लेकिन किसने उसे यह अवस्था तक पहुंचा दिया है? क्योंकि तुमने कभी उसे शिक्षा प्रदान नहीं की, उसे तुमने कभी तर्क-संगतता नहीं सिखायी। जितने बुद्धिमान तुम हो, उतना बुद्धिमान होने की कभी उसे इजाजत नहीं दी; क्योंकि तुम सदा भयभीत रहे।
और तुम ऐसे भय का एक रूप विश्वविद्यालयों में अनुभव कर सकते हो। स्त्रियां सदा पुरुषों की अपेक्षा। प्रथम श्रेणी भी पुरुषों से ज्यादा उन्हें ही प्राप्त होती हैं। हमने ये उच्चता और निम्नता की धारणाएं किन्हीं न्यस्त स्वार्थों के कारण बनायी हैं।

शूद्र निम्न लोग हैं। किसी ने प्रमाणित नहीं किया क्यों? ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता कि ब्राह्मणों को उच्चतर और शूद्रों को निम्नतर क्यों होना चाहिए, लेकिन तुमने हजारों वर्षों से व्यवस्था बनायी है उन्हें अशिक्षित रहने देने की। तुमने उन्हें ऐसे-ऐसे कार्यों में लगाए रखा है, जिसमें बुद्धिमत्ता की कोई आवश्यकता नहीं होती; और तुमने उन्हें कुछ और कार्य करने ही नहीं दिए।
जो आदमी तुम्हारे जूते बनाता है- जूते ही बनाता चला आ रहा है हजारों वर्षों से, पीढ़ी-दर-पीढ़ी। अब बुद्धिमत्ता की आवश्यकता ही नहीं है। वहां कोई चुनौती नहीं, उसे केवल जूते बनाने हैं। ये शोषण करने के कुशल आयोजन हैं।
हमें अपने संन्यासियों को बता देना है कि कोई ऊंचा नहीं है, कोई नीचा नहीं है, और कोई समान भी नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अनूठा है। इस बात को ख्याल में ले लेना है, क्योंकि अगर तुम कहो कि कोई ऊंचा नहीं है और कोई नीचा नहीं है, तो लोग निश्चित ही यह परिणाम निकालेंगे कि प्रत्येक व्यक्ति समान है- जो कि सत्य नहीं है।
समानता की बात मनोवैज्ञानिक रूप से गलत है। प्रत्येक व्यक्ति एलबर्ट आइन्सटीन नहीं हो सकता है, और प्रत्येक व्यक्ति रवीन्द्रनाथ टैगोर नहीं हो सकता है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि वे ज्यादा ऊंचे हैं। क्योंकि यदि रवीन्द्रनाथ... ।
मेरा कुल मतलब यही है कि प्रत्येक व्यक्ति एक अनूठी अभिव्यक्ति है। इसलिए ऊंच और नीच की, समानता और असमानता की सारी धारणाएं ही मिटा देनी हैं और इसके स्थान पर रख देनी है बजोड़पन की नयी अवधारणा।
और प्रत्येक व्यक्ति बेजोड़ ही है।
जरा प्रेमपूर्वक ध्यान से देखो और तुम पाओगे कि प्रत्येक व्यक्ति में अपना कुछ न कुछ ऐसा है, जो किसी और में नहीं है।
जब बेजोड़पन की अनुभूति, अवधारणा कम्यून में व्याप्त हो जाएगी, तो कोई व्यक्ति सत्तावाद को जबरदस्ती कभी न लादना चाहेगा।
भगवान, कम्यून का भविष्य क्या है?
मैं भविष्य की ज्यादा नहीं सोचता, क्योंकि भविष्य जन्मता है वर्तमान से। यदि हम वर्तमान को संभाल सकें, तो हम ने भविष्य की फिक्र ले ली। वह कहीं और से नहीं उत्पन्न होगा, वह विकसित होगा कि इसी क्षण में से। अगर क्षण उत्पन्न होगा, इस क्षण में। यदि यह क्षण सुंदर है, शांत है, आनंदपूर्ण है, तो अगला क्षण अधिक शांत, अधिक आनंदपूर्ण होगा ही।
आज विश्व भर में कम्यून हैं, और वे आनंदमग्न हो रहे हैं वर्तमान में। स्वभावतः जो कुछ भी घटेगा भविष्य में, वह कहीं बेहतर ही होगा। मैं इस धारणा को नहीं मानता जो कि भारत में सदियों से चलायी जाती रही है- कि स्वर्ण युग जा चुका है; कि वह सतयुग में ही था, और फिर पतन शुरू हो गया। और अब हम उस पतन की अंतिम अवस्था में हैं।
एक कारण यह भी है जो भारतीय मन थोड़ा विषदमय है, और उसके पास विकसित होने की, विशालता पाने की, संपन्न होने की, निर्माण कर्ता होने की अंतःप्रेरणा नहीं है। क्यों, किसलिए कुछ करना? कलियुग में यह संभव नहीं है। यदि तुम निराश हो, यदि तुम कुंठित हो, यदि तुम दुखी हो, तो यह तो होना ही था। यह बात, सतत पतनशीलता वाली, हिंदुओं की अवधारणा के अनुकूल पड़ती है- और यह है पक्की नासमझी।
मेरा भरोसा विकास में है।
स्वर्णयुग सदा भविष्य में है।
भगवान, आप सदा परिवर्तनीय और जिनके बारे में कोई पूर्वानुमान न पाया
जा सके, ऐसे सदगुरु हैं। हम कैसे आपके साथ समकालीन होकर इस यात्रा में आगे बढ़ सकते हैं?
इसी ढंग से। गैर-अनुमान वाले और सदा गतिमय, परिवर्तनमय होओ। परिवर्तित होना कभी मत छोड़ो, और न ही कभी गैर-अनुमान वाले होना छोड़ो। और केवल तभी जीवन एक उत्सव बन सकता है। जिस घड़ी तुम अनुमान योग्य हो जाते हो, तुम एक मशीन बन जाते हो।

मशीन पूर्वसूचनीय होती है। वह कल भी वही थी, वह आज भी वही है, वह कल भी वही होगी। तुम उसके बारे में पूर्वानुमान लगा सकते हो; वह गैर-परिवर्तनीय होती है। यह विशिष्ट अधिकार केवल मनुष्य को ही प्राप्त है कि वह हर पल परिवर्तित होता है।
जिस दिन तुम परिवर्तित होना समाप्त कर देते हो, उसी दिन तुम एक सूक्ष्म ढंग से मर चुके होते हो। और दुनिया में बहुत लोग करीब तीस वर्ष की आयु के आसपास मर जाते हैं। फिर भी वे जीए चले जाते हैं- शायद चालीस वर्ष कि पैंतालीस वर्ष और- लेकिन वह मरणोपरांत जीना है। वह सच में जीना नहीं है। तीस वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने जीना छोड़ दिया है। जब तक सांस ही अपने से न रुक जाए, रुकने की कोई जरूरत नहीं है।
प्रथम विश्वयुद्ध में ऐसा हुआ कि पहली बार सिपाहियों की मानसिक आयु
की जांच की गई, और वे बहुत हैरान हुए- औसत मानसिक आयु केवल तेरह वर्ष ही थी। तेरह वर्ष की अवस्था में ही उसका मानसिक रूप विकसित होना समाप्त हो गया था, शरीर विकसित होता चला गया।
मैं चाहूंगा कि तुम्हारी... अगर ऐसा संभव है कि जब शरीर पचास वर्ष का
हो सकता है और तुम्हारी मानसिक आयु तेरह वर्ष की हो सकती है, तो फिर यह क्यों नहीं संभव हो सकता कि तुम्हारा शरीर पचास वर्ष का हो और मानसिक आयु दो सौ वर्ष की हो? यह वही बात होती है। बस तुम्हें जोखिम उठाना पड़ता है- स्थायित्व का, गारंटी का। क्योंकि जहां कहीं भी तुम होते हो, चीजों की गारंटी मिली होती है, सब कुछ आश्वस्त होता है, स्थिर होता है और तुम सोचते हो, क्यों परिवर्तित होने की जोखिम उठाना?
नहीं, जोखिम उठाना प्रामाणिक व्यक्ति के मूलभूत आधारों में से एक बड़ा आधार होना चाहिए। जिस क्षण तुम अनुभव करते हो कि चीजें ठहरती जा रही हैं, तो उनका ठहराव विसर्जित कर देना।
जीवन भर में यही करता आया हूं। मैंने कभी स्वयं को ठहराव में नहीं जम जाने दिया, न ही मैंने साथ वालों को निर्धारित स्थिरता में रहने दिया है। और मेरे देखे यही ढंग है विकास पाने का। प्रत्येक पल, कुछ नया खिलता है तुम में। एकदम अंतिम पल तक्—
एक जेल गुरु का स्मरण हो आया है मुझे, जिसने पूछा था अपने शिष्यों से कि, मेरी मृत्यु की घड़ी आ गयी है, लेकिन मैं थोड़ा उलझन में हूं। मैं कुछ ऐसे ढंग से मरना चाहता हूं, जिस ढंग से पहले किसी और की मृत्यु न हुई हो; क्योंकि मैं नकल करने वाला नहीं बनना चाहता। तुम कुछ सुझाव दो।
किसी ने कहा, यह अच्छा होगा अगर आप खड़़े रह कर मृत्यु का वरण करें।
लेकिन कोई बार कहने लगा, "मैंने सुन है कि एक बार एक जेन गुरु खड़े-खड़े
ही मृत्यु पा गया। तो वह सुझाव रद्द हो गया। लेटे हुए मरने की बात तो निस्संदेह त्या य ही थी। निन्यानबे प्रतिशत लोग बिस्तर में लेटे हुए ही मरते हैं। वह सबसे ज्यादा खतरनाक जगह है।
तुम्हारा पलंग। वहीं तो पिछले हजारों वर्षों से निन्यानबे प्रतिशत लोग मर रहे हैं। बेहतर यही है कि अपना बिछौना जमीन पर ही बिछा दो।
जेन गुरु ने कहा, "एक बात मेरी ख्याल में आयी है। अगर एक आदमी खड़े-खड़े मरा था, तो मैं मरूंगा सिर के बल खड़ा होकर। क्या तुम लोगों ने सुना कि कभी कोई अपने सिर के बल खड़ा मृत्यु के प्राप्त हो गया?
एक शिष्य बोला, "हमने तो कभी ऐसा सोचा तक भी नहीं। यह तो बड़े मजे की बात है।
वह गुरु अपने सिर के बल खड़ा हुआ मृत्यु को प्राप्त हो गया। शिष्य मुश्किल में पड़ गए- अब इस आदमी का करें क्या; क्योंकि यह तो वे जानते थे कि अगर कोई बिस्तर पर लेटे हुए मर जाए तो उसका क्या करना होता है, लेकिन यहां तो यह आदमी सिर के बल खड़ा है।
किसी ने सुझाया कि उनकी बड़ी बहन, जो निकट के ही एक जेन मठ में रहती है, उससे पूछा जाये। क्योंकि यह एकदम नयी स्थिति समाने आ पड़ी थी।
बहन आयी और बोली, बोजो!" वह गुरु का बचपन का नाम था- तुम अपनी शरारत छोड़ते हो या नहीं? अब लेट भी जाओ बिस्तर पर। और बोजो हंस पड़ा। वह अभी जीवित था, वरना कैसे कोई मरणोपरांत भी सिर के बल खड़ा रह सकता है? और वह बोली, सहज सामान्य ढंग से मरो।

बड़ी बहन की बात ठीक से स्वीकार करते हुए वह सहज-सामान्य ढंग से ही मृत्यु को प्राप्त हुआ।
लेकिन यह अच्छा होता है कि सदा कुछ नया घटित होता रहे, काई नयी प्राप्ति हो और व्यक्ति को खुला रहना चाहिए।
मेरे संन्यासियों को विशेष रूप से खुला, ग्रहणशील ही रहना है। इतने खुले कि वे सारा ब्रह्माण्ड भी अपने भीतर संजो सकें। इसकी कहीं कोई सीमा नहीं होनी चाहिए।
भगवान, माला और गैरिक वस्त्रों की विधि हमें एक समग्रता देती है। सामाजिक जड़ताओं से मुक्ति देती है और साहस देती है अकेले हो जाने का। अब, स्वच्छंद संन्यास द्वारा, क्या आप अधिक सूक्ष्म विधियां निर्मित करेंगे इन बातों की उपलब्धि के लिए?
निश्चित ही मैं ऐसी सर्जना कर रहा हूं- क्योंकि अब ठीक समय आया है कि तुम्हारा "ध्यान" हर उस व्यक्ति से तुम्हें अलग बना दे, जो ध्यान नहीं करता है। तुम्हारी शांति, तुम्हारा प्रेम, तुम्हारी करुणा, तुम्हारी मैत्रीपूर्णता इन सबके द्वारा तुम दूसरों से कुछ अलग ही जान पड़ोगे।
माला और वस्त्र तो बहुत पदार्थगत चीजें हैं। अब मैं चाहता हूं कुछ आध्यात्मिक व्यक्तित्व निर्मित हो पाएं- और जो पहले से मौजूद भी हैं। ऐसा बहुत बार हुआ है- मित्रों ने मुझे इसकी खबर दी है। वे कुछ काम करने गए और शायद माला तथा वस्त्र ही उनके काम में आड़े आ गए, तो वे सामान्य वस्त्रों में बिना माला पहले फिर गए, लेकिन उन्हें पहचान लिया गया। दुकानदार कहने लगा, फिर भी कुछ अलग बात तो है आपमें। आप कोई साधारण व्यक्ति नहीं हैं।
और वह बात कहीं अधिक सुंदर होगी कि तुम्हारी पहचान तुम्हारी आध्यात्मिकता द्वारा बने, आत्मतत्व द्वारा बने, तुम्हारा सत्य पहचाना जाए तुम्हारी समग्रता से, तुम्हारे व्यक्तित्व से, तुम्हारी करुणा से, तुम्हारे प्रेमभाव से।
लेकिन मैं यह नहीं कह रहा कि जो मित्र गैरिक वस्त्र पहने रखना चाहते हैं, माला पहने रखना चाहते हैं, वे उन्हें हटा दें। नये संन्यासियों में भी जो माला और गैरिक वस्त्र धारण करना चाहते हैं, वे ऐसा चुनाव कर सकते हैं। और मेरा यह मानना है कि पुराने संन्यासियों में से कोई भी ऐसा नहीं करना चाहेगा। ये करीब-करीब उनका हिस्सा ही बन चुके हैं। उनके बिना वे लगभग नग्न ही अनुभव करेंगे।
और जो नये लोग आयेंगे चाहे वे दूसरे वस्त्रों में ही क्यों न आए, तो जल्दी ही वे गैरिक वस्त्र और माला धारण कर लेंगे। क्योंकि वे इतने बाहरी, इतने अजनबी लगेंगे। और कोई व्यक्ति अजनबी नहीं लगना चाहता। प्रत्येक व्यक्ति परिचित की भांति दिखायी पड़ना चाहता है, आंतरिक वृत में सम्मिलित होना चाहता है।
इसलिए मैंने द्वार खोल दिए हैं ताकि वे लोग आ सकें जो बस सीमित घेरे में ही बैठे हुए हैं, जो सहानुभूति से भरे हुए हैं, जो सदा संन्यासी होना चाहते थे, लेकिन मात्र वस्त्रों और माला के कारण वे भयभीत रहे। इसलिए मैं चाहता हूं कि वे बंद घेरे को छोड़ें और प्रवेश करें मंदिर में। और मंदिर में भरपूर मित्र हैं, गैरिक रंग में रंगे हुए। जब वे घेर से निकल जायेंगे तो फिर कुछ ज्यादा देर न लगेगी उनके रंग जाने में भी।
गैरिक रंग गायब नहीं हो जाएगा। वह तो ज्यादा से ज्यादा फैलेगा। और जो लोग अचानक अपने वस्त्र नहीं परिवर्तित कर सकते, उनके लिए द्वार खोल देने हैं- उन्हें जितनी देर लगानी है लगाने दो, लेकिन उन्हें बाहर क्यों रोकना? उन्हें ध्यान करने दो- यह बात उन्हें साहस देगी।
संन्यास गैरिक ही रहेगा और वह जुड़ा रहेगा माला से। मैंने यह द्वार केवल उनके लिए खोले हैं जो आधा मन, आधी भावनाएं लिए बाहर खड़े हैं। यह अच्छा नहीं लगता, उन्हें अंदर आने देना है। उनके वस्त्रों का रंग जाना कोई ज्यादा मुश्किल न होगा।
भगवान, वैयक्तिता, गुणवत्ता का तथा प्रत्येक व्यक्ति के बेजोड़ होने
के समान अवसरों का- इन सभी बातों की प्रतिष्ठा का आप बड़ा महत्व मानते हैं। अपने कम्यून जीवन में हम इन आधारभूत मूल्यों को कैसे व्यवहार में उतार सकते हैं।

यह कठिन नहीं है। यह तो बात है केवल दृष्टि की, देखने के ढंग की। मुझे याद आता है, एक घर में एक चित्र टंगा था और प्रत्येक व्यक्ति हंसा था उस पर, कहने लगा था, आपने क्यों टांगा हुआ है इसे? इसका कुछ अर्थ नहीं। अंततः उसका मालिक तंग आ गया और उसने चित्र उठाया और डाल दिया तलघर में।
एक दिन एक व्यक्ति आया और वह कहने लगा, "उस चित्र का क्या हुआ जो यहां टंगा था? वह असली पिकासो था।"
इस आदमी ने कहा, "असली पिकासो? हे ईश्वर, मैंने उसे तलघर में डाल दिया है। वह जरूर दस लाख डालर का रहा होगा। वह दौड़कर गया, चित्र ले आया, उसे साफ-सुथरा किया और वापिस टांग दिया।
अब क्या घटित हुआ? चीजों को देखने का ढंग मात्र। वह चित्र असली पिकासो
है या नहीं, बात इसकी नहीं, लेकिन उसकी दृष्टि तुरंत बदल गयी।
प्रत्येक संन्यासी को प्रत्येक दूसरे संन्यासी में एक बेजोड़ व्यक्ति देख लेना है, अस्तित्व की उस प्रामाणिक सर्जना को देख लेना है। और यह सत्य है क्योंकि कोई और व्यक्ति तुम्हारे जैसा नहीं है। ऐसे कोई दो व्यक्ति भी अस्तित्व नहीं रखते जो एक समान हों। यहां तक कि जुड़वां भी बिल्कुल एक जैसे नहीं होते हैं।
इसलिए यह एक तथ्य ही है कि प्रत्येक व्यक्ति बेजोड़ है और प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक सुनिश्चित निजता है, वैयक्तिक्ता है। यह कहना कि व्यक्ति को ऐसा होना चाहिए या कि वैसा होना चाहिए- इस तरह के विचारों को तो हमें छोड़ ही देना चाहिए और इसके स्थान पर हमें ऐसा दर्शन प्रतिष्ठित करना चाहिए, कि कोई व्यक्ति जैसा है, वैसा ही सुंदर है। होना चाहिए, का तो कोई प्रश्न ही नहीं, क्योंकि हम कौन होते हैं किसी पर कोई "चाहिए" आरोपित करने वाले? यदि अस्तित्व तुम्हें उसी भांति स्वीकार करने को राजी है जैसे कि तुम हो, तो मैं बीच में आने वाला कौन?
बस, दृष्टि का रूपांतर भर- और यह बड़ी सीधी-सरल बात है। इसे एक बार तुम्हारी दृष्टि में आ जाना है कि प्रत्येक व्यक्ति बेजोड़ है, प्रत्येक व्यक्ति वैसा है जैसा कि वह है और उसे वैसा ही होना है जैसा कि वह है। स्वीकृत होने के लिए उसे किसी और जैसा होने की कोई जरूरत भी नहीं है। वह स्वीकृत हो ही चुका है। और इसे ही मैं कहता हूं वैयक्तितका का, निजता का सम्मान करना, व्यक्तियों का सम्मान करना- उसी रूप में जैसे कि वे हैं। संपूर्ण मनुष्य जाति इतनी प्रेममयी और आनंदपूर्ण हो सकती है यदि हम लोगों को उसी भांति स्वीकृत कर सकें जैसे कि वे हैं, लेकिन हम ऐसा नहीं कर पाते।
पत्नी पति को जांचती रहती है, सताती रहती है, हर संभव तरीके से कि उसे कैसा होना चाहिए। पति सता रहा है पत्नी को कि उसे कैसा होना चाहिए। दोनों सता रहे हैं, बच्चों को कि उन्हें कैसा होना चाहिए
मैं एक परिवार के साथ ठहरा हुआ था, और मैंने पूछा एक बच्चे से जो कि मेरे करीब ही बैठा हुआ था, कि जब तुम बड़े हो जाओगे तो क्या बनोगे?
वह बोला, यह तो बड़ी कठिन बात है। मैं तो टुकड़ों में बंट जाऊंगा।
मैंने कहा, क्या कहते हो?
वह बोला, मेरी मां चाहती है कि मैं डॉक्टर बनूं, मेरे पिता मुझे इंजीनियर बनाना चाहते हैं, मेरे अंकल चाहते कि मैं अभिनेता बनूं और किसी को फुर्सत ही नहीं कि मुझ से पूछ ले कि मैं स्वयं क्या बनना चाहता हूं। मैं तो बस बढ़ई बनना चाहता हूं क्योंकि मुझे लकड़ी बहुत भाती है, और खेलना चाहता हूं लकड़ियों के टुकड़ों से, और बहुत-सी चीजें बनाना चाहता हूं लकड़ी द्वारा। लेकिन मैं यह सब कह नहीं सकता क्योंकि वे सब हंसेंगे कि, तुम मूढ़ हो। हम डॉक्टर बनने की, अभिनेता या कि इंजीनियर बनने की कह रहे हैं- और तुम बढ़ई बनने की कहते हो।
लेकिन वह लड़का अगर डॉक्टर बन जाए तो दुखी रहेगा। अगर इंजीनियर बन जाए
तो भी दुखी रहेगा।
मैंने सुनी है एक बड़े शल्य चिकित्सक की कथा- विश्व प्रसिद्ध शल्य चिकित्सक, वह रिटायर हो रहा था। वह पचहत्तर वर्ष का था, फिर भी कोई अन्य युवा डॉक्टर उसके मुकाबले का नहीं था- पचहत्तर वर्ष की अवस्था में उसके हाथ लोहे के भांति मजबूत थे।

वह रिटायर हो रहा था, और उसके सभी मित्र वहां मौजूद थे; बड़े नाच-गान, खान-पा, और उत्सव की धूम थी। लेकिन वह चुपचाप उदास-सा एक कोने में बैठा हुआ था। किसी ने पूछा उससे, "यह उदास होने का वक्त है? हर कोई यहां पार्टी का आनंद ले रहा है, आप भी आकर इसका आनंद उठाएं।
वह बोला, मेरे लिए यह समय उदास होने का है। मैं कभी भी सर्जन नहीं बनना चाहता था। सर्जन होने से अपनी सारी जिंदगी मैंने बरबाद कर दी। चाहे मैं संसार का सबसे बड़ा सर्जन बन गया, लेकिन इस बात ने मुझे कहीं कोई संतुष्टि नहीं दी। मैं तो नृत्यकार बनना चाहता था और अगर मैं मामूली नाचने वाला भी बन जाता फिर भी वह बात दिल को ज्यादा संतोष देने वाली होती।
इसलिए लोगों को वही रहने दो जो वे हैं। जो भी वे बनना चाहते हों उसमें उन्हें मदद दो। कभी कुछ आरोपित मत करो। और यही होता है मनुष्य-जाति के प्रति असली सम्मान।

फिर पत्तों की पाजेब बजी
पांचवां प्रवचन

अपनी वास्तविकता को पा लेना स्वर्ग है

आज के मनुष्य के लिए आपका क्या संदेश है?

मनुष्य-जाति का इतिहास हजारों वर्षों का है और मनुष्य ने कुछ गलत विचार, कुछ गलत किस्म की धारणाएं, अंधविश्वास बना लिए हैंः और वही बातें उसकी हड्डी, रक्त मांस-म जा बन गयी हैं।
यह बात बिल्कुल भुला ही दी गयी है कि एक बच्चा न तो हिंदू के रूप में पैदा होता है, न ही मुसलमान के रूप मग पैदा होता है, न ही भारतीय के रूप में और न ही अमेरीकी के रूप में। हम हजारों वर्षों की जानकारियां बच्चों में भर देते हैं, उन्हें उन में संस्कारित कर देते हैं, और नष्ट कर देते हैं उनकी निर्दोष्ति। और जिस क्षण कोई बच्चा अपनी निर्दोष्ति खो देता है, वह अर्थहीन जीवन जीने लगता है। वह स्वयं नहीं हो सकता, वह बिल्कुल भूल ही जाता है कि वह कौन है, और वह ऐसी विचारधाराओं द्वारा भर दिया जाता है, जो उसकी अपनी होती ही नहीं।
सह स्कीजोफ्रेनिया, यह खंडित होने की स्थिति ही मनुष्य-जाति की मौलिक समस्या हैः और मेरा मौलिक संदेश यही हो सकता है कि इस स्थिति के स्वरूप को, इसके पूरे वातावरण को मिटा दो। प्रत्येक बच्चे को अपनी निर्दोष्ति में ही विकसित होने देना है। कुछ भी आरोपित नहीं करना है, उसे कुछ बनाने की कोशिश मत करोः केवल तभी इसकी संभावना है कि जो उसकी अपनी क्षमता है वह उसी के अनुकूल हो पाएगा। और केवल तभी कोई व्यक्ति आनंदपूर्ण हो पाता है जब वह स्वयं रूप हो जाता है। और कोई उपाय नहीं। और सभी उपाय कुंठा, दुख और नर्क की ओर ले जाते हैं।
मेरे देखे केवल एक ही स्वर्ग है वह है किसी प्रभाव के, किसी हस्तक्षेप
के बिना अपनी वास्तविकता को पा लेना। और केवल एक ही नर्क है- मां-बाप, समाज धर्म द्वारा या कि पंडित-पुरोहित, शिक्षकों और राजनेताओं के प्रभाव में आकर अपनी वास्तविकता, अपनी निजता खो देने की स्थिति। वे बच्चों को अपनी अकड़ में ले लेते हैं- और क्योंकि बच्चा असहाय होता है, वह विद्रोह नहीं कर पाता। तो स्वभावतया उसे नहीं बातों के पीछे चलना होता है जिनके लिए उसे कहा जाता है।
सारी मनुष्य-जाति एक नर्क में जी रही है। कोई आनंद नहीं, कोई प्रेम नहीं, कोई खिलावट नहीं और उसका सीधा-साफ कारण है कि हम एकदम शुरू से ही कुछ विभाजित कर देते हैं। हम सत्य को दबाने की कोशिश करते हैं और असत्य को आरोपित करते हैं। मेरा संदेश हैः बहुत समय हुआ, अब तो यह सब बंद करो।
क्या आप प्रेस के लिए कोई संदेश देना चाहेंगे?
जरूर। प्रेस को पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिए। और प्रेस की स्वतंत्रता में शामिल है, टेलीविजन, रेडियो और पूरे प्रसार माध्यम। इन पर सरकार का नियंत्रण नहीं होना चाहिए, क्योंकि सरकार के पास सारी सत्ता होती है और व्यक्तियों के पास कोई सत्ता नहीं होती। तो फिर उनकी लड़ाई कौन लड़ेगा? और सरकार से उन्हें बचाएगा कौन?
मेरा यह मानना है कि राजनेताओं की अपेक्षा प्रेस अधिक महत्वपूर्ण है। लेकिन उसका महत्व केवल तभी बनता है यदि उसे स्वतंत्रता मिली हुई हो। जैसे कि इस देश में प्रेस ने इसके विरुद्ध कोई बड़ी आवाज नहीं उठायी कि टेलीविजन सरकार के अधीन नहीं होना चाहिए, कि रेडियो पर शासन का अधिकार नहीं होना चाहिए। वे लोक-संस्थाएं बन जानी चाहिए। तब प्रेस उन व्यक्तियों की लड़ाई लड़ कसती है कि जिनके पास कोई सत्ता नहीं है। बल्कि प्रेस उन्हें बड़ी शक्ति दे सकती है।
मैं स्वयं संपादक रह चुका हूं- और उस पद से त्यागपत्र दे दिया। क्योंकि हर बात सरकार के पक्ष में की जाती थी। सत्य कोई कसौटी नहीं है। बेचारे व्यक्ति की कोई सुरक्षा नहीं। सरकार पहले से ही इतनी शक्तिशाली है, फिर प्रेस भी सरकार के साथ शामिल हो जाती है। यह भी एक कारण रहा कि

मैंने त्यागपत्र दे दिया। मेरा कहना था, मैं तो वही कहूंगा जो मुझे सत्य लगेगा, फिर चाहे वह सरकार के या किसी के भी विरोध में पड़े।
और दूसरी एक बात जो मैंने देखी वह यह थी कि उन्हें अच्छी खबरों में कोई रस नहीं था। उन्हें रस है केवल बलात्कारों में, कत्ल में, तलाकों में कि सनसनीखेज सूचनाओं में। और मैंने कह दिया उनसे कि ये बातें बड़ी खतरनाक हैं। लाखों व्यक्ति होते हैं और बलात्कार तो केवल एक ही व्यक्ति करता है- और उसकी बात छपकर खबर बन जाती है। बाकी लोगों के बारे में क्या?
मैंने उस प्रेम के मालिक से कहा, कि फ्रांस में एक आदमी ने अपना अपराध स्वीकार करते हुए बताया है कि उसने एक ऐसे अजनबी का कत्ल किया जिसे पहले उसने कभी देखा भी न था। अजनबी बैठा हुआ था समुद्र तट पर और उसने पीछे से जाकर मार दिया उसे। मारते समय भी उसने उसे देखा तक नहीं। कोई शत्रुता नहीं थी, लेकिन वह प्रसिद्ध होना चाहता था कि सभी पत्र-पत्रिकाओं में उसका चित्र छप जाएः और वह अपने उद्देश्य में सफल हो गया। तो बुराई को महत्व देकर तुम बढ़ावा देते हो बुराई को। व्यक्तियों की चेतना ऊंची उठाने की बजाय, उन्हें कुछ ठीक सिखाने की बजाय, तुम उनकी निम्नतर प्रवृत्तियों का अनुसरण ही करने लगते हो। तुम मनुष्य-जाति की सेवा नहीं करते। तुम विषाक्त कर देते हो मनुष्य-जाति को। मैं ऐसा नहीं कर सकता। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कोई आदमी आत्महत्या कर लेता है। संसार के चार अरब लोगों में अगर कोई आदमी आत्महत्या कर लेता है तो उससे क्या? क्या तुम्हें और कोई ठीक खबर जैसी कोई खबर नहीं मिलती?
वे चार अरब लोग और हजारों बातें कर रहे होंगे, कोई तो सुंदर चित्र भी बना रहा होगा। ऐसी ही कोई बात छपनी चाहिए मुख्य पृष्ठ पर। लेकिन तुम्हारा पहला पृष्ठ तो अपराधियों और राजनेताओं को समर्पित होता है, जो वस्तुतः एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इस मैं इस भांति परिभाष्ति करता हूं- सफल अपराधी राजनेता बन जाते हैं और असफल राजनेता अपराधी बन जाते हैं, इसलिए कुछ ज्यादा अंतर नहीं है दोनों में।
राजनेताओं को डालना चाहिए चौथे पृष्ठ पर, और उन्हें बड़े महत्व का स्थान नहीं मिलना चाहिए। कौन उन्हें बड़ा बना देता है? एडोल्फ हिटलर मानसिक रूप से अविकसित था, वह कोई परीक्षा उत्तीर्ण न कर सका। कला अकादमी ने, आर्किटेक्चर अकादमी ने, उसे लेने से इनकार कर दिया। जहां कहीं भी उसने आवेदन पत्र दिया, वह असफल हो गया, प्रवेश-परीक्षा में ही और वही विश्व के बड़े से बड़े नेताओं में एक नेता हो गया। किसने उसे इतना बड़ा बना दिया? यदि प्रेस ने मात्र उसकी अपेक्षा की होती, तो दूसरा विश्वयुद्ध न होता। एडोल्फ हिटलर से ज्यादा तो प्रेस जिम्मेदार है इसके लिए।
जीवन में गुलाब और कांटे दोनों हैं। लेकिन कांटों पर इतना ज्यादा ध्यान क्या देना? लोगों तक गुलाबों को पहुंचाना होगा। यह एक मनोवैज्ञानिक क्रांति होगी। अगर कोई रोज-रोज बुराई के बारे में पढ़ता रहे तो धीरे-धीरे वह अनुभव करने लगेगा कि बुराई जीवन का एक ढंग है। फिर धीरे-धीरे उसे लगने लगेगा कि यदि वह भी कोई अपराध कर ले तो ऐसी कोई बड़ी बात न होगी। हर कोई तो यह कर रहा है और अच्छाई की उपेक्षा की जाती है। खबरें पढ़ने वाले समझने लगते हैं कि अच्छाई कहीं घटित ही नहीं होती। क्योंकि उसकी कोई खबर नहीं मिलती। उन्होंने ए कहावत भी बना ली है कि नो न्यूज इज गुड न्यूज- कि अच्छी खबर कोई खबर नहीं। इसे बदल देना चाहिएः बुरी खबर कोई खबर नहीं है। केवल अच्छी खबर ही खबर कहला सकती है।
केलिफोर्निया के विश्वविद्यालय में उन्होंने एक वर्षीय सर्वेक्षण किया, कि बुराई क्यों घटती-बढ़ती है। कभी यह बढ़ोत्तरी पर चलती जाती है, कभी नीचे घटाव पर आ जाती है? और वे हैरान हुए यह जानकर कि जब बाक्सिंग मैच होते हैं, तो बुराई सामान्य तल से तेरह प्रतिशत ऊंची बढ़ जाती है; और हफ्ते भर तक तो उसकी वही स्थिति बनी रहती है, फिर कहीं जाकर सामान्य तल पर आती है। बलात्कार होते हैं, कत्ल होते हैं आत्महत्याएं होती हैं। यदि बाक्सिंग तेरह प्रतिशत बढ़ा देती है अपराधों को, तो बाक्सिंग बिल्कुल समाप्त कर देनी चाहिए। वस्तुतः वही अपराधी है। और किसी पत्र-पत्रिका में बाक्सिंग के बारे में कुछ भी प्रकाशित नहीं होना चाहिए। यह एक भयंकर बात है लेकिन

यह भयंकरता लोगों को एक ख्याल दे देती है कि तुम भी भयंकर हो सकते हो। तो भयंकर होने में कुछ हर्ज नहीं।
प्रसार माध्यम को और बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। पहली बात शासन
से मुक्ति दूसरी बात हैः बुराई की उपेक्षा करना, जो अच्छाई की तुलना में बहुत छोटी है। और तीसरी बात है, प्रत्येक समस्या पर खुले रूप से बहस करने के लिए एक मंच का निर्माण करने की। और पूरा प्रसारण माध्यम इसमें शामिल हो सकता है, इस खुली बहस में भाग ले सकता है। यह कुछ मानवीय बात होगी; यह मानवीय नहीं कि एक हाथ में तलवार रहे और दूसरे हाथ में कुरान और लोगों से कहते रहो, हां, तुम चुनाव कर सकते हो। यह तो कोई तर्क संगत बात न हुई। इससे तो प्रमाणित नहीं होता कि कुरान सही है। इससे एक ही बात साफ हो जाती है कि आदमी मरना नहीं चाहता।
चीजें बदल चुकी है। ईसाई भी आ पहुंचे हैं एक हाथ रोटी और दूसरे हाथ में बाइबिल लिए। लेकिन किसी की भूख मिटा देना, बुद्धिमत्ता करना तो न हुआ, यह चुनने का अधिकार देना न हुआ कि क्या सही है और क्या गलत है; कि बाइबिल गलत है या सही है, भूख इसका फैसला नहीं कर सकती।
प्रेस के ऊपर बड़ी जिम्मेदारी है- और मनुष्य-जाति भी परिपक्व हुई जाती है। ये तो बड़े पिछड़े तरीके हैं निर्णय लेने के कि कौन सही है। हमारे पास बुद्धि है, हम तर्क संगत बातचीत कर सकते हैं। हम जा सकते हैं सूक्ष्म से सूक्ष्म तर्क तक। और सारी प्रेस उपलब्ध रहे। और उस तर्कसंगत विवेकशील बातचीत द्वारा ऐसा निर्णय, जो ज्यादा सर्व सम्मान होगा, न मेरा होगा, न और किसी का, स्वयं निकल जाएगा।
न्यूज मीडिया- प्रसार माध्यम, देश की आत्मा होते हैं। अभी ऐसा नहीं है। यह केवल सनसनी ही फैलाता है। यह केवल पूर्ति कर देता लोगों की अपनी इच्छाओं की ही। अर्थशास्त्र में उनके पास एक अपना सिद्धांत है, कि जहां कहीं मांग है वहां उसकी पूर्ति का साधन भी है। न्यूज मीडिया वही कर रहा है। जिस किसी चीज की भी लोग मांग करते हैं, चाहे वे मांग करें अश्लीलता की, तो उन्हें मुहैया करा दो अश्लीलता, क्योंकि खरीद बेच का बाजार मौजूद है। मैं यह नियम बदलना चाहता हूं। मैं उसको उलटा करना चाहता हूं। मैं कहना चाहता हूं कि जहां कहीं कुछ उपलब्ध कराया जाता है, मांग निर्मित होगी ही। मांग की पूर्ति मत करते जाओ क्योंकि मांग उठ रही है समाज के निम्नतम वर्ग-तल से। समाज के उच्चतम बौद्धिक वर्ग से पूर्ति करो और मांग उत्पन्न करा। और मैं जानता हूं कि ऐसा होता है। सारे अर्थशास्त्रीय सिद्धांतों के विरुद्ध भी ऐसा घटित होता है।
जब कार इत्यादि नहीं थी, तो कोई मांग नहीं कर रहा था इसकी। जैसे ही कार मार्केट में आयी, कार की सप्लाई पहले हो चुकी थी- और अब लाखों लोग करों के मालिक हैं। यदि वस्तुओं के संबंध में ऐसा घटित हो सकता है तो फिर विचारों के संबंध में ऐसा क्यों नहीं घटित हो सकता?
इसलिए न्यूज मीडिया के लिए मेरा संदेश है कि तुम जिम्मेदारी नहीं निभा रहे हो। तुम्हें मानवता की कोई चिंता ही नहीं है। लोग जो कुछ चाहते हैं वही कुछ उन्हें दिलाकर तुम तो उनके लिए अनुचित कार्य कर रहे हो। तुम्हें तो लोगों के लिए वास्तविक अर्थों में विश्वविद्यालय होना चाहिए। क्या आप अपने आलोचकों के लिए कुछ कहना चाहेंगे?
मुझे प्रिय है आलोचना; लेकिन मुझे अपने कोई आलोचक दिखाई नहीं पड़ते। उन्होंने मेरी किताबें पढ़ी नहीं हैं, उन्हें नाम तक मालूम नहीं मेरी किताबों के, वे सच्चे आलोचक नहीं हैं। वे तो बस इधर-उधर की, सुनी-सुनाई बातों की मानकर चल रहे हैं और मेरे देखने में एक भी ऐसी आलोचना नहीं आयी जो कि सच में ही मेरे वक्तव्य पर आधारित हो। पहली बात तो यह है कि वे वक्तव्यों को तोड़-मोड़ देते हैं और फिर वे उनकी आलोचना करते हैं। यह तो एकदम अपराध हुआ और किसी कथन का रूप बिगाड़ देना बहुत आसान होता है। बस एक शब्द हटा दिया, या कि बिना संदर्भ के कुछ वाक्यों को बता दिया और फिर करने लगे उसकी आलोचना।
जैसे कि मेरी किताब संभोग से समाधि की ओर कामवासना के विरोध में है। उसमें है काम-ऊर्जा के रूपांतरण की बात। और मेरे आलोचक मेरी आलोचना कर रहे हैं कि मैं बता रहा हूं कामवासना की बातों। यह तो कोई आलोचना न हुई। ये लोग

कायर हैं। यहां तक कि मेरी इस किताब के विरोध तक लिख दी गयी हैं। और मैंने अपना समय बेकार किया है उन्हें पढ़कर में। उन्होंने एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं दिया है। आलोचना करना स्वस्थ है; लेकिन आलोचना केवल तभी स्वस्थ होती है जब तुम पहले ही समझ लेते हो कि व्यक्ति कह क्या रहा है, और फिर बाद में तुम आलोचना करते हो। और यही परंपरागत पूर्वीय ढंग रहा है। अगर गौतम बुद्ध वेदों की आलोचना करते हैं, तो पहले वे उद्धरण देते वेदों का; ठीक उसी भांति जैसे कि वे हैं। वस्तुतः वे उसमें निहित सभी लक्ष्य, अर्थ-तत्व सामने लाते हैं, जिसने उन सूत्रों को लिखा शायद वह भी न जानता हो। यदि तुम पहला भाग पढ़ो, तो तुम हैरान हो जाओगे कि वे आलोचना कैसे करेंगे। और वे वेदों का श्रेष्ठ सामने ले आते हैं। उन्हें उच्चतम स्वर्ण-शिखर तक पहुंचा देते हैं और फिर वे करते हैं आलोचना आरंभ।
यही सही ढंग होता है आलोचना का, और पूरब में सदियों-सदियों से यही ढंग अपनाया जाता रहा है, लेकिन अब यह ऐसी बात नहीं रही। मैं लोगों की आलोचना करता रहा हूं। लेकिन संदर्भ से अलग कर के कभी नहीं और कभी भी उनके वक्तव्यों को तोड़ा-मरोड़ा नहीं। मेरा पहला काम होता है जितने सुंदर ढंग से हो सके उनके वक्तव्यों की व्याख्या कर दूं। और फिर उसकी आलोचना करूं। तब वह किसी प्रतिभाशाली का रचनात्मक कार्य होता है। अन्यथा तथाकथित आलोचक मात्र भौंकते कुत्तों की तरह हैं और हाथी अपनी चाल चलता जाता है, उनकी ओर देखे बिना ही।
मैंने देखा कि मेरे बारे में हजारों झूठ बोले गए हैं और उसे आलोचना माना जाता है। वह आलोचना नहीं है। बस अचानक अकल्पनीय रूप से वे किसी भांति मेरा वक्तव्य अपने हिसाब से बिठा लेते हैं- जनता अनपढ़ है- और फिर यह बहुत आसान हो जाता है। क्योंकि उन्होंने पहले से ही वक्तव्य में छिद्र बना लिए होते हैं। फिर वे उसकी खूब आलोचना कर सकते हैं। और शाबासी दे सकते हैं स्वयं को, कि यह व्यर्थ है।
पूरब में हमारे पास एक विशाल परंपरा रही है। जब शंकर, मंडन मिश्र के पास आए- मंडन मिश्र अपने समय के बड़े दार्शनिक में से एक थे, वृद्ध थे, शंकर के पिता की आयु के थे। और शंकर थे केवल तीस वर्ष के- वे वहां आए और गांव के बाहर जो लड़कियां कुएं से पानी भर रही थीं उनसे पूछा कि क्या मुझे मंडन मिश्र के घर का रास्ता दिखा सकती है? सारी लड़कियां हंस पड़ी।
वे बोली! कोई जरूरत नहीं। बस आप नगर के भीतर चले जाइए। जहां आप देखेंगे कि तोते तक भी वेद-मंत्रों का गान गा रहे हैं, वही होगा मंडन मिश्र का घर। और उन्होंने देखा कि जहां मंडन मिश्र रहता था, उसके अहाते के आसपास बहुत प्रकार के पक्षी वेदों-उपनिषदों के सुंदर-सुंदर मंत्रों का उच्चारण कर रहे थे। अपनी पूरी भारत-यात्रा के दौरान वे थोड़े विचलित हुए। लेकिन वे आगे बढ़े और मंडन मिश्र के पैर छू लिए क्योंकि वे उनके पिता की उम्र के थे। और उनसे कहने लगा कि मैं आप से तार्किक वाद-विवाद करने आया हूं। मैं आपके दर्शन-सिद्धांतों से सहमत नहीं हूं। मंडन बोले, बिल्कुल ठीक है। मेरा पूरा आशीर्वाद है। तुम प्रारंभ करो विवादः और मैं प्रार्थना करूंगा कि तुम्हारी बात ही ठीक उतरे। तुम युवा हो, मैं लगभग समाप्त ही हूं। हारूं या कि जीतूं उससे कुछ फर्क नहीं पड़ता। महत्व इसी का है कि सत्य युवा-पीढ़ी के हाथ में होना चाहिए। यदि तुम अपना सत्य सिद्ध करके दिखा सकते हो, तो भला मुझ से ज्यादा और कौन प्रसन्न होगा। यह वाद-विवाद का, आलोचना का संस्कृतिशील ढंग है, लेकिन मंडन बोले, एक कठिनाई है, तुम्हें निर्णायक खोजना होगा जो कि निर्णय देगा।
शंकर ने कहा, निर्णय देने को मैं आपकी पत्नी को चुनना चाहूंगा, वे ही बनें निर्णय कर्ता।
यह होती है मानवता। अब इसकी हर संभावना है कि पत्नी मंडन के जीतने में मदद देगी। लेकिन वैसा वातावरण न था, वैसा युग न था। वह जीतने में मदद देगी सत्य को। वह सत्य किससे संबंध रखता है, इससे कुछ फर्क नहीं पड़ता। और जब वह हो जाती है न्याय कर्ता निर्णय कर्ता तो फिर मंडन मिश्र उसके पति नहीं रहते। वह तो वाद-विवाद में भाग लेने वाले एक प्रतियोगी मात्र हो जाते हैं। वाद-विवाद छह महीने तक चला। दोनों ही दिग्गज थे, प्रकांड पंडित थे। अंततः मंडन मिश्र की पत्नी भारती ने घोषणा कर दी- शंकर आधे विजेता हो गए

हैं। यह बात बड़ी अजीब थी। कोई व्यक्ति आधा नहीं जीतता। शंकर बोले, मैं समझा नहीं बात।
वह बोली, समझ में आ जाएगी। मैं मंडन की पत्नी हूं। जब तमक तुम मुझे भी
न हरा दो, तब तक तुम्हारी जीत आधी ही रहेगी। इसलिए अब मंडन निर्णायक होंगे और मैं तुम्हारे सामने प्रतियोगी रहूंगी। यदि तुम मुझे भी हरा दो, तो हम दोनों तुम्हारे शिष्यों हो जाएंगे।
शंकर बहुत उलझन में पड़ गए कि अब क्या करें। तर्क तो बिल्कुल ठीक था कि भारत में पत्नी को पति का आधा भाग, अधाऋगिनी माना ही जाता है। इसलिए केवल पति को जीतने से तुम्हारी जीत नहीं मानी जा सकती और तुम विजेता नहीं कहला सकते, तुम्हें पत्नी को भी जीतना होगा। और उन्हें थोड़ा भय भी हुआ। क्योंकि वे उस स्त्री को देख रहे थे छह महीनों से, जो पति को भी संकेत दे देती थी कि वह कहां गलती करने वाले हैं। और पहली बात जो उसने शंकर से पूछी वह थी कि, आपने आध्यात्मिकता की बहुत बातें की हैं, ब्रह्म की, ईश्वर की, वह सब तो समाप्त हुआ। मैं आपसे कामवासना के संबंध में पूछना चाहती हूं।
शंकर ब्रह्मचारी थे, उन्होंने कहा, मैं कामवासना के विषय में कुछ नहीं जानता।
तब वह कहने लगी, फिर तो जीत अधूरी ही रहेगी। आप स्वयं को मंडन का विजेता घोषित नहीं कर सकते जब तक कि आप भारती को भी न जीत लें।
शंकर बोले, मुझे छह महीने का समय दें, ताकि मैं कामवासना के संबंध में कुछ जान लूं और फिर आऊं।
उतना समय उन्हें दे दिया गया।
यह आलोचना का, वाद-विवाद का संस्कृतिशील ढंग हुआ। और जगत के प्रसार-माध्यम को इतने ऊंचे स्तर तक उठ जाना चाहिए कि वह तमाम उद्देश्यों के लिए मंच बन जाए। यहां तक कि अलोकप्रिय उद्देश्यों के लिए भी। यह एक अजीब तथ्य है कि जो आज अलोकप्रिय उद्देश्य है वही कल लोकप्रिय उद्देश्य बन सकता है। मार्क्स के जमाने में, कम्यूनि म एक अलोकप्रिय उद्देश्य था। आज आधा जगत कम्यूनिस्ट है।
प्रसार-माध्यम को बगैर किसी पूर्वाग्रह के ऐसी सुविधाएं दी जानी चाहिएः और विशेषकर भारतीय पत्रकरिता इस दृष्टि से बहुत पीछे है। अमरीका में मैंने प्रसार-माध्यम की शक्ति देखी है। यहां तक कि सरकार भी भयभीत थी। वे मुझे मार सकते थे, जब तक वे चाहते मुझे सता सकते थे लेकिन सारे प्रसार-माध्यम, सारा मीडिया उनके पीछे लगा था। और मीडिया स्वतंत्र है, कहीं शासन काट-छांट नहीं करता- और मीडिया के पास कुछ खास रियायतें हैं, कोई शर्तें नहीं लादी जाती हैं उस पर। और उन्होंने बारह दिनों के भीतर मेरा जेल से छूटना संभव कर लिया, बिल्कुल गैरकानूनी था; कि बिना वारंट के, बिना कोई कारण बताए, बारह भरी हुई बंदूकों ताने मुझे कैसे गिरफ्तार किया गया? लेकिन मीडिया ने यह सारी खबर पूरे संसार में पहुंचा दी। और तब एक सरल, निर्दोष व्यक्ति जिसके हाथ में कोई हथियार न था- संसार के सर्वाधिक शक्तिशाली देश से कहीं अधिक शक्ति पूर्ण हो गया।
जहां कहीं भी मैं उन बारह दिनों में था वे वहीं पहुंच जाते थे, उनके हेलीकाप्टर्स, उनके कैमरे, उनके फोटोग्राफर्स सभी जेल के आसपास ही आ पहुंचते। जेलर भयभीत थे। एक जेलर ने मुझसे कहा, ऐसा तो कभी नहीं हुआ। ये इतने सब लोग, ये क्यों इतनी रुचि ले रहे हैं आप में?
मैंने कहा, उन्हें मुझमें रुचि नहीं है। उन्हें रुचि है तुम लोगों की गैरकानूनी हरकतों में- और वे इसे पूरी दुनिया को बता देंगे, और आखिर कब तक तुम मुझे अंदर बंद किए रख सकते हो? एक बार मैं बाहर हुआ, तो प्रेस को एक शब्द भर कहने की देर है कि तुरंत वह खबर संसार में हर जगह जा पहुंचेगी। तुम लोगों के पास सारी शक्तियां हैं, मेरे पास कोई शक्ति नहीं। लेकिन न्यूज मीडिया तुम्हारे परमाणु हथियारों से ज्यादा शक्तिवान है। तुम इन लोगों से भयभीत क्यों हो? यदि तुम मुझे मार डालना चाहते हो तो मार डालो, यदि तुम मुझे तंग करना चाहते हो, तो तंग कर लो। लेकिन तुम जानते हो कि मीडिया मौजूद है, तुम कुछ नहीं कर सकते।
उन बारह दिनों में मीडिया सरकार से अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ। और मीडिया के कारण ही उन्हें मुझे कोर्ट में लाना पड़ा वरना कोई कारण न था। वे

मुझे मेरे अटार्नियों से फोन द्वारा बात भी नहीं करने देते थे, वे कहते कि अटार्नी आपको फोन कर सकते हैं लेकिन आप फोन नहीं कर सकते उन्हें। और अटार्नी के पास कोई उपाय न था यह जानने का कि मैं हूं कहा? वे मुझे जबरदस्ती जाली नाम- डेविड वाशिंग्टन- के नाम से हस्ताक्षर कराना चाहते थे। अब जो व्यक्ति फोन-काल सुनता था वह कह देता कि भगवान यहां हैं ही नहीं। लेकिन अगली सुबह सारे अमेरिका में यह खबर फैल गयी थी कि अगर कोई फोन द्वारा भगवान से संपर्क करना चाहता है तो वह संपर्क करे डेविड वाशिंग्टन से; कि उन्हें इसी नाम से हस्ताक्षर करने को मजबूर किया जा रहा है।
तुरंत उन्होंने जेल बदल डाला, फिर उन्होंने कभी मुझे जाली नाम से हस्ताक्षर करने को नहीं कहा। और यहां तक कि जब वे मुझे एक जेल से दूसरी जेल में ले जा रहे होते तो भी कार तक पहुंचने के लिए कुछ समय लगता नहीं था। वही बहुत होता, मीडिया आ पहुंचता, एक ही बात पूछने को कि, क्या आपको सताया जा रहा है, क्या उन्होंने आपके शरीर को हाथ लगाया है? बस एक शब्द कह दें तो यह नौकरशाही सहन नहीं कर पाएगी।
लेकिन इस देश में स्थिति बिल्कुल दूसरी है। पत्रकार कमजोर हैं, वे दरिद्र देश की मांगों को पूरा कर रहे हैं, उनका मनोरंजन कर रहे हैं, उनकी मनोत्तेजन की परिपूर्ति कर रहे हैं, और दूसरी ओर नौकरशाही के जूते पालि कर रहे हैं।
इसे ज्यादा मानवीय होना है और व्यक्ति के लिए होना है। क्योंकि शासन
के पास पर्याप्त सत्ता है; व्यक्ति सत्ताहीन है। लेकिन भारतीय पत्रकारिता तो अब तक करुणाशील भी नहीं हुई है। इस दृष्टि से यह पश्चिम से कहीं निम्न है। इसे अपने स्तर ऊंचे उठाने होंगे।
आपके लिए बने इस सारे आलोचनात्मक रवैये को समाप्त करने की दिशा में क्या हम कुछ कर सकते हैं?
सारे आलोचनात्मक दृष्टिकोण समाप्त करने की जरूरत नहीं है। जरूरत कुल इतनी है कि जैसा मैं हूं ठीक उसी भांति मुझे बताया जाए, तब वे झूठे दृष्टिकोण मिट जाएंगे। बस, प्रत्येक विषय को उठाया जाए एक-एक करके, कि मैं क्या कहना चाहता हूं, और झूठी आलोचना स्वयं ही विदा हो जाएगी। उसमें बल नहीं है।
मैं धार्मिक नेताओं को, राजनेताओं को चुनौती देती रहा हूं, सार्वजनिक खुले मंच पर वाद-विवाद के लिए। किसी ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। वे जानते हैं कि जो कुछ मैं कह रहा हूं उसका खंडन नहीं किया जा सकता। और जो कुछ वे कह रहे हैं वह सब कूड़ा-कचरा है। इसलिए प्रेम के सामने वही कुछ लाने का प्रयास करो जो कि वास्तव में मेरा अभिप्राय है। लोग जानते नहीं कि मैं कह क्या रहा हूं। वे तो बस समाचार पत्र और आलोचकों के कथन पढ़ लेते हैं। वे यह पता करने की फिकर भी नहीं लेते कि कोई आलोचक सही बातों की आलोचना कर रहा है या नहीं? क्या आपका अभिप्राय यही है, जिसकी कि वह आलोचना कर रहा है। एक भी समाचार पत्र ने मुझसे नहीं पूछा; विशेष कारण से क्योंकि यह बात उनके लिए लाभदायी है। उनके पत्र की बिक्री की दृष्टि से यह बात अच्छी है। लोग पसंद करते हैं कि किसी के बारे में कुछ भद्दी-भोंडी बात कही जाए, और वे सत्य के खोजी नहीं हैं कि वे लाइब्रेरी में जाकर खोजेंगे कि इस आदमी ने ऐसा कहा भी है या नहीं।
इसलिए उनकी फिकर मत लेना, विधायक ढंग तो यही होगा कि लोगों को बताया जाए कि प्रत्येक आवश्यक विषय पर मेरा अभिप्राय क्या है। और फिर वे करें आलोचना। तब लोग दोनों पहलू जान सकते हैं।
क्या गरीबी से ग्रस्त भारत जैसा देश स्वर्ग में बदला जा सकता है?
यह देश स्वर्ग था। यह फिर स्वर्ग बन सकता है। इसने कुछ नासमझियां की हैं जिन्होंने यहां के स्वर्ग को नष्ट कर दिया। पहली बात, भारत का पतन प्रारंभ होता है महाभारत से उस बड़े भारतीय महायुद्ध से, और इसकी जिम्मेदारी आती है कृष्ण पर। उन्होंने अर्जुन को राजी किया इस युद्ध के लिए। पूरी गीता ही दर्शन है हिंसा का। मुझे कई बार आश्चर्य होता है कि नीत्से की दृष्टि में गीता कैसे नहीं आई, क्योंकि उसने तो मनुस्मृति को खोज निकाला था और उसकी प्रशंसा की। शायद उसने सोचा होगा कि गीता एक

धार्मिक है और फिर उसने पढ़ा ही न होगा उसे। वरना उसने उसकी और भी ज्यादा प्रशंसा की होती। मनु, कृष्ण, नीत्से और हिटलर, सभी एक ही श्रेणी के हैं। अर्जुन हिमालय जाकर तप करना चाहता था। कुरुक्षेत्र में इकट्ठे हुए सारे योद्धाओं को देख वह सोच ही न सकता था कि इस प्रकार का युद्ध जीतने में भी कोई अर्थ हो सकता है, क्योंकि ये मित्र है, अपने बंधु-बांधव हैं, सगे- संबंधी हैं जो दोनों और बंट गए हैं, वे साथ-साथ खेले, वे पढ़ते रहे एक साथ। यह एक पारिवारिक झगड़ा था। यहां तक कि अर्जुन ने गुरु द्रोणाचार्य तक
भी दूसरी ओर थे। कृष्ण थे अर्जुन की ओर, उनकी सेना दूसरी ओर थी, क्योंकि अर्जुन का भाई ही था दुर्योधन और दोनों ने ही अपने मित्रों से सहयोग मांगा था। अब बांटने का वही एकमात्र तरीका था।
सारे दृश्य को देखकर वह बोला, इसमें कोई सार नहीं। उन्हें ही राज्य करने दो। फिर कम से कम जिनसे मैं प्रेम करता हूं, मेरे वे अपने लोग जीवित तो रहेंगे। यदि मैं जीतता हूं, तो यहां ढेरों लाशें ही मिलेंगी। तब सोने के सिंहासन पर बैठना भी भला मुझे क्या खुशी देगा। बस मुझे राज-सिंहासन मिल जाएगा। मुझे तो बस जाने दो। यह अर्थहीन है। और कृष्ण लगातार उसे राजी करने का प्रयास करते ही रहे, युद्ध के लिए तर्क दिए, हिंसा के लिए तर्क दिए, और उनका अंतिम तर्क तो ऐसा था कि अर्जुन का संस्कारित मन उसे अस्वीकार न कर सका- कि यह तो परमात्मा की मरजी है कि तुम्हें यह युद्ध करना है।
अगर मैं अर्जुन की जगह होता तो मैं कह देता कि परमात्मा की मरजी आपको पता होने से पहले मुझे पता है। परमात्मा की मरजी है कि मैं हिमालय जाकर तप करूं। आपके पास क्या प्रमाण है कि मुझे यह संदेश परमात्मा से मिला है वह गलत है, और आपको मिला परमात्मा का संदेश सही है।
लेकिन बेचारा अर्जुन, जिसमें यह विचार घर कर चुका था कि कृष्ण स्वयं ईश्वर के अवतार हैं, मान गया उनकी बात। लाखों लोगों की मृत्यु हो गयी; और वे इस देश के श्रेष्ठ व्यक्ति थे, और इस देश की रीढ़ टूट गयीं सदा के लिए। तब से लेकर आज तक भारत अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो पाया है! वरना वह तो सारे जगत में सोने की चिड़िया के नाम से जाना जाता था।
पिछले दो हजार वर्ष से भारत बिना कोई प्रतिरोध किए गुलाम बना रहा है। तुलसीदास जैसे व्यक्ति जनता को बताते रहे हैं कि एक पत्ता भी उसकी मरजी के बिना नहीं हिलता है। इसलिए अगर हमलावर आए, तो वह परमात्मा की ही मर्जी होगी; यदि तुम्हें गुलाम होना है तो वह मर्जी होगी परमात्मा की ही। वह परमात्मा में तुम्हारी आस्था की परीक्षा है। मेरे देखे ये अपराधी हैं, जिन्होंने इस पूरे देश को गुलाम बना दिया। और चाहे तुम अब स्वतंत्र भी हो, लेकिन फिर भी गुलाम-मानसिकता भीतर है।
वह मानसिकता अभी भी जारी है। यदि तुम निर्धन हो, तो वह है परमात्मा की मर्जी उसके विरुद्ध संघर्ष करना परमात्मा के विरुद्ध संघर्ष करना माना जाता है। यदि तुम निर्धन हो, तो वह बात तुम्हारी श्रद्धा, विश्वास के लिए एक परीक्षा हो जाती है। तुम जहां कहीं भी हो, जैसे भी हो उसी में संतोष जानो, यही जीवन-दर्शन है तुम्हारे तथाकथित धर्मों का। स्वभावतः यदि ऐसा दर्शन लोगों के मन पर छाया रहता है तो लोग धनवान नहीं हो सकते। वरना इस देश की गरीब बहुत आसानी से मिट सकती है। लेकिन समस्या है कि उसके हाथ और भी चीजों को मिटना पड़ेगा। यह परमात्मा की मर्जी बिल्कुल नहीं है कि तुम्हें गरीब रखना है, कि तुम्हारे पूर्व जन्मों के बुर कर्मों के कारण तुम्हें गरीब होना है।
तुम गरीब हो तो इसलिए कि तुम अपनी बुद्धिमत्ता से काम नहीं लेते हो। तुम गरीब हो क्योंकि तुम आधुनिक टेक्नालाजी का प्रयोग नहीं कर रहे हो। और महात्मा गांधी जैसे लोग हुए हैं जिनके लिए सारी टेक्नालाजी चरखे पर आकर समाप्त हो जाती है। उसके बाद सारी टेक्नालाजी गलत हो जाती है। हमें इन सभी लोगों को एक ओर हटा देना है, चाहे उन्हें लागों ने कितना ही पूछा हो, कितना ही संत माना हो। लेकिन वे ही अपराधी हैं। और यहीं तो मुझे निरंतर अड़चन महसूस होता है। तुम पूछते हो, क्या यह देश फिर स्वर्ग बन सकता है? बिल्कुल बन सकता है। लेकिन तुम्हें इन संतों को बीच में हटा देना होगा- तुलसीदास को, महात्मा गांधी को और कृष्ण को। ये वे अवरोध हैं जो

तुम्हारा निर्मित कर रहे हैं। और तुम्हारा मन ही तो है जो सोचता है, कार्य करवाता है।
इन दिनों शंकराचार्य की पदवियों वाले लोग भी संतति-नियंत्रण का विरोध करने की शिक्षा दे रहे हैं। अब इन लोगों को जेल में होना चाहिए। संतति नियंत्रण को तो एक पुण्य जाना होगा, पाप नहीं। और जो कोई जबरदस्ती लादे गए ब्रह्मचर्य की बात कहता है, वह चाहे हिंदू हो कि जैन कि बौद्ध और या कि ईसाई, वह अपराधी है क्योंकि ऐसा ब्रह्मचर्य कामवासना की विकृतियां उत्पन्न करता है। वह व्यक्ति को स्वस्थ बुद्धिमान नहीं बनाता। उससे व्यक्ति का मन ज्यादा और ज्यादा कूड़े-कर्कट से भरता चला जाता है, और वह विकृति मन केवल नर्क ही बना सकता है। ऐसे मन कई नर्क बना चुके हैं; किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है।
इसी सदी के अंत होने तक देश की आबादी एक अरब हो जाएगी, इसका अर्थ हो सौ करोड़ व्यक्ति हम सौ करोड़ व्यक्तियों सहित कोई स्वर्ग नहीं बना सकते। आधी आबादी की नियति मृत्यु ही होगी। और उनमें कोई तुम्हारा प्रेमी, और तुम अपने चारों ओर उन्हें भूख से मरते हुए देखोगे। पचास करोड़ व्यक्ति मर रहे हों- इससे बड़ा नर्क और क्या होगा?
और हम कुछ कर ही नहीं पाते। अभी भी समय है। मैंने कोई तीस वर्ष पहले संतति-नियमन की बात करनी शुरू की थी। अगर उन्होंने उस समय सुन ली होती मेरी बात्--उन्होंने तो उसकी निंदा की थी, कि मैं अनैतिकता सिखा रहा हूं। अगर उन्होंने मेरी बात सुनी होती उस समय तब तो जनसंख्या चालीस करोड़ की ही थी, अब है अस्सी करोड़। अगर उन्होंने मेरी बात पर ध्यान दिया होता तो जनसंख्या चालीस की चालीस करोड़ ही बनी रहती। लेकिन तब की तो बात ही क्या, वे आज भी उस पर ध्यान नहीं देंगे।
जनसंख्या को नियंत्रित करना, नयी टेक्नालाजी को सारे संसार से ग्रहण करना बहुत आसान है। जरूरत सिर्फ सरकार से मिलने वाली गारंटी की है जो पूंजी बाहर से आ रही है उसका राष्ट्रीयकरण बिल्कुल नहीं होना चाहिए। ऐसे टेक्नीशियन्ज हैं, जो यहां आ सकते हैं और प्रशिक्षण दे सकते हैं। देश को ग्रहणशील होना होगा- वह तो बंद है।
सन सैंतालीस से जो था वही पचासी में हैं। तकनीकी तरक्की नहीं हुई तो इसी कारण क्योंकि टाटा और बिड़ला और ऐसे ही लोगों को सुरक्षित रखना था। क्योंकि फिर एंबेसेडर कौन खरीदेगा? अगर सारी दुनिया के लोगों को यहां कारें बनाने दी जाए- मेहनत से काम करने वाले हों, सारी सामग्री मौजूद है, केवल टेक्नीशियन्ज की जरूरत है, तो फिर कौन खरीदेगा एंबेसेडर? यह तो एकाधिकार है एंबेसेडर का, इसकी रक्षा के लिए ही चार सौ प्रतिशत टेक्स देना पड़ता है बाहर से लाने वाली कार के लिए। यह बेहूदा है, लेकिन कारण यही है कि बिड़ला राजनेताओं को पोष्ण करते रहे हैंः राजनेताओं को चुनाव लड़ने के लिए पैसा देते रहे हैं। और दूसरे धनवान भी यही कुछ करते हैं।
तो इसलिए जो लोग सत्ता में दिखायी पड़ते हैं वे वास्तविक सत्ताधारी नहीं है, उनके पीछे हैं सत्ता दिला कर बादशाह बनाने वाले दूसरे लो। उनकी वास्तविकता प्रकट करनी ही होगी और सरकार को भी सही दशा दिखाकर दुरुस्त करना है, कि तुम कैसे देश को गरीब बनाए जा रहे हो।
सारा विश्व तैयार है रुपया लगाने को, टेक्नीशियन्ज, टेक्नालाजी लाने को। तो भी एक गारंटी तो चाहिए ही कि तुम उस सब का राष्ट्रीयकरण नहीं करोगे। और राष्ट्रीयकरण करने की कोई जरूरत भी नहीं है। जनसंख्या की बड़ौत्तरी पर रोक लगाओ, पूरे जगत के लिए सभी द्वार दरवाजे खोल दो, हर तरह के उद्योग खोल देने से बेकारी गायब हो जाएगी और कोई गरीब न रहेगा, सारे श्रम का उपयोग हो जाएगा। और यह केवल संक्रमण काल ही होगा। बीस-तीस वर्ष में हम स्वयं ही हर चीज बनाने के योग्य हो जाएंगे।
लेकिन स्वतंत्रता के चालीस वर्ष बाद भी कुछ नहीं हो पाया है। राजनेता
को केवल अपनी सत्ता बनाए रखने में ही रुचि है। धनवान की रुचि केवल इसी में है कि वह और ज्यादा धनवान होता चला जाए। और इन दोनों के बीच, गरीब पिस गया है और ज्यादा ही गरीब होता जा रहा है।
तो मेरा सुझाव बहुत सीधा-साफ है। संतति-नियमन का विरोध करने का शिक्षा देने वाले पोप या मदर टेरेसा जैसे लोगों को इस देश में आने की

इजाजत नहीं दी जानी चाहिए। वे शत्रु हैं, उन्हें यहां नहीं आने देना चाहिए। यदि वे संतति-नियंत्रण के विरुद्ध सिखाते हैं तो उन्हें बाहर करना होगा। इसमें अपने लाभ जुड़े हैं कि ज्यादा गरीब बनें, ज्यादा हो जाएं और ज्यादा कैथोलिक बन जाएं।
अब पोट यहां आने को है, अगर सरकार में जरा भी बुद्धिमत्ता है, तो उसे
यह शर्त लगा देनी होगी कि संतति-नियमन के या कि गर्भपात के विरोध में एक शब्द भी नहीं कहना होगा। पोप आध्यात्मिक उपदेश आदि दे सकता है, अगर इस विषय में कुछ कहने को है उनके पास। लेकिन उनके पास तो वही एकमात्र आध्यात्मिकता दिखाई पड़ती है। पूरी दुनिया में वे इस तरह की शिक्षा देते रहे हैं कि यह परमात्मा के विरुद्ध पाप है। और अगर ऐसे उपदेश देने को पाप राजी नहीं है, तो कह दो उससे कि आपके लिए यहां कोई जगह नहीं है।
और पूरे विश्व के लिए द्वार खोल दे। वहां पैसा मौजूद है, टेक्नालाजी है, लेकिन श्रम करने वाले व्यक्ति नहीं है। हमारे पास काम करने वाले हैं, सस्ती श्रमिक सेवा है। वही कार जो वहां दो लाख में बनकर तैयार हो जाती है हम यहां एक लाख में बना सकते हैं। बस हमें जरूरत है तो टेक्नीशियन्ज की, पैसे की, उन उत्पादक-यंत्रों की जो उत्पादन कर सकें। हमारे यहां श्रमिक-सेवा इतनी ज्यादा सस्ती है।
अमेरिका में मैंने देखा कि लगभग हर चीज यहां से दस गुना ज्यादा महंगी
है तो सिर्फ इसलिए श्रम करने वाले उपलब्ध नहीं है। बड़े से बड़े धनपति के यहां भी नौकर नहीं है। और यह देश तो भरा हुआ है उन लोगों से जिनके पास कोई जगह नहीं है उन्हें रख पाने की। वे सब शिक्षित लोग हैं जो कुछ भी करने को तैयार हैं। लेकिन कोई काम-काज नहीं है। इसलिए एकमात्र तरीका यही है कि भारत पूंजी लगाने का खुला क्षेत्र बन जाए, जिसके साथ सरकार का पूरा सहयोग हो और गारंटी भी मिले, न केवल इस सरकार द्वारा बल्कि आने वाली किसी भी सरकार की गारंटी भी मिले- कि जो पैसा बाहर से आया है उसका राष्ट्रीयकरण नहीं हो सकता। और दस वर्ष के भीत रही तुम पाओगे ही तुम पाओगे कि तुम्हारा देश स्वर्ग बन गया। उसमें कोई बड़ी बात नहीं।
5 दिसंबर 1985, प्रातः कुल्लू-मनाली

फिर पत्तों की पाजेब बजी छठवां प्रवचन

ध्यान प्रक्रिया है रूपांतरण की

भगवान श्री, भारत में जनसंख्या के कारण गरीबी बढ़ती जा रही है और गरीबी
के कारण जनसंख्या। यदि दोनों एक दूसरे से बढ़कर। मौजूदा हालात में जनसंख्या को कंट्रोल में कैसे लाया जाए, बल्कि परिवार नियोजन को यहां स्वैच्छिक रूप से ही अपनाया जाता है? कृपया अपनी ओर से कुछ सुझाव दें।

यह इतनी बड़ी समस्या है, जितनी दिखाई पड़ती है। जनसंख्या अपने आप नहीं बढ़ती हैं और गरीबी उसका स्वाभाविक परिणाम होता है।
पहली बात, जो भारत की चेतना में प्रविष्ट हो जानी चाहिए, वह यह है कि जनसंख्या बढ़ती नहीं है, हम बढ़ाते हैं। गरीबी पढ़ती नहीं, हमारी सृष्टि है। और हमने सदियों तक गलत विचारों के अंतर्गत जीना सीखा है। जैसे, हमें बताया गया है कि बच्चे भगवान की देन हैं। यह भी समझाया गया है कि बच्चे प्रत्येक के भाग्य में लिखे हैं। और धर्मगुरु यह भी समझा रहे हैं सदियों से कि बच्चों को रोकना, पैदा होने से, ईश्वर का विरोध है। इन सब बातों का एक ही अर्थ होता है कि जैसे ईश्वर को एक ही काम है, और वह है कि लोग कैसे ज्यादा से ज्यादा गरीब हों। जो कि ईश्वर शब्द के बिल्कुल विपरीत है। ईश्वर शब्द का मूल उदगम ही ऐश्वर्य है। ऐश्वर्य से ही ईश्वर शब्द बना है। तो ऐश्वर्य से गरीबी बढ़ती हो, ईश्वर गरीबी बढ़ाता हो, यह बात सिर्फ पंडितों-पुरोहितों, धर्मगुरुओं, राजनीतिज्ञों- उन सारे लोगों की गढ़ी हुई बातें हैं, जो गरीबों के शोषण पर ही जी रहे हैं।
जब तक भारत के मानस से हम पर्दा नहीं हटा देते हैं कि परमात्मा का तुम्हारी गरीबी में कोई हाथ नहीं है... । और परमात्मा ही क्या जो तुम्हें गरीब बनाना चाहे। लेकिन, धर्मगुरु, जैसे जीसस चिल्ला-चिल्ला कर लोगों से कह रहे हैं कि धन्यभागी है वे, जो गरीब हैं। इससे गरीब को थोड़ी देर के लिए सांत्वना तो मिल जाती है, जैसे चिंताओं में डूबे हुए आदमी को अफीम खा लेने से थोड़ी देर को राहत मिल जाती हो, लेकिन गरीबी नहीं मिटती, और न ही चिंताएं मिटती हैं। और अगर गरीबी धन्यता है, तो फिर गरीबी को वरण करना चाहिए, विनष्ट करने का तो सवाल ही कहां उठता है? जो गरीब नहीं हैं, उनको भी गरीब बना देना चाहिए, क्योंकि वे बेचारे क्यों धन्यता से अभागे रहें।
महात्मा गांधी गरीबों को कहते दरिद्र नारायण, ये परमात्मा के रूप हैं, ईश्वर की संतान हैं।
इन सारी बातों से गरीबों को थोड़ी देर के लिए राहत मिलती है, अगर उनके जीवन की असली समस्या का कोई हल नहीं होता। और राहत देने वाले, असली समस्या के हल होने में बाधा बनते हैं।
मैं चाहूंगा कि गरीबों से उनकी सारी राहत छीन ली जाएं, उनकी सारी सांत्वनाएं छीन ली जाएं, उनसे सारे धोखे और सारे भ्रम छीन लिए जाएं और उनको स्पष्ट कह दिया जाए कि यदि गरीब हो तुम, तो तुम जिम्मेवार हो। और अगर जनसंख्या बढ़ती है, तो तुम बढ़ाते हो। और अगर यही तुम्हारी मर्जी है, कि गरीब रहना है, और देश को और से और गरीबी की ओर ले जाना है... और इस सदी के पूरे होते-होते सौ करोड़ संख्या होगी भारत की। आधा भारत भूखा मरता होगा। अगर यही तुम्हारी मर्जी है कि तुम्हारे सामने ही आधार भारत सड़कों पर भूखा बिलखे और मरे, तो ठीक है, तुम अपने पुराने विचारों से चिपके रहो। लेकिन हम यह मानने को भी राजी नहीं हो सकते हैं कि यह ईश्वर की मर्जी हो सकती है। और अगर यह ईश्वर की मर्जी हो सकती है, और अगर यह ईश्वर की मर्जी है, तो ईश्वर को इंकार कर देना जरूरी है।
इसके पहले कि हम भारत के लोगों को संतति-निरोध के साधनों के लिए राजी करें, उनकी मानसिक, दार्शनिक, धार्मिक धारणाओं को बदल लेना जरूरी है। और तब कोई कठिनाई न होगी कि वे स्वेच्छा से संतति-निरोध के उपायों को स्वीकार करेंगे।

मैं एक ईसाई पादरी से बात कर रहा था। पादरी ने कहा कि संतति-निरोध के लिए किए गए कोई भी साधन, सब ईश्वर का विरोध है। मैंने उससे कहा कि एक छोटी सी बात मैं आपसे पूछूं, कि आपकी ईश्वर की परिभाषा है कि सर्वशक्तिमान है। एक छोटी सी गोली तुम्हारे सर्वशक्तिमान परमात्मा को हरा देती है। परमात्मा बच्चा पैदा करना चाहता है, और गोली परमात्मा को बच्चा पैदा करने से रोक देती है। तो बेहतर होगा कि तुम परमात्म की पूजा छोड़कर अब इस गोली की पूजा शुरू करो। यह ज्यादा शक्तिमान है।
यह मूर्खतापूर्ण है कि परमात्मा सर्वशक्तिमान है और फिर भी हमसे कहा जाता है कि हम उसकी इच्छा का विरोध न करें। एक तरफ हमसे कहा जाता है कि उसकी इच्छा के बिना पता भी नहीं हिला, और दूसरी तरफ हमसे कहा जाता है कि हम इसकी इच्छा का विरोध न करें। इन दोनों बातों में विरोधाभास है। अगर उसकी इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता तो हम लाख उपाय करें, अगर वह बच्चा देना ही चाहता है तो बच्चा देगा। हमारे उपाय किसी काम में नहीं आएंगे। और अगर हमारे उपाय काम में आए हैं, तो उसका अर्थ है कि बच्चा परमात्मा नहीं दे रहा था। बच्चा हम पैदा कर रहे थे, और यह परमात्मा पर थोप रहे थे, और जब तक हम जिम्मेवारी दूसरों पर थोपते हैं, तब हम जीवन में कोई क्रांति नहीं ला सकते। जिम्मेवारी खुद लेना होगी।
जैसे ही भारतीय मानस शिक्षित किया जा सके, और जो कि कठिन नहीं है, क्योंकि मेरे देखे भारत के लोग भला अशिक्षित हों, बुद्धिहीन नहीं है। भले ही आधुनिक जगत से दूर हों, लेकिन इतनी प्रतिभा उनमें है, कि वे ब्रह्म और ईश्वर, स्वर्ग और नर्क, और मोक्ष की सूक्ष्म गत व्याख्या कर सकते हैं, समझ सकते हैं, तो इन छोटी-छोटी बातों को न समझ सकेंगे, ऐसा मैं नहीं मानता। मैं परिपूर्ण आशावादी हूं। जरूरत है केवल इस बात की कि हम गांव-गांव में... कालेज हैं, युनिवर्सिटीज हैं, स्कूल हैं, इनके शिक्षक हैं, प्रोफेसर हैं, विद्यार्थी हैं, हम इसे एक जरूरत बना दें कि जब तक कोई विद्यार्थी दो महीने तक गांव में जाकर लोगों को संतति-नियमन के संबंध में नहीं समझाएगा, वह सर्टिफिकेट पाने का अधिकारी नहीं होगा। और हर शिक्षक, दो महीने गर्मियों में जब तक गांव में जाकर लोगों को नहीं समझाएगा, तब तक वह आगे के किसी प्रमोशन का हकदार नहीं होगा। हिंदुस्तान में इतने शिक्षक हैं, इतने विद्यार्थी हैं, और बहुत से लोग जो शिक्षक और विद्यार्थी नहीं है, लेकिन चाहते हैं कि भारत की कोई सहायता करें, कोई सेवा करें, उनसे आग्रह किया जाना चाहिए कि वे गांव-गांव जाएं और लोगों को समझाएं कि इसमें ईश्वर का विरोध नहीं है। यह पहलू हुआ।
और दूसरा पहलू है, कि भारत की सरकार को निश्चित रूप से उन लोगों को अपराधी घोषित करना चाहिए, जो भारत की जनता को गुमराह कर रहे हैं। ईसाई मिशनरी हैं, मदर टेरेसा हैं। अभी पोप का आगमन होने को है। इसके पहले भारत को यह तय करना चाहिए कि ये लोग हैं, जो जनता को समझा रहे हैं, किसी भी तरह के संतति नियमन का उपयोग महा-अधर्म है, महापाप है। यह उनकी राजनीति है, कोई धर्म नहीं है। क्योंकि मदर टेरेसा को जितने अनाथ बच्चे मिल जाते हैं, उतनी कैथोलिकों की संख्या बढ़ा जाती है। और हम ऐसे मूढ़ हैं कि हम मदर टेरेसा जैसी औरतों को पुरस्कार पर पुरस्कार लिए चले जाते हैं, बिना यह देखे कि गरीबों की सेवा के नाम के पीछे, अनाथों की सेवा के नाम वे पीछे सिवाय ईसाइयत के प्रसार के और कुछ भी नहीं है।
पूरे हिंदुस्तान में मैंने एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं देखा जो सुसंस्कृत हो, सुसंपन्न हो और ईसाई बन गया हो। जो भी ईसाई बने हैं, वे भिखारी हैं, अनाथ हैं, आदिवासी हैं। और वे ईसाई इसलिए नहीं बने हैं कि वे समझ गए हैं कि ईसाइयत उनके धर्म से श्रेष्ठतर धर्म है, बल्कि इसलिए कि ईसाइयत उनको रोटी दे रहे है, कपड़े दे रही है, अस्पताल दे रही है, स्कूल दे रही है।
जो भी व्यक्ति भारत में संतति-नियमन का विरोध सिखाता है, उसे दंडित किया जाना चाहिए।
इस समय सब से बड़ा अपराध वही है। एक आदमी को मार डालने के लिए तो हम कितनी बड़ी सजा देते हैं कि उसकी जान ले लेते हैं अपराधी की, और जो लोग आज समझा रहे हैं कि जनसंख्या को बढ़ने दो, ये करोड़ों लोगों की हत्या के लिए जिम्मेवार होंगे, और इनके लिए हमारे पास कोई अपराध का नियम नहीं है उलटे

हम इन्हें नई-नई पदवियों, डाक्टरेट, और नोबेल प्राइज से पुरस्कृत करते हैं। यह दोहरी चला बंद करनी होगी। स्पष्ट रूप से प्रत्येक ईसाई मिशनरी को यह समझ लेना चाहिए कि अगर देश में रहना है तो इस तरह की मूर्खतापूर्ण बातें नहीं चलेंगी। अन्यथा इसी क्षण इस देश को छोड़कर चले जाओ। जाओ और अपने देशों में समझाओ।
यह बड़े मजे की बात है कि फ्रांस की जनसंख्या थिर है, और सब ईसाई हैं! यह मजे की बात है कि स्विटजरलैंड से और फ्रांस मिशनरी भारत आते हैं। और यहां लोगों को समझा रहे हैं कि जनसंख्या को बढ़ने दो, क्योंकि ये ईश्वर की देन है। और उनके साथ ही साथ सुर मिलाने को शंकराचार्य हैं, मुस्लिम इमाम हैं, क्योंकि उन सबको यह भ्रांति है कि बच्चे के जन्म का कोई अनिवार्य संबंध ईश्वर से है। कोई अनिवार्य संबंध ईश्वर से नहीं है। एक बार हम भारत के मन से यह भ्रम तोड़ दें कि ईश्वर का कोई संबंध संतति से नहीं है तो भारत के लोगों को स्वेच्छा से संतति-निरोध को अपना लेने में कोई बाधा नहीं होगी। साथ-साथ मैं यह भी कह देना चाहता हूं कि अब तक हमने एक ही किनारे से सोचा है, वह है जन्म। अभी हमने दूसरा किनारा नहीं सोचा है, वह है मृत्यु। यह अधूरा चिंतन है। मैं इसे पूरा कहना चाहता हूं। संतति-निरोध का प्रचार करो। लोगों को समझाओ कि अब बच्चों को पैदा करने से बड़ा कोई और दूसरा अपराध नहीं है। और ये अपराध तुम अपने बच्चों के प्रति ही कर रहे हो, तुम्हारे बच्चे ही भूखे मरेंगे, तुम्हारे बच्चे ही सड़कों पर तड़पेंगे। तुम्हारे बच्चे ही इस पृथ्वी पर नर्क झेलेंगे और तुम जिम्मेवार होओगे। तुम चाहते तो यह सब रोक सकते थे। यह एक हिस्सा है।
दूसरा हिस्सा है कि पचहत्तर साल के बाद अगर कोई भी व्यक्ति स्वेच्छा
से मृत्यु को ग्रहण करना चाहता है, तो हमें इसे कानून रूप से अंगीकार करना चाहिए। प्रत्येक अस्पताल में एक निश्चित मंदिर जैसी जगह होनी चाहिए। जहां कोई भी व्यक्ति जो पचहत्तर के के पार हो चुका है, और चाहता है कि पूरी तरह जी चुका, जो भी जानना था, जान चुका, जो भी पाना था, पा चुका; और अब सिर्फ एक बोझ है, और चाहता है कि अपनी जगह अब किसी नए बच्चे को दे दे, और किसी क्रोध से आत्महत्या नहीं कर रहा है, किसी हार से, किसी पराजय से आत्महत्या नहीं कर रहा है, वरन चिंतन से, सोच-विचार से, तो अस्पताल में हमें उसे सारी सुविधा देनी चाहिए, जो उसे जीवन में भी नहीं मिली है। उसे श्रेष्ठतम अवसर देना चाहिए, कि सुंदरतम संगीत सुन सके, अपने मित्रों, प्रियजनों से मिल सके, और हम उसे दवा दे सकें कि वह धीरे-धीरे नींद की गहराइयों में डूबता हुआ मृत्यु में उतर जाए, इसके साथ ही ध्यान जैसी प्रक्रिया जोड़ा जा सकती है कि उसका मरण सिर्फ मृत्यु ही न हो, बल्कि समाधि भी बन जाए।
तो एक तरफ हम बच्चों को आने से रोकें और दूसरी तरफ उनको, जो कि अब जबरदस्ती अपने को घसीटे जा रह हैं, क्योंकि कानून रूप से जीना मजबूरी है, जीना ही पड़ेगा। अपने जीवन को छोड़ देने का जन्मसिद्ध अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को मिल जाना चाहिए। इन दोनों छोरों से अगर हम काटना शुरू करें, तो संभव है कि इस सदी के अंत तक हमारी संख्या संतुलित हो जाए। और संख्या संतुलित हो जाए तो दरिद्रता के मिट जाने में कोई कठिनाई नहीं है।
भगवान श्री, जुलाई में जब मैं रजनीशपुरम गयी थी, तब आपने अपने प्रवचनों में कहा था, भारत में कई सालों तक बच्चा पैदा नहीं होना चाहिए। यही बातें हिंदुस्तान आकर मैंने कई लोगों से कहीं। अलग-अलग लोगों की अलग-अलग प्रतिक्रियाएं थीं, मगर यादातर महिलाओं ने कहा, स्त्री में जो मातृत्व की भावना होती है, उसे वह कैसे सेटिसफाई करे? कइयों ने कहा, नारी पूर्णता को प्राप्त नहीं करती, जब तक वह मां नहीं बनती। इस बारे में कुछ कहिए भगवान।
पहली बात, हिंदुस्तान में कितनी नारियां पूर्णता को प्राप्त हो गयीं हैं? हर नारी एक नहीं दर्जन और डेढ़ दर्जन बच्चों की मां है- पूर्णता कहां है? ये बच्चे उसे पूरे जीवन को खा गए। पूर्णता का तो कोई पता नहीं चलता। दूसरी बात, कि स्त्री मां बनने से ही मातृत्व के पाती है, यह भी सही नहीं है। क्योंकि लगभग सारी स्त्रियां बच्चे पैदा करती हैं, मां बनती हैं, पर मातृत्व की कोई गरिमा, कोई ओज, कोई तेज दिखाई तो नहीं देता। इसलिए मेरी

परिभाषा दूसरी है। मेरी परिभाषा में मां बन जाना जरूरी नहीं है, मातृत्व को उपलब्ध होने के लिए।
मां तो सारे जानवर अपनी मादाओं को बना देते हैं। सारी प्रकृति, जहां- जहां मादा है, वहां-वहां मां है। लेकिन मातृत्व कहां है? इसलिए मातृत्व और मां को एकार्थी न समझे। यह हो सकता है कि कोई मां न हो और मातृत्व को उपलब्ध हो, और कोई मां हो और मातृत्व को न उपलब्ध हो।
मातृत्व कुछ बात ही और है। वह प्रेम की गरिमा है।
मैं चाहूंगा कि स्त्रियां मातृत्व को उपलब्ध हों, लेकिन उस उपलब्धि
के लिए बच्चे पैदा करना बिल्कुल गैर-जरूरी हिस्सा है। हां, उस मातृत्व को पाने के लिए हर बच्चे को अपने बच्चे जैसा देखना, निश्चित अनिवार्य जरूरत है। उस मातृत्व के लिए ईर्ष्या, द्वेष, जलन इनका छोड़ना जरूरी है। बच्चों की दर्जन इकट्ठी करनी नहीं।
और फिर हमारे देश में जहां इतने बच्चे बिना माताओं के हों, वहां जो स्त्री, अपना बच्चा पैदा करना चाहती हो, वह मातृत्व को कभी उपलब्ध नहीं होगी। जहां इतने बच्चे बिलख रहे हैं, अनाथ, मां की तलाश में, वहां तुम्हें सिर्फ इस बात की फिकर पड़ी हो कि बच्चा तुम्हारे शरीर से पैदा होना चाहिए। उस क्षुद्र विचार को पकड़ कर कोई मातृत्व जैसे महान विचार को नहीं पा सकता। जहां इतने बच्चे बिलखते हों अनाथ, कोई जरूरत नहीं है बच्चा पैदा करने की। इन अनाथ बच्चों को अपना लो। इनके अपनाने में, इनको अपना बनाने में, वह जो दूरी अपने पराए की है, वह गिर जाएगी। इनको अपना बनाने में, वह जो ईर्ष्या और जलन और द्वेष की क्षुद्र भावनाएं हैं, वे गिर जाएंगी। और इनको बड़ा करने में और इनके पल्लवित और पुष्पित होते देखने में जो आनंद उपलब्ध होगा, वह आनंद अपने ही बच्चों को चोर बनते, बेईमान बनते, भीख मांगते, जेलों में सड़ते देखकर नहीं हो सकता।
मातृत्व का कोई संबंध जैविक शास्त्र से नहीं है। इसलिए कोई पशु मनुष्य को दौड़कर मातृत्व को उपलब्ध नहीं हो सकता। मां तो बन सकती है हर मादा, लेकिन मातृत्व की संभावना केवल स्त्री को उपलब्ध है। और वह उपलब्धि चारों तरफ फैली हुई है।
पहली बात, कि मातृत्व का कोई संबंध शारीरिक, जैविक उत्पत्ति से नहीं है, वरन एक आध्यात्मिक प्रेम से है, एक भाव से है। जिस क्षण तुम किसी दूसरे को अपने जैसा अपना लो, जैसे तुमने उसे जन्म दिया हो।...
और फर्क क्या है? किसने उसे जन्म दिया, इससे कोई भी भेद नहीं पड़ता है।
तो मातृत्व के लिए तो बहुत संभावना है। इतने अनाथ बच्चों को अगर माताएं मिल जाएं तो जरूरत न हो मदर टेरेसा जैसे लोगों की, जो कि शोषण कर रहे हैं इन अनाथ बच्चों का। और ये अनाथ बच्चे कैथोलिक परिवारों द्वारा, गोद लिए जा रहे हैं। और हिंदुस्तान की स्त्रियां अपने ही बच्चों को पैदा करने में मातृत्व अनुभव कर रही हैं।
दूसरी बात, स्त्री की पूर्णता उसके मां बनने में है यह सच है। इसलिए मैंने जब संन्यास देना शुरू किया, तो पुरुषों के लिए तो परंपरागत नाम था संन्यासी का स्वामी। स्त्री के लिए कोई नाम न था। क्योंकि भारत में हजारों साल से स्त्री को इस तरह दबाया है, इस बुरी तरह मिटाया है, इसे कभी मौका भी नहीं दिया है कि वह संन्यास में दीक्षित हो सके। उसके लिए कोई नाम भी नहीं है। बहुत खोजकर मैंने मां का ही वह नाम स्वीकार किया, क्योंकि मां में ही उसकी पूर्णता है। लेकिन यह मां की पूर्णता इस बात का सबूत है कि तुम्हारा प्रेम इतना ऊंचा उठ जाए कि ये सारे जगत में तुम्हारे लिए सभी यूं हो जाएं, जैसे तुम्हारे बच्चे- तुम्हारा पति भी। यही उपनिषद के ऋषियों का आशीर्वाद है। जब कभी कोई उपनिषद के ऋषियों के पास कोई जोड़ा आशीर्वाद के लिए जाता था, तो एक बहुत ही अनूठा आशीर्वाद, दुनिया के किसी शास्त्र में वैसा आशीर्वाद नहीं है। ऋषि आशीर्वाद देता है कि हे युवती, तू दस बच्चों की मां हो और अंततः तेरा पति तेरा ग्यारहवां बेटा हो। जब तक यह न हो जाए, तब तक तू समझना कि जीवन-यात्रा पूरी नहीं हुई है। और जिस दिन कोई स्त्री अपने पति को भी अपने बेटे की तरह मान सके, जान सके, उस दिन उसके लिए सारे जगत में सिवाय बेटों के और कौन रह जाता है।

निश्चित ही मां, मातृत्व की पूर्णता, स्त्री का आत्यंतिक गौरव है! लेकिन बच्चों की कतार लगाने से नहीं, वरन अपने प्रेम को इतना ऊपर उठाने से है कि जहां उसे प्रत्येक व्यक्ति अपना बच्चा ही मालूम हो। ये धारणाएं लोगों तक पहुंचानी जरूरी है, क्योंकि वे गलत धारणाओं के नीचे बच्चे को पैदा किए चले जा रहे हैं। और ये लौटकर भी नहीं देखते कि उनकी धारणाओं के लिए कोई भी सबूत नहीं है। करोड़ों स्त्रियां हैं, बच्चों की कतारें, कौन सा मातृत्व है? करोड़ों स्त्रियां हैं, कौन सी पूर्णता है?
मुझसे लोग पूछते है कि आप अपनी संन्यासिनियों को मां कहते है? यह तो बड़ी हैरानी की बात है, क्योंकि न उनके बच्चे हैं, न उनकी शादी हुई। आप छोटी सी बच्ची को भी संन्यास देते हैं तो मां कहते हैं! उनके आश्चर्य को मैं समझ सकता हूं। क्योंकि मेरी दृष्टि में छोटी सी बच्ची भी बजी लिए हुए है, अंतिम रूप से, इस सारे जगत की मां बनने का। उसे मां कहकर पुकारना उसके बीज को पुकारना है। उसकी संभावना को ललकार देना है, उसको चुनौती देनी है। और जिस दिन किसी मां का प्यार सबके लिए समान और सब के लिए आत्मिक हो जाता है। जिसमें शरीर की कोई बास भी नहीं, जिसमें काम की कोई दूर की गंध भी नहीं, उस दिन स्त्री पूर्णता को उपलब्ध होती है।
भगवान श्री, गर्भ से पहले और गर्भकाल में यदि माता-पिता ध्यान करते हैं, तो बच्चे पर इसका क्या असर पड़ता है?
निश्चित ही, बच्चे का जीवन जन्म के बाद शुरू नहीं होता। वह तो गर्भाधारण के समय ही शुरू हो जाता है। उसका शरीर ही नहीं बनता मां के पेट, उसका मन भी बनता है, उसका हृदय भी बनता है। मां अगर दुखी है, परेशान है, चिंतित है, तो ये घाव बच्चे पर छूट जाएंगे और ये घाव बहुत गहरे होंगे, जिनको वह जीवन भर धोकर भी न धो न सकेगा। मां अगर क्रोधित है, झगड़ता है, हर छोटी-मोटी बात का बतंगड़ बना बैठती है, इस सबके परिणाम बच्चे पर होने वाले हैं। पति का तो बहुत कम असर बच्चे पर होता है, न के बराबर। निन्यानबे प्रतिशत तो मां ही निर्माण करती है बच्चे का, इसलिए जिम्मेवारी उसकी ज्यादा है। पिता तो एक सामाजिक संस्था है।
एक जमाना था, पति नहीं था, और एक जमाना फिर होगा, पिता नहीं होगा। लेकिन मां पहले भी थी, और मां बाद में भी होगी।
मां प्राकृतिक है, पिता सामाजिक है।
पिता एक संस्था है। उसका काम बहुत ही साधारण है जो कि एक इंजेक्शन से
भी किया जा सकता है। और इंजेक्शन से ही किया जाएगा भविष्य में। क्योंकि इंजेक्शन से ज्यादा बेहतर ढंग से किया जा सकता है।
एक संभोग में पुरुष करीब एक करोड़ जीवाणुओं को स्त्री गर्भ की ओर छोड़ता है। जिनमें से एक इस दौड़ में मां के अंडे तक पहुंच पाता है। जो पहले पहुंच जाता है, वह प्रवेश कर जाता है। और अंडा बंद हो जाता है। बाकी जो एक करोड़ जीवाणु हैं, वे दो घंटे भीतर मर जाते हैं। उनकी उम्र दो घंटे है। भयंकर दौड़ है, और लंबी है। अगर अनुपात से हम देखें, अगर आदमी की ऊंचाई हम छह फुट मान लें, तो जीवाणु इतने छोटे हैं कि मां के गर्भ तक पहुंचने का मार्ग दो मील लंबा हो जाता है। इस दो मील लंबे मार्ग पर भयंकर प्रतिस्पर्धा है। इसे मैं राजनीति की शुरुआत कहता हूं। इसमें जो पहुंच जाते हैं, वे जरूरी रूस से श्रेष्ठ नहीं हैं।
संभव है, वे जो एक करोड़ पीछे छूट गए, उनमें कोई अल्बर्ट आइन्स्टीन हो, कोई रवींद्रनाथ टैगोर हो, कोई गौतम बुद्ध हो। कोई भी नहीं जानता कि कौन छूट गए। और जो पैदा हुआ है, वह आकस्मिक है। यह हो सकता है कि चूंकि वह आगे था, इसलिए पहुंच गया। यह हो सकता है कि वह ज्यादा शक्तिशाली था, इसलिए पहुंच गया। लेकिन ज्यादा शक्तिशाली होना, किसी को रवींद्रनाथ नहीं बनाता। रवींद्रनाथ खुद अपने मां बाप के तेरहवें बेटे थे। यह संयोग की बात है कि इस लंबी दौड़ में रवींद्रनाथ पहुंच सके। अक्सर यह होता है कि रवींद्रनाथ जैसे लोग, या गौतम बुद्ध जैसे लोग, या अल्बर्ट आइन्स्टीन जैसे लोग न तो बहुत दौड़ने में उत्सुक होंगे, न बहुत प्रतिस्पर्धा में उत्सुक होंगे। शायद मनुष्य का श्रेष्ठतम हिस्सा हम व्यर्थ ही खो रहे हैं- जो कि आसानी से चुना जा सकता है। यह काम विज्ञान करने को है। एक करोड़ जीवाणुओं

में से जब हम श्रेष्ठतम को चुन सकते हैं, तब क्यों नंबर दो को, नंबर तीन के लोगों को जगह दी जाए।
इसलिए पिता का काम तो समाप्त होने के करीब है। लेकिन मां का काम अपरिहार्य है। गर्भाधान के समय...
और यही मेरी पूरी शिक्षा रही है, जिसको हर भांति से विकृत करके उपस्थित किया गया है। मेरी सारी शिक्षा यही रही है काम वासना मनुष्य के जीवन का प्रारंभ है, मनुष्य के जीवन का सब कुछ है। और काम वासना को दबाने की बजाय, उसे हम कैसे सुंदर श्रेष्ठ बनाएं और शिवत्व की ओर ले चलें, कैसे उसका रूपांतरण हो सके, इस संबंध में चिंतन होना चाहिए। दमन से तो केवल हम रुग्ण व्यक्ति पैदा करते हैं।
और ध्यान प्रक्रिया है व्यक्ति की कामवासना के परिवर्तन की।
अगर काम-वासना के क्षणों में स्त्री और पुरुष दोनों ही शांत हैं, मौन हैं, एक-दूसरे में ऐसे लीन हैं कि जैसे कहीं कोई दीवार न हो- उस क्षण मग समय जैसे रुक गया, जैसे दुनिया भूल गई, न कोई विचार है, न कोई धारणा है, बस एक आनंद है, एक ज्योति है, जिसमें दोनों डूब गए हैं। ऐसे ज्योतिर्मय क्षण से मगर बच्चे का जन्म हो तो हमने पहले ही कदम पर उसे महापाठ सिखा दिया। हमने उसे सिखा दिया कि कैसे अंधकार से ज्योति की ओर जाया जाता है। हमने उसे पहला ध्यान का अनुभव दे दिया कि कैसे सब कुछ मौन और शांत और आनंद से परिपूरित हो सकता है।
और अगर मां पूरे नौ महीने बच्चे को ध्यान में रखकर चले, ऐसा कुछ भी न करे जो ध्यान के विपरीत है, और ऐसा सब कुछ करे जो ध्यान के लिए सहयोगी है। तो निश्चित इन नौ महीनों में किसी भी बुद्ध को जन्म दिया जा सकता है और इन नौ महीनों में उस प्रेम का अनुभव, शांति का अनुभव, ज्योति का अनुभव हो। इन नौ महीनों में अगर उसे सिर्फ एक ही ही बात का अनुभव हो अपनी आत्मशक्ति का, तो वह बच्चा पैदा होते ही साधारण बच्चा नहीं होगा। वह असाधारण होगा। और हमने उसके जीवन की बुनियाद रख दी है। और अब जो मंदिर खड़ा होगा उस बुनियाद पर, वह बुनियाद से भिन्न नहीं हो सकता।
इसलिए जब भी कोई मां-बाप अपने बच्चों के प्रति मुझसे शिकायत करने आते हैं, तो मैंने उन्हें कहा है कि तुम्हें चाहे बुरा लगे, अगर जिम्मेवार तुम हो। तुमने गलत बुनियाद रखी होगी। आज तुम्हारा बच्चा डकैत है, आज तुम्हारे बच्चे ने खून किया है, तो तुम कहो कि नौ महीने में जब बच्चा गर्भ में था, तुमने क्या किया था उसको ऐसी बुनियाद देने का, जिसमें डकैती असंभव हो। शायद तुमने सोचा भी नहीं था।
निश्चय ही ध्यान जीवन के प्रत्येक अनुभव में उपयोगी है। और जन्म तो जीवन की सब से बड़ी घटना है।
और ध्यान प्रेम के क्षण में सब से सरल, सब से सुगम बात है।
क्योंकि प्रेम के क्षण में सहज ही विचार खो जाते हैं और एक तल्लीनता
छा जाती है। और एक सन्नाटा घेर लेता है। और एक प्रतीति होती है, जैसे हम भिन्न नहीं हैं अस्तित्व से, जैसे हम एक हैं। यह विचार केवल भारत में पैदा हुआ।
अगर भारत ने दुनिया को कोई भी चीज दी है, जिसको वह कह सके कि वह बिल्कुल उसकी अपनी है, तो वह है- तंत्र शास्त्र।
और तंत्र शास्त्र का सारा आधार एक है कि कैसे काम- ऊर्जा और ध्यान-ऊर्जा को एक कर दिया जाए।
और मैं अपने पूरे जीवन उस बात को दोहराता रहा हूं। लेकिन लोग अजीब हैं। आंखें हैं और आंखें नहीं हैं। कान हैं और कान नहीं हैं। और बीच में मध्यस्थ हैं उन्हें समझाने वाले।
मेरी एक-एक बात को गलत करके समझाया गया है। जब कि मैं मौजूद हूं और मुझसे पूछा जा सकता है। लेकिन किसी को फिकिर नहीं पड़ी सत्य को जानने की। लोगों को फिकिर सिर्फ एक बात की है कि उनकी धारणाओं पर कोई चोट न आए। फिर चाहे उनकी धारणाएं उन्हें गरीबी में ले जाएं, उनकी धारणाएं उन्हें अपराध में ले जाएं, उनकी धारणाएं उन्हें मनुष्य से गिरा दें और पशुता में ले जाएं; वह सब ठीक। लेकिन कोई उनकी धारणाओं को न छुए। उनकी धारणाएं बड़ी दुई-

60

मुई हैं। और मेरा एक ही अपराध पूरे जीवन में कि उनकी हर धारणा को, जो उन्हें गिराती हैं किसी भी तरह, उनसे छुटकारा दिला दूं।
यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात होगी कि हर युगल इसे अपनी कसम बना ले कि
जब तक वह ध्यान में समर्थ नहीं हो जाता, किसी बच्चे को जन्म नहीं देगा। क्योंकि क्या फायदा है चंगेजखां, और नादिरशाह और एडोल्फ हिटलर और मुसोलिनी, इन को पैदा करने से? अगर पैदा ही करना है तो कुछ पैदा करने योग्य- कोई बुद्ध कोई महावीर, काई नागार्जुन, कोई जो तुम्हारी प्रतिभा को निखार देगा, आगे ले चलेगा। अगर उसके लिए पहले तो मां-बाप को तैयार होना पड़ेगा।
और जब तक कोई ध्यान में स्वयं परिपक्व न हो जाए, उसे अधिकार नहीं मिलता बच्चे पैदा करने का।
और मेरा अपना अनुभव यह है हजारों लोगों के साथ काम करने का कि अगर पुरुष और स्त्री दोनों ध्यान में रसमग्न होना सीख गए हैं, तो संभोग के क्षण में उन करोड़ों जीवाणुओं में से केवल वही जीवाणु मां के अंडे तक पहुंचने में समर्थ होगा, जो उनके ध्यान के साथ एकरसता अनुभव कर रहा है। क्यों कि उनका ध्यान, उन दोनों की शक्ति, उसे शक्ति देगा। वह और सबको पीछे छोड़ जाएगा, वह उसकी गति बन जाएगी।
ध्यान के बिना बच्चों को पैदा करना, जीवन-ऊर्जा को व्यर्थ नष्ट करना है।
भगवान, दुनिया भर में जन-संख्या विस्फोट है। मैंने सुना है कुछ लोगों
को यह कहते हुए कि धरती पर जब मनुष्यों का भार बढ़ जाता है तो प्रकृति उसे सहन नहीं करती। इसमें क्या सच्चाई हैं?
मनुष्य की सब से बड़ी नासमझी यह है कि वह हमेशा अपने कर्मों का दोष किसी और पर टाल देना चाहता है। जैसे इस कहावत में कि जब लोगों की संख्या बहुत बढ़ जाती है... ऐसा लगता है कि संख्या अपने आप बढ़ जाती है, जैसे हमारा इसमें कोई हाथ नहीं। जैसे हम तो दूर खड़े देख रहे हैं, संख्या बढ़ रही है। तो प्रकृति खुद बदला लेती है। तो भी हम बदले को प्रकृति पर टाल रहे हैं। सच्चाई यह है कि संख्या बढ़ाते हैं। और संख्या का बढ़ना अपने आप में बदला बन जाता है।
न तो परमात्मा संख्या बढ़ाता है, न तो प्रकृति संख्या बढ़ाती है, और प्रकृति बदला लेती है। हम जिम्मेवार हैं।
मगर हमारी कहावतें बड़ी होशियारी से भरी हैं। हालांकि सिवाय नासमझी के उनमें कुछ भी नहीं, हम अपने को दूर ही रख लेते हैं। ऐसी बहुत कहावत हैं। जब प्रकृति पर पाप बढ़ जाते हैं, तो परमात्मा जन्म लेते हैं। पाप जैसे अपने आप बढ़ जाते हैं। और तब भी हमसे कुछ किए नहीं होता, तब भी परमात्मा को जन्म लेना पड़ता है।
और कितनी बार परमात्मा जन्म ले चुका। और पाप घटते नहीं। लगता है परमात्मा की भी कोई सामर्थ्य नहीं है इन पापों को घटाने की। दुनिया की कोई शक्ति इन पापों को नहीं घटा सकती, क्योंकि बढ़ाने वाला मौजूद है, और बढ़ाने वाले हम हैं।
जीवन में सब से बड़ा धार्मिक कृत्य मैं इस बात को मानता हूं कि व्यक्ति अपनी जिम्मेवारी को परिपूर्णता से स्वीकार करे। यह अंगीकार करे कि जो भी हम कर रहे हैं, वह हम कर रहे हैं, और जो भी परिणाम आएगा, वह हम ला रहे हैं। यह बात तीर की तरह प्रत्येक हृदय में चुभ जानी चाहिए। तो निश्चित ही बदलाहट हो सकती है। क्योंकि यदि हम ही कर रहे हैं, तो हम रोक सकते हैं। यदि हम ही ला रहे हैं गलत परिणाम, दुष्परिणाम, तो क्यों न बीज से ही बात को काट दिया जाए।
लेकिन ये कहावतें हमें सहारा देती हैं कि हम बैठ कर देखते रहें। जनसंख्या बढ़ती रहेगी, घबड़ाने की कोई बात नहीं। प्रकृति तो हमारे भार के तले दबी जाती है। एक सीमा है हर चीज की। जैसे बुद्ध के समय में भारत की कुल आबादी दो करोड़ थी। देश संपन्न था, सुखी था, आनंदित था और जीवन की ऊंचाई की बातें करता था। और ऊंचाई से ऊंचाई तक उड़ने की चेष्टा की थी। सारी दुनिया में एक ही बात जानी जाती थी कि भारत एक सोने की चिड़िया है।

बुद्ध के बाद हमारा पतन शुरू होता है। और मैं बुद्ध को और महावीर को माफ नहीं कर सकता। मैं उन्हें आदर करता हूं, सम्मान करता हूं लेकिन माफ नहीं कर सकता। चाहे अनजाने ही सही, उन्होंने भारत की गरीबी को बढ़ने में सहायता दी है। क्योंकि उन दोनों ने यह बात सिखायी कि दुनिया को त्याग देने में ही धर्म है। और अगर लोग दुनिया को त्यागने लगें, किसान खेती को त्याग दे, दुकानदार दुकान को त्याग दे, मूर्तिकार मूर्तियां न बनाएं, लोग अगर त्यागने लगें दुनिया को तो स्वभावतः दुनिया दरिद्र हो जाएगी। क्योंकि दुनिया को हम बनाते हैं। दुनिया हमारे सृजन पर निर्भर है।
और इन दोनों व्यक्तियों ने एक बात सिखायी कि तुम सब छोड़-छाड़ कर संन्यासी हो जाओ। हजारों लोग सब छोड़-छोड़कर संन्यासी हो गए। उन हजारों लोगों से जो उत्पादन होता था, जो सृजन होता था, वह बंद हो गया। उन हजारों लोगों की पत्नियां और बच्चे अनाथ और भूखे हो गए। और वे हजारों लोग शेष सारी जनता पर बोझ हो गए। क्योंकि भिक्षा कौन देगा? वस्त्र कौन देगा? एक बहुत ऊंचे दिखने वाले ख्याल के पीछे भारत की पूरी दासता, पूरी गरीबी और पूरी दीनता छिपी है। संसार का त्याग पुण्य हो गया, संन्यास हो गया।
इसलिए मैंने जब संन्यास देना शुरू किया, तो मैंने संन्यास की पूरी परिभाषा बदली। संसार का त्याग नहीं, वरन संसार के बीच रहकर यूं रहना, जैसे कि तुम वहां नहीं हो। संन्यास की मेरी परिभाषा पुराने संन्यास से बिल्कुल उल्टी है। छोड़ना नहीं है कुछ और पकड़ना भी नहीं है कुछ। यूं जीना है, जैसे कोई नाटक में अभिनय करता हो। राम बने, तो भी जानता है कि वह राम नहीं है। और संसार में रहकर संसार का न होना बड़ी से बड़ी कला है।
छोड़कर भाग जाना तो कमजोरी है और कायरता है। और जो व्यक्ति संसार में यूं रह सके, जैसे अभिनय करता हो, वह अछूता जीता है। उस पर कोई दाग नहीं छूट जाते। और चूंकि उसे कुछ छोड़ना नहीं है, वह जीवन को कुछ देकर जाता है। सुजन करता है। जीवन उससे समृद्ध होता है। और चूंकि उसे कुछ छोड़ना नहीं है, वह जीवन को कुछ देकर जाता है। सृजन करता है। जीवन उससे समृद्ध होता है। और चूंकि उसकी कोई आसक्ति, कोई लगाव, कोई मोह और कोई बंधन नहीं है संसार से वरन यह उसकी आनंद लीला है।
कोई गरीबी की जरूरत नहीं है और न कोई गुलामी की जरूरत है। मेरे संन्यासी एक समस्या बन गए हैं धर्मों के लिए। क्योंकि उनकी पूरी धारणा संन्यास की जीवन विरोधी है और मेरी धारणा जीवन के प्रति परिपूर्ण ओतप्रोत हो जाने की है।
ये सारी कहावतें बेईमानी हैं। एक बात फिर से मैं दुहरा दूं, यह बात तीर की तरह हमारे हृदय में चुभी रहनी चाहिए कि हर कृत्य के लिए हम जिम्मेवार हैं। और हर कृत्य के परिणाम के लिए हम जिम्मेवार हैं। न तो हम किसी परमात्मा पर और न किसी प्रकृति पर अपने कृत्यों और अपने परिणामों को थोप सकते हैं। एक बार यह बात साफ हो जाए तो इस देश का सारा कचरा कट जाए। इस देश को हम फिर से नया जीवन, पुनरु जीवन दे सकते हैं। और जरूरी है कि वह दिया जाए। इस सदी तक, इसके पूर्ण होने तक, अगर ये इन्हीं धारणाओं से जीता रहा तो ये बुरी तरह मरेगा। इसने बहुत दुख झेले हैं, बहुत गुलामी झेली है, लेकिन अभी अंतिम दुख झेलने को बाकी है। उसे टाला जा सकता है।
और सरल सी बात है कि हमारे जो भी साधन हैं- समाचार पत्र हों, रेडियो हों, टेलीविजन हों, जो भी साधन हैं, जनता तक ठीक-ठीक विचार पहुंचाने के, हम उन विचारों को जनता तक पहुंचने दें। और चिंता न करें। जैसे मेरे विचार हैं। सैकड़ों प्रश्न आएंगे, उनके प्रत्युत्तर देने को राजी हूं। मैं एक भी प्रश्न हो बिना उत्तर दिए नहीं छोड़ने की बात कर रहा हूं। ये सारे शिक्षा के साधन हो जाने चाहिए। न केवल समाज और समाचार वितरण के, बल्कि सामाजिक क्रांति के भी। तो जब तुम इन सारी बातों को प्रसारित करोगी, हजारों प्रश्न आएंगे। मैं हमेशा तैयार हूं। जो भी प्रश्न तुम ठीक समझो, जरूरी समझो, उसे सदा मेरे पास ले आ सकती हो।
दिसंबर, अपराह्म, कुल्लू-मनाली

फिर पत्तों की पाजेब बजी सातवां प्रवचन

मेरी निंदाः मेरी प्रशंसा

भगवान, लंबे अनुभव से यही दिखाई देता है कि ऋषियों का तथा बुद्धपुरुषों का संदेश हमेशा गलत समझा जाता है या उपेक्षित रह जाता है। क्या इसका यह अर्थ है कि अपनी भूलों के कारण मनुष्यता अनंत काल तक दुख झेले, यही उसकी नियति है?

मैं निराशावादी नहीं हूं। मैं आशा के विपरीत आशा करता हूं। और यह प्रश्न भी कुछ उसी प्रकार का है।
प्रज्ञापुरुष के, बुद्धपुरुष के रास्ते में अपरिसीम कठिनाइयां होती हैं।
पहलीः उसकी अनुभव मन की निर्विचार स्थिति में घटता है। तो जब वह उसे लोगों तक पहुंचाने की कोशिश करता है, तो मजबूरन उसे शब्दों का उपयोग करना पड़ता है। सौ बुद्धपुरुषों में से निन्यानबे चुप रहे हैं; क्योंकि जैसे ही तुम निःशब्द अनुभव को शब्दों में ढालते हो, तो उसकी आत्मा खो जाती है। फर्क यह है कि तुम एक सुंदर पक्षी को खुले आकाश में उड़ते हुए देखते हो; वह इतना सुंदर दृश्य होता है- उसकी स्वतंत्रता वह खुला आकाश, वह अनंतता! और फिर तुम उस पक्षी को पकड़कर सोने के पिंजरे में रखते हो, जो कि बेशकीमती होता है। एक तरह से वह वही पक्षी है, लेकिन फिर भी वही नहीं है। उसका आकाश कहां गया? उसके पंख कहां है? उसकी स्वतंत्रता कहां गई? सब खो गया। उसकी अनंतता खो गई। अब वह मृतवत हो गया।
ठीक यही घटना बुद्धपुरुष के साथ घटती है। चेतना के उत्तुंग शिखर पर उसे कुछ अनुभव हुआ है, जहां कोई शब्द, कोई विचार प्रवेश नहीं कर सकता। हिमालय के उन स्वर्णिम शिखरों से, उस अनुभव को उन अंधेरी घटियों में उतारना पड़ता है, जहां रोशनी की किरण भी कभी उतरी नहीं।
तो जैसे ही वह बोलता है, उसी समय कोई सारभूत तत्व उसमें से खो जाता है। पहला पतन शुरू हुआ। पहली गलतफहमी का प्रारंभ हुआ। और इसकी शुरुआत स्वयं बुद्ध पुरुष से होती है। इसका दोष साधारण आदमी के सिर पर रखने जरूरत नहीं है।
वह शब्द जब साधारण लोगों तक पहुंचता है, जो अनेक प्रकार के संस्कारों
से भरे हैं, वे उसे उस ढंग से नहीं समझ सकते, जो बुद्धपुरुष का आशय होता है। लेकिन उनकी कोई गलती नहीं है, इसके लिए उन्हें सजा देना ठीक नहीं है। वे दया के पात्र हैं। उन्होंने उस तरह का कुछ जाना ही नहीं है।
यह ऐसे ही है, जैसे तुम एक छोटे बच्चे से सेक्स के आरगा म के संबंध में बात करो। तुम बात कर सकते हो, लेकिन वह बच्चा कुछ नहीं समझेगा कि तुम क्या कह रहे हो। उसकी दृष्टि में तुम सिर्फ बकवास कर रहे हो। और अगर वह बच्चा तुम्हें तुम्हारी पत्नी से प्रेम करते हुए देखे, तो वह समझेगा कि तुम उसकी मां को मार रहे हो। उससे ज्यादा वह नहीं समझ सकता। तुम अपने जीवन का सबसे सुंदर अनुभव ले रहे हो, और तुम्हारा बच्चा सोच रहा है, तुम उसकी मां की हत्या कर रहे हो। उसकी मनोदशा के अनुसार, अधिक से अधिक वह केवल सोच यह सकता है कि तुम लड़ रहे हो।
जब जाग्रत व्यक्ति के शब्द मूर्च्छित व्यक्ति तक पहुंचते हैं, तो ठीक वही स्थिति होती है- उसका पूरा रंग ही बदल जाता है क्योंकि मूर्च्छित व्यक्ति अपनी धारणाओं के परदे की ओट से उसे सुनता है। और इस तरह का अनुभव उसे कभी हुआ नहीं है। इसलिए गलतफहमी पैदा होती है।
लेकिन उस गलतफहमी के बावजूद, उसमें कुछ सुगंध होती है, कुछ सौंदर्य होता है, कोई गरिमा होती है, जिससे साधारणजन उसके भक्त हो जाते हैं, उसको समर्पित हो जाते हैं।
लेकिन उनकी भक्ति का, उनके समर्पण का शोषण होने ही वाला है- उस बुद्धपुरुष द्वारा नहीं, बल्कि एक नये किस्म के व्यक्ति द्वाराः पुरोहित और उसकी पूरी जमात- पंडिताई करने वाले। वे मध्यस्थ हो जाते हैं। वे

विद्वान हैं, शब्दों के जानकार हैं। वे बुद्धपुरुष के वचनों की उन लोगों के लिए व्याख्या करने का दिखावा करते हैं, जो समझ नहीं सकते। और वे सबसे बड़ी बाधा बनते हैं।
आज तक यह हकीकत रही है। और मैं नहीं सोचता कि इसमें कुछ बदलाहट होगी।
यह हालत तब तक बनी रहेगी जब तक कि हम बुद्धत्व को एक व्यापक अनुभव नहीं बनाते- इसमें कुछ विशिष्टता नहीं है कि केवल कुछ लोग ही गौरीशंकर पर पहुंचे, और बाकी सब लोग सिर्फ विश्वास करें कि गौरीशंकर है, क्योंकि एडमंड हिलेरी ऐसा कहता है। जब तक हम उसे इतना व्यापक नहीं बनाते कि कोई भी पुरोहित तुम्हारे साथ छल न कर सके।
और यह मेरा एक मूलभूत काम हैः ध्यान को इतना सरल बनाना है कि जिसको भी मौन होने में उत्सुकता है, जिसको भी सहज, विश्रामपूर्ण, शांत होना है, जिसको भी स्वप्नविहीन निद्रा का अनुभव लेना है... मैं ईश्वर के संबंध में बात नहीं कर रहा हूं, क्योंकि तब फिर बड़ी विशिष्ट बात हो जाती है। मैं स्वर्ग की चर्चा नहीं कर रहा हूं, क्योंकि तब फिर वह एक विशिष्ट खोज बन जाती है। मैंने पुनर्जन्म के विषय में कुछ नहीं कह रहा हूं। मैं उन बातों का फिक्र कर रहा हूं, जिनमें कोई उत्सुकता न हो ऐसा आदमी खोजना कठिन है- मौन, शांति, प्रेम, करुणा, आनंद।
और मैं ध्यान को इन बातों से जोड़ने की कोशिश कर रहा हूं, ईश्वर से नहीं- जिसे किसी ने देखा नहीं है; या स्वर्ग से, जो कि मृत्यु के उस पर है; पुनर्जन्म के साथ, जो कि सिर्फ एक परिकल्पना हो सकती है; और उस सब तरह के शब्दों के जाल से, जो धर्मों ने पैदा किए हैं।
मैं वैज्ञानिक ढंग से सोचता हूं। मेरा दृष्टिकोण यह है कि चाहे तुम हिंदू हो या मुसलमान, या ईसाई या कम्युनिस्ट, आस्तिक या नास्तिक उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। मैं नहीं देखता कि नास्तिक को शांत या मौन होने में कोई रस नहीं है। हो सकता है वह ईश्वर में उत्सुक न हो, लेकिन वह चित्त की उस स्वस्थता में निश्चित रूप से उत्सुक होगा, जो उसके अंतरतम केंद्र से पैदा होती है। और ध्यान उस अंतर तक केंद्र तक पहुंचने की एक विधि है।
और मैंने दुखा है कि ध्यान की एक सौ बारह विधियां हैं। और उनमें सब विधियां आ जाती हैं, उनमें और कुछ भी जोड़ा नहीं जा सकता। वह विज्ञान परिपूर्ण है। लेकिन उन एक सौ बारह विधियों को जोड़नेवाला एक आंतरिक धागा है। जैसे फूलमाला में फूलमाला में सब फूलों को जोड़नेवाला एक भीतरी धागा होता है। तुम्हें माला दिखायी पड़ती है, फूल दिखायी पड़ते हैं लेकिन वह धागा नहीं दिखायी पड़ता, जो वस्तुतः उन फूलों को बांधे रखता है और माला का आकार देता है।
इन विधियों के बीच एक ध्यान का अंतःसूत्र है, और वह बिल्कुल सरल है। अति साधारण आदमी भी कर सकेगा। एक बच्चा, जो भाषा समझ सकता है, वह उसे कर सकेगा। जो आदमी मरण-शैया पर पड़ा हो, अपनी आखिरी सांसें गिन रहा हो, वह भी उसे कर सकता है और स्वयं को रूपांतरित कर सकता है।
तो मेरे देखे, एक मात्र सरलतम उपाय जो संभव है, वह यह कि ध्यान को सरल बना दें, उसे उन बातों से जोड़ दें जिनकी सामान्य जन आकांक्षा करते हैं। उसे नाहक जटित मत बनाओ; धार्मिक, दार्शनिक पुट मत दो,। उसे एक विशुद्ध वैज्ञानिक विधि रहने दो।
यह ऐसे ही है जैसे, तुम नहीं जानते हो कि विद्युत कैसे काम करती है, लेकिन तुम्हें बटन की जानकारी है। तुम्हें विद्युत की आंतरिक कार्य-प्रणाली पता नहीं है। उसके लिए तुम्हें अध्ययन करना पड़ेगा। इसे समझने के लिए तुम्हें विश्वविद्यालय जाना पड़ेगा। और ऐसा कहा जाता है कि अलबर्ट आइन्स्टीन जैसे व्यक्ति ने भी कहा है कि मैं भी ठीक-ठीक नहीं जानता कि विद्युत किस तरह काम करती है; और मैं यह भी नहीं जानता कि विद्युत क्या चीज है। लेकिन हम उसका प्रयोग करना जानते हैं।
निश्चय ही, ध्यान विद्युत से कहीं अधिक सूक्ष्म है। मनुष्य को सिर्फ इतना ही सीखना है कि उसका प्रयोग कैसे किया जाए। और मेरे पूरे जीवन में मैंने एक भी ऐसा आदमी नहीं देखा, जो इन बातों में उत्सुक न हो, जिनके संबंध में मैंने तुम्हें बताया। उसे ध्यान शब्द से भय होगा लेकिन वह मौन से नहीं

डरता। उसे शांति से कोई भय नहीं है, प्रेम से कोई भय नहीं है। उसे आनंद से कोई भय नहीं है। और उसे स्वयं को जानने से भी कोई डर नहीं।
एक बार तुम ये मानवीय आकांक्षाएं ध्यान के विज्ञान से जोड़ दो तो आशा
की जा सकती है कि मनुष्यता की, हमेशा अज्ञान में रहने की नियति बदल जाए। और संभावना है कि बुद्धपुरुष के वक्तव्य समझें जा सकें। लेकिन वे तभी समझे जा सकते हैं जब तुम्हारे भीतर कोई ऐसा अनुभव हो, जो उनसे सेतु बना सके। बुद्ध असफल हुए, महावीर असफल हुए। कारण सीधा-साफ था- उनके पास अनुभव था; तो जहां तक उनका खुद का संबंध है, वे सफल थे। लेकिन उस अनुभव को लोगों तक पहुंचाने में वे असफल रहे। क्योंकि उन्हें इस बात का अहसास नहीं था कि साधारण आदमी को अस्तित्व का रहस्य जानने में कोई रस नहीं है। वह अपने ही जीवन के बोझ के नीचे दबा जा रहा है। उसके पास इस जीवन का रहस्य खोजने के लिए समय कहां? और यदि उसने जीवन का रहस्य खोज भी लिया, तो उसका करेगा क्या? तुम उसे खा नहीं सकते, उससे घर बना नहीं सकते।
वे लोग अपनी ऊंचाइयों से बोल रहे थे। उन्होंने इस बात की फिकर नहीं की
कि जो लोग अंधेरी घटियों में रहते हैं, उनकी भाषा अलग होती है। कहावत है कि जिसको प्यासा हो वह कुएं के पास जाता है, कुआं प्यासे के पास नहीं आता। एक खास अर्थ में वह सही है, लेकिन जहां तक अध्यात्म का संबंध है, मैं आग्रह पूर्वक यह कहना चाहूंगा कि प्यासा कुएं के पास नहीं जा सकता। एक तो उसे पता ही नहीं होता कि वह प्यासा है। उसे यह भी पता नहीं होता कि यह कैसी प्यासा है, क्योंकि उसने पानी तो कभी चखा नहीं है। उसे यह भी पता नहीं है कि कुएं होते हैं, जहां उसकी प्यास बुझ सकती है।
तो इस प्राचीन कहावत के विपरीत मैं तुमसे कहता हूं कि कुएं को ही प्यासे के पास जाना पड़ता है; इससे अन्यथा हो नहीं सकता। और कुएं को प्यासे के पास जाने का रास्ता यह हैः साधारण आदमी के संस्कारों को समझे, उसकी आकांक्षाओं को समझे; और किसी तरह उसकी आकांक्षाओं को ऐसी चीज से जोड़े जो उसे उसके अंधकार से बाहर निकाले। यह कठिन काम है; शायद सर्वाधिक कठिन, लेकिन इसमें चुनौती भी है।
मैं अपनी पूरी जिंदगी साधारण आदमी से बातें करता आया हूं, और मैं जानता हूं कि उनके साथ किसी तरह का संवाद स्थापित करना कितना मुश्किल होता है। लेकिन मैं बहुत विनम्रता पूर्वक कहना चाहूंगा कि मैं हजारों हृदयों तक पहुंचने में सफल रहा हूं। और यदि यह मेरे लिए संभव हो सका, सबके लिए संभव हो सकेगा।
यह मेरा मूलभूत कथन हैः जो एक मनुष्य के लिए संभव हो सकता है वह सभी मनुष्यों के लिए संभव हो सकता है। तुम्हारे तथाकथित प्राचीन धर्म-संस्थापकों ने एक बुनियादी भूल की है, और वह है- उन सबका दावा है कि वे विशिष्ट हैं।
जीसस कुंआरी माता से, मैरी से पैदा होते हैं। तुम कुंआरी माता से पैदा नहीं होते। और यदि तुम पैदा होओगे, तो तुम जार्ज बास्टर्ड कहलाओगे, जीसस क्राइस्ट नहीं। उनके अनुयायियों के सैकड़ों कहानियां पैदा की हैं, जो कि सब मिथ्या हैं- वे पानी के ऊपर चले, कि उन्होंने लोगों के सिर पर हाथ रखकर उनकी बीमारियां दूर कीं। यही नहीं, उन्होंने मुर्दे को भी जिला दिया। यदि से सब कहानियां सच हैं, तो एक छोटी सी बात सोचना... यदि ये सब कहानियां सच हैं, तो जीसस के समसामयिक लोगों के ध्यान में ये बातें कभी नहीं आयीं। एक भी यहूदी किताब में इसका उल्लेख नहीं है... और इतने चमत्कार से भरे हुए कृत्य। उल्टे उसका पुरस्कार यह है कि वे जीसस का सूली पर चढ़ाते हैं। मैं नहीं सोचता कि जो आदमी मुर्दों को जिंदा करता है, उसे किसी सदी में, किसी देश में सूली पर टांगा जा सकता है।
सच तो यह है कि ये सब किस्से मन गढ़त हैं। लेकिन अनुयायियों को इस तरह
की कहानियां पैदा करनी ही पड़ती हैं ताकि वे जीसस के और तुम्हारे बीच जितना फासला पैदा कर सकें उतना करें।
राम और अन्य अवतार इस पृथ्वी पर ईश्वर के अवतार हैं। तुम ईश्वर के अवतार नहीं हो, कृष्ण हैं। स्वभावतः यदि कृष्ण परम बुद्धत्व की दशा का उपलब्ध होते हैं, तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं है। वे तो ईश्वर के पूर्णावतार हैं ही। तुम एक क्षुद्र जीव हो।

मनुष्य के लिए जो अंग्रेजी शब्द है, उसका अर्थ है, कीचड़। ट्ूमन शब्द ट्ूमन से आता है; ट्ूमन यानी मिट्टी। मनुष्य के लिए जो अरेबिक शब्द हैः आदमी, उसका भी अर्थ होता है, मिट्टी। तुम सिर्फ कीचड़ हो। तुम्हारे और पैगंबरों और धर्म-संस्थापकों के बीच उलंश्य खाई है।
बुद्ध जब पैदा हुए तब उनकी मां खड़ी थी। अब एक भी स्त्री ने बच्चे को खड़े-खड़े जन्म नहीं दिया है। लेकिन वह इतना कठिन नहीं है। हो सकता है वह कोई कसरती महिला रही हो। बुद्ध खड़े-खड़े पैदा हैं इतना ही, वे सात कदम चलते हैं- यह और भी हैरान कर देनेवाली बात है। यह पहला कृत्य है, जो वे पृथ्वी पर आने के बाद करते हैं। और सात कदम चलने के बाद, वे मेरे जगत के प्रति घोषणा करते हैं कि मैं उनमें सबसे महान बुद्धपुरुष हूं, जो भी आज तक इस पृथ्वी पर हुई; या कि भविष्य में कभी इस पृथ्वी पर होंगे।
अब, यह सब बकवास... ! वह बच्चा सात मिनिट का भी नहीं है। वह चल रहा है, बोल रहा है, घोषणा कर रहा है!
सभी धर्मों की कुल आकांक्षा और पूरा ख्याल यह रहा है कि उनके संस्थापकों को मनुष्यता से दूर किया जाए ताकि उनके प्रति आदर पैदा हो, उनकी पूजा हो भक्ति हो। लेकिन यह सब आदर, पूजा और भक्ति आध्यात्मिक गुलामी के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। यदि ये सब लोग इस बात पर जोर देते कि वे उतने ही मानवीय हैं जितने कि तुम हो; और उन्होंने जो भी पाया है वह तुम्हारी भी क्षमता है; और तुम्हारे और उनके बीच कोई सेतु नहीं है क्योंकि कोई खाई की नहीं है। फर्क नहीं है जो कुली और फूल के बीच होता है।
वह फर्क क्या है? वस्तुतः कली ज्यादा अच्छी स्थिति में हैं। फूल तो सांझ होते-होते मुरझा जाएगा। कली के आगे उसका पूरा जीवन है। कली का भविष्य है। फूल खिल गया है; उसका सिर्फ अतीत है। उसने अपनी सुगंध बिखेरे दी है। अब उसकी पंखुड़ियां गिर जाएंगी और फूल खो जाएगा। कली तो अभी जीवन है। उसका खजाना अभी लुटने को है।
यह फर्क वैसा ही है जैसे उगते सूरज में और डूबते सूरज में होता है। बुद्ध डूबते सूरज हैं- सुंदर, महिमा मंडित, रंगों से भरपूर... लेकिन ध्यान रहे, वह डूबता सूरज है। वे अपनी परम क्षमता को उपलब्ध हुए हैं। तुम उगते सूरज हो, जिसकी पूरी क्षमता अभी प्रकट होने को है, और यात्रा के लिए पूरा आकाश पड़ा है। अभी तुम्हें पूरे रंग बिखेरे ने हैं, सब अनुभवों से गुजरना है।
अगर ये सारे धार्मिक लोग एक मुद्दे पर जोर देते कि बुनियादी रूप से उनमें और तुममें कोई भेद नहीं है, तो मनुष्यता बिल्कुल ही अलग स्थिति में होती- अत्तुंग चेतना, सजगता होश और असीम आत्म-सम्मान। उन्होंने तुम्हें आत्म-सम्मान से वंचित कर दिया। उन्होंने मनुष्यता को नष्ट कर दिया। उन्होंने तुम्हें सिर्फ जंतु, कीचड़ मिट्टी बने रहने पर मजबूर किया है। मेरा प्रयास बिल्कुल भिन्न है। इसलिए पूरी दुनिया में मेरी, हर किसी
के द्वारा निंदा होती है। उसे मैं अपनी प्रशंसा समझाता हूं क्योंकि देर-अबेर, ऐसे लोग होंगे, जो पहचाना पाएंगे कि मैं क्यों कर रहा हूं। इसमें समय लगता है।
शायद मैं जब स्वीकृत होऊंगा तब मैं यहां नहीं रहूंगा। लेकिन मैं जानता हूं कि यह होने वाला है क्योंकि मैं जो कह रहा हूं, वह परम सत्य हैः गौतम बुद्ध में और तुममें कोई फर्क नहीं है। फर्क इतना ही है कि तुम सोए हुए हो और वे जागे हुए हैं। यह किस तरह का फर्क हुआ? सोया हुआ आदमी किसी भी क्षण जाग सकता है। उसमें जागने की क्षमता है, अन्यथा वह सो नहीं सकता। मरा हुआ आदमी सो नहीं सकता क्योंकि वह जाग नहीं सकता। सोना और जागना एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसलिए मैं बा-बार जोर देकर कहता हूं कि मैं विशिष्ट नहीं हूं मैं कोई ईश्वर का अवतार नहीं हूं, मैं मसीहा नहीं हूं, मैं कोई पैगंबर नहीं हूं।
मैं सिर्फ एक साधारण आदमी हूं- तुम्हारी ही तरह। फर्क सिर्फ इतना ही है- और वह कोई ज्यादा नहीं है कि मैंने अपनी आंखें खोल ली हैं और तुम उन्हें बंद किए हो। और मैं हर तरह से तुम्हें हिलाने की कोशिश कर रहा हूं; तुम्हें यहां से और वहां से चोट करने की कोशिश कर रहा हूं- इस आशा में कि तुम अपनी आंखें खोलो।

और एक बार तुम आंखें खोलोगे, तो देखोगे कि फर्क कभी था ही नहीं। इसकी पूरी आशा है कि एक प्रबुद्ध मनुष्यता का जन्म हो।
लेकिन यह काम इस ढंग से होना चाहिए जैसा मैं कह रहा हूं; वैसा नहीं जैसा मुसलमान, हिंदू, बौद्ध, जैन, ईसाई या यहूदी करते आ रहे हैं। उस मार्ग पर तो मनुष्यता का अंधेरे में रहना तय है।
जरा जीसस के पूरे जीवन को देखो। बड़ी छोटी सी जिंदगी है। तैंतीस साल की उम्र में उनकी सूली हुई। और उनका शिक्षक का जीवन तो सिर्फ तीन साल का है। जब वे तीस साल के थे तब उन्होंने सिखाना शुरू किया। उन तीन सालों में वे लगातार एक ही बात सिखा रहे हैं कि वे ईश्वर के एकमात्र प्रजात पुत्र की तरह, एक विशिष्ट संदेश-वाहक की तरह स्वीकृत हों। वे पैगंबर हैं। वे जो कह रहे हैं, वह वे नहीं कह रहे हैं, वे प्रभु के वचन हैं। तीन साल तक, निरंतर उनका प्रयास यही है कि किसी भांति सिद्ध कर दें कि वे विशिष्ट हैं। लगता है, उन्हें महत्वोन्माद हुआ है।
इस से कहीं अधिक सुंदर बातों की शिक्षा दी जा सकती है। और इस तरह तो वह किसी के काम नहीं आएगी। वह तो उनके खुद के काम नहीं आयी। वह उन्हें सूली तक ले गई।
लेकिन इन लोगों को गलत समझा जाना अनिवार्य था क्योंकि उन लोगों ने अपने और मनुष्यता के बीच अंतर पैदा किया- बहुत बड़ा अंतर। वह एक तरह का आध्यात्मिक अहंकार मालूम पड़ता है। उस अंतर को खत्म कर दो। तुम्हारे बुद्धों, तुम्हारे महावीरों, तुम्हारे पैगंबरों और मसीहों को भीड़ के साथ एक हो जाने दो। साधारण मनुष्यता के अंश हो जाओ।
और साधारण होने में असीम सौंदर्य है। वह इतनी विश्रामपूर्ण अवस्था है! क्योंकि विशिष्ट होने में बहुत तनाव होता है, एक सतत तनाव कि तुम अपना जो स्तर दुनिया को दिखाते हो, वह तुम्हें कायम रखना पड़ता है।
अब जैसे महावीर नग्न रहे। अब यह मूढ़ता है। पूरे साल... गर्मी होती और
वे नग्न रहते, सर्दी होती और वे नग्न रहते-सिर्फ यह सिद्ध करने के लिए वे विशिष्ट हैं और तो कृष्ण, न तो राम, न बुद्ध, न और कोई ऊंचाई तक पहुंचा है, जहां वे पहुंचे हैं। वे अभी भी कपड़ों पर निर्भर हैं और महावीर ने आत्यंतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली।
वे अपने दांत साफ नहीं करेंगे, क्योंकि यह अपने शरीर को सुंदर बनाने
का प्रयास है। वे स्नान नहीं करेंगे क्योंकि उसका मतलब हुआ, तुम अभी भी भौतिक बातों में उलझे हो। उनसे बदबू आती थी। बिहार जैसे प्रदेश में, जो कि धूल से भरा है... और उन्हें पसीना आता, और धूल... ! और न स्नान, न मुंह साफ करना... !
लेकिन वे कुछ सिद्ध कर रहे हैं। वे भयंकर तनाव में जीए होंगे। इतना ही नहीं, तुम्हें भी उनकी बदबू आती थी और उन्हें खुद भी अपनी बदबू आती होगी। जो भी व्यक्ति विशिष्ट होना चाहता है, उसे कुछ तनाव सम्हालने पड़ते हैं। सिर्फ साधारण आदमी विश्राम में जी सकता है क्योंकि उसे डरने का कोई कारण ही नहीं है।
ये सब लोग, जो तुम्हारे धर्म-संस्थापक हैं, वे प्रामाणिक रूप से आध्यात्मिक नहीं हैं। यह एक नए किस्म की राजनीति है। यह एक नए प्रकार की ताकत है। उन्होंने इस बात को खोज लिया है कि सिंहासन पर बैठे बिना, जनता की कोई जिम्मेदारी लिए बिना उस पर राज कैसे किया जा सकता है।
और छोटी-छोटी बातें... मैं एक गांव से गुजर रहा था, तो वहां लोगों ने मुझसे कहा कि आप हमारे गांव के एक आदमी से जरूर मिलें, जो प्रति दिन हजारों लोगों को आकर्ष्ति करता है। क्योंकि दस साल से वह खड़ा है। मैंने कहा, लेकिन सिर्फ खड़े रहने सके कोई आध्यात्मिक गुणवत्ता को कैसे पा सकता है? वह पागल होगा। तुम उसे किसी पागलखाने में भेज दो। और हजारों लोगों को आकर उसकी पूजा करने की जरूरत क्या है?
जो कुछ भी हो, चूंकि मैं उस रास्ते से गुजर रहा था, मैं रुका और उस आदमी
को देखने गया। और मेरी आंखों में आंसू आ गए। उस आदमी के पैर ऐसे हो गए थे, जैसे हाथी-पांव की बीमारी में हो जाते हैं। उसमें तुम्हारे पैर मोटे हो जाते हैं और पूरा शरीर सिकुड़ जाता है। वह बैठना चाहता तो भी बैठ नहीं सकता। और बारह साल तक उसने जो उपाय खोजा था... क्योंकि बारह साल तक खड़े रहना

आसान नहीं है। वह एक लकड़ी के डंडे से झूल रहा था ताकि उसे नींद भी आ जाए तो भी वह गिर न पड़े। और उसके आसपास लोग निरंतर मंत्र जाप कर रहे थे, उसे सहारा दे रहे थे ताकि वह गिरे न।
मैंने उस आदमी के चेहरे को देखो- बुद्धि का कोई लक्षण नहीं। मैंने उसकी आंखें देखीं- बिल्कुल सूनी, मुर्दा, मानो पत्थर की बनी हों। उसने क्या पाया? उसने अपरिसीम ताकत पायी। हजारों अनुयायी हर रोज अपने पैसे उसके चरणों में चढ़ा रहे हैं। सुबह से रात को देर तक लोगों का तांता बंधा रहता था।
यह एक खास तरह की राजनीति है। और इस राजनीति ने ही खाई पैदा की है। मैं
इस खाई को नष्ट करना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि तुम बुद्ध के हाथ में हाथ डालकर चलो। और फिर कोई कारण नहीं है... क्योंकि कभी-कभी शब्दों के द्वारा जो नहीं कहा जा सकता, वह केवल हाथ को हाथ में लेने से कहा जा सकता है। कभी- कभी कोई भी भाषा जिसे कह नहीं पाती, वह सिर्फ तुम्हारे पास चुपचाप बैठने से या एकाध आलिंगन से अभिव्यक्त किया जा सकता है। भाष, अभिव्यक्ति का एकमात्र माध्यम नहीं है।
उदाहरण के लिए, मैं अमेरिकन कैद में था, और हर जेलर मुझसे प्रेम करने लगता था। पहला जेलर तो मेरे प्रेम में इतना पागल हो गया कि उसने कारागृह के अंदर पत्रकार परिषद आयोजित करने की इजाजत दे दी- जो कि कभी नहीं हुआ था। उसने जोखिम ली। उसने कहा, चिंता की कोई बात नहीं है, मैं एक-दो साल अवकाश लेनेवाला हूं। ज्यादा से ज्यादा, वे मुझे अभी निकाल सकते हैं। लेकिन मैं एक मिसाल बनानेवाला हूं।
उसने कारागृह में विशाल पत्रकार परिषद आयोजित की। वह मुझे वहां ले गया। मैंने उससे कहा कि अब तुम्हें एक बात और करनी होगी, तुम्हें यह हथकड़ियां होंगी। क्योंकि हथकड़ियों के साथ मैं नहीं बोल सकता। क्योंकि मेरा आधा भाषण तो मेरे हाथ की मुद्राओं से होता है। मैं शब्द नहीं खोज पाऊंगा।
और वह समझ गया। उसने कहा, यह सच है; जब हम आपको सुनते हैं, तो हम आपके हाथों को भी सुनते हैं। वे भी कुछ कहते हैं। वे भी कुछ इंगित करते हैं। वे भी किसी बात पर जोर देते हैं। तो भाषा जो नहीं कह पाती, वह अधूरापन वे पूरा करते हैं। जो हाथों से भी नहीं कहा जा सकता वह आंखों से कहा जा सकता है। लेकिन यह फासला बनाए रखना विशुद्ध अहंकार है। मैं जानता हूं कि यह काम अति कठिन है लेकिन इसमें एक बहुत बड़ी चुनौती भी है। और मेरे संन्यासियों को यह काम करना होगा। कभी एक क्षण के लिए भी अपने को विशिष्ट या असाधारण मत समझना। साधारण जन और हम अलग नहीं हैं। वे सोच सकते हैं कि वे अलग हैं लेकिन हम कैसे सोच सकते हैं कि हम अलग हैं? वे हमारे बीच एक फासला बनाए रखने की बात सोच सकते हैं लेकिन हम कैसे सोच सकते हैं? हम उनके हृदय के निकट आना चाहते हैं। अतीत में जो हुआ है उसे भुलाना है। और अतीत ही सब कुछ नहीं है। अभी हमारे आगे अनंतता उपलब्ध है। तो जो भी संभव है उसे संभव बनाया जा सकता है।
भगवान, क्या आप उन निष्कपट व्यक्तियों के लिए कुछ कहना चाहेंगे, जिन्होंने सिर्फ अखबारों में आपके संबंध में पढ़ा है, और आपको सीधे पढ़कर समझने की कोशिश नहीं की कि आपने वास्तव में क्या कहा है। उनके लिए आपका मूलभूत संदेश क्या है?
सभी लोगों के लिए मेरा मूलभूत संदेश यह है कि यदि तुम सत्य के खोजी हो,
तो मूल-स्रोत के पास जाओ। केवल प्रसार माध्यम पर निर्भर रहना ठीक नहीं है। समाचार-माध्यम की अपनी सीमाएं हैं।
पहलीः वे मेरा पूरा संदेश नहीं दे सकते। उसके लिए उनके पास जगह नहीं है।
दूसरीः यदि वे मेरा पूरा संदेश छापेंगे तो उसके लिए उन्हें पाठक नहीं मिलेंगे। पूरे समाचार-माध्यम का ध्यान पाठकों पर लगा रहता है- तुम्हारी जरूरत क्या है, तुम क्या चाहते हो।
यह बात बड़ी विचित्र है, लेकिन हम इस संबंध में सोचते ही नहीं हैं कि तुम्हारे नेता अपने अनुयायियों के अनुयायी होते हैं। वे हमेशा देखते रहते

हैं कि अनुयायी क्या पसंद करते हैं, वही कहना है। तुम्हें जो करना है करो, लेकिन वही, जो तुम्हारा अनुयायी सुनना चाहता है।
और वही हाल अखबारों का है; दूरदर्शन और आकाशवाणी का है- वही कहो, जिसकी लोग मांग करते हैं। और लोग गलत चीजों की मांग करते हैं- सेक्स, अश्लीलता। वे हिंसा की मांग करते हैं। वे सब तरह की सनसनीखेज वार्ताएं चाहते हैं। जीवन के श्रेष्ठतर मूल्यों मग उनका कोई रस नहीं है। इसका कारण यह है कि सदियों-सदियों तक तुम्हारे धार्मिक लोगों ने उनकी निम्न वृत्तियां इस बुरी तरह से दबायी हैं कि अब उन निम्नतर वृत्तियों के पास भारी ताकत इकट्ठी हो गई है, और वे वृत्तियां किसी न किसी प्रकार की तृप्ति मांगती हैं।
तुमसे से कहा गया है कि हत्या करना गलत है। इसलिए स्वभावतः तुम हत्या नहीं कर सकते। लेकिन किसी फिल्म में हत्या का दृश्य देखते-देखते तुम अपने भीतर होती हुई बदलाहट को अनुभव कर सकते हो। तुम कुर्सी से पीठ टिकाकर आराम से बैठे होते हो, लेकिन जैसे ही हत्या का दृश्य आता है। तुम सजग होते हो। तुम कुर्सी की पीठ छोड़ देते हो, अकड़ कर बैठ जाते हो, हत्या के पास आना चाहते हो तुम छोटी सी बात को भी चूकना नहीं चाहते। तुम्हारा उस दृश्य के साथ तादात्म्य हो जाता है।
तुम्हारे धार्मिक लोगों ने तुम्हारे साथ यह किया है। तुम्हारी फिल्मों में हिंसा, हत्या, बलात्कार, आत्महत्या इनकी भरमार होती है। ये तुम्हारी ही मांगे हैं। और जो लोग इन फिल्मों अखबारों, पत्रिकाओं का निर्माण कर रहे हैं, वे सिर्फ व्यावसायिक हैं।
किसी समय मैं खुद एक पत्रकार रहा हूं। लेकिन कुछ हफ्तों से ज्यादा मैं वहां टिक न सका। मालिक ने बुलाया और कहा कि तुम्हें सतयुग में पैदा होना चाहिए था। मैंने पूछा, क्या हुआ? वे बोले, तुम तो मेरे अखबार का सत्यानाश कर दोगे। तुम्हारे कारण पहले ही मेरे पाठकों की संख्या आधी हो गई है। मैंने कहा, यह सवाल नहीं है कि आपका अखबार बंद होता है या नहीं; लेकिन लोगों तक सही बातें पहुंचनी चाहिए। वे बोल, लेकिन उन्हें सही बातें नहीं चाहिए। और मैं यहां कोई धर्म-कार्य करने नहीं बैठा हूं। मैं व्यावसायिक हूं। और मेरी मुसीबत यह है कि मैंने तुम्हारे साथ एक साल का अनुबंध किया है। और एक साल में तो तुम मेरा दिवाला निकाल दोगे।
क्योंकि मैंने सब राजनीतिकों को अंतिम पृष्ठ पर डाल दिया। मैंने उनके भाष्णों को संक्षिप्त लेखों का रूप दे दिया ताकि वे पूरे पहले पृष्ठ पर न फैल जाएं। मैंने उनके चित्र हटा दिए। हर रोज उनके चित्र अखबार में छापने की कोई जरूरत नहीं है, जिससे कि लोगों के मन पर उनकी तस्वीरें अंकित हो जाएं। क्योंकि दुनिया मग इतने अच्छे-अच्छे लोग हैं, और लोगों को उनके बारे में कुछ भी पता नहीं है। मैं चाहूंगा कि रविशंकर का बड़ा चित्र प्रथम पृष्ठ पर छापा जाए, जिसमें वह सितार बजाने में लीन हो। लोगों को जानकारी हो मैं चाहूंगा कि कोई शिल्पकार, कोई कवि... । प्रथम पृष्ठ सर्जकों के लिए हो।
और मैंने आत्महत्या, हत्या और हिंसा की सभी खबरों को बिल्कुल ही हटा दिया। क्योंकि मैंने कहा कि उससे किसी का लाभ नहीं होता बल्कि उससे ऐसा वातावरण बनता है कि जीवन में हिंसा अनिवार्य है। वह चारों और हो रही है, हर अखबार उसकी चर्चा कर रहा है। हर कहीं बलात्कार हो रहा है, तो फिर तुम क्यों पीछे रहते हो? तुम्हारे भी मन में कोई न कोई औरत होती है, जिसके साथ तुम बलात्कार करना चाहते हो। जब हर कोई यह कर रहा है, तो मैं भी साथ क्यों न हो लूं?
मैंने उनसे एक कहानी कही। दो आदमी बाजार जा रहे थे। उनमें से एक कहता है, हिंदू और मुसलमान के बीच दंगा हो गया है, हिंदू मस्जिदों को नष्ट कर रहे हैं। इसलिए अच्छे हिंदुओं की तरह हमें वहां जाकर उनकी मदद करनी चाहिए। दूसरे आदमी ने कहा, ऐसा करना उचित नहीं होगा। मस्जिद ने हमारा क्या बिगाड़ा है? और जो मुसलमान वहां जाते हैं वे भी प्रार्थना करने ही तो जाते हैं। वही एकमात्र जगह है, जहां वे प्रार्थनापूर्ण होते हैं। और तुम उसको नष्ट कर रहे हो? यह तर्क-संगत नहीं है।
दूसरे दिन, जो आदमी कह रहा था कि हम जाकर मस्जिद को नष्ट कर दें, वह बड़ा आश्चर्य चकित हुआ। पहला आदमी उसका नष्ट कर रहा था! उसने पूछा, क्या हुआ? वह

बोला, मैंने जब देखा कि सभी लोग ऐसा कर रहे हैं, तो मैंने सोचा यही उचित होगा।
जब तुम हर रोज, हर कोने से ही बात सुनते हो- रेडियो वही कह रहा है, टेलीविजन वही कह रहा है, अखबार वही कह रहे हैं, फिल्में वही कह रही हैं। तुम एक अति सूक्ष्म मनस-वातावरण से घिर जाते हो, जिसमें तुम डूबनेवाले हो। मैंने अपने मालिक से कहा कि मैं ये बातें प्रकाशित करता हूं क्योंकि संसार में अच्छी घटनाएं भी घटती हैं। ऐसा नहीं कि कोई बलात्कार कर रहा है, हर कोई आत्महत्या कर रहा है। ऐसे लोग भी हैं, जो अच्छे काम कर रहे हैं, जीवन को सुंदर बना रहे हैं, लोगों की सहायता कर रहे हैं। और मैं उन लोगों को और उनके काम को खोजने की कोशिश कर रहा हूं।
उसी दिन मैंने बाबा आमटे पर एक लेख प्रकाशित किया था। इस आदमी के विषय में बहुत कम लोग जानते हैं कि उसने कोढ़ियों के लिए अपना जीवन समर्पित किया। उन्होंने महाराष्ट्र में कोढ़ियों के लिए एक बहुत सुंदर स्थान निर्मित किया है, जहां हजारों कोढ़ी रहते हैं। और उसने इस बात को गलत सिद्ध किया है कि सिर्फ कोढ़ियों के बीच रहने से तुम्हें कोढ़ हो सकता है। वे स्वयं उनके बीच रहे, उनकी पत्नी उनके बीच रहती है, उनके बच्चे उनके साथ रहते हैं। और वे सब उनकी सेवा करते हैं। और उन्होंने उन सभी कोढ़ियों को फिर से आदमी बनाया है; क्योंकि वे सब कुछ न कुछ निर्मित करते हैं। अगर उनके हाथ काम नहीं कर सकते, तो उनके पैर कुछ कर सकते हैं। और अगर उनके पैर कुछ नहीं कर सकते, तो उनके हाथ कुछ काम करते हैं। एक भी कोढ़ी बेकार नहीं बैठा है। और उन्होंने उनको उनकी गरिमा वापस लौटा दी। नहीं तो उन्हें उनके शहरों से बाहर निकाल दिया गया था, उन्हें शहर में प्रवेश करने की इजाजत नहीं थी। कोई उनसे बात करने को भी तैयार नहीं था। कोई उन्हें काम देने को तैयार नहीं था।
अब इस आदमी की चर्चा होनी चाहिए। तो कई लोग बाबा आमटे बन सकते हैं। ऐसे कई कोढ़ी हो सकते हैं, जो पड़े-पड़े पीड़ा झेल रहे हैं, वे उस सुंदर जगह जा सकते हैं। वे उसे आनंदवन कहते हैं। और वह सचमुच एक सुंदर वन है। और देखने जैसा है कि जो लोग सदियों-सदियों से तिरस्कृत जीवन जी रहे थे, वे किस तरह पुनः अपनी खोयी हुई गरिमा और आत्म-सम्मान प्राप्त करते हैं। अब वे अपना भोजन खुद कमा लेते हैं, अपने कपड़े खुद कमा लेते हैं। और वे किसी पर निर्भर नहीं हैं।
तुम्हें जानकर आश्चर्य हो कि बाबा आमटे की बस्ती कई धर्मार्थ संस्थाओं को पैसे देती है। और जब मैं उस बस्ती में जाता था, तो वहां के लोग इतने खुश होते थे कि हम असहाय लोगों की कुछ मदद कर सकते हैं क्योंकि हम भी किसी दिन ऐसे ही असहाय थे।
तो आपके पाठकों की संख्या कम होने दें। मैं जानता हूं कि बाबा आमटे के कारण आपकी बिक्री नहीं होगी, लेकिन चिंता की कोई बात नहीं; मैं आप पर बोझ नहीं बनूंगा। मैं आपकी संस्था चौपट करने के लिए यहां बना रह सकता हूं, लेकिन मैं आप पर बोझ नहीं बनूंगा। मैं आपको समझ सकता हूं। तो मैं इस काम से इस्तीफा देता हूं, आप अपनी बिक्री बढ़ा लें।
उनकी अपनी सीमाएं हैं। तो जिन लोगों को उत्सुकता है... समाचार-माध्यम ज्यादा से ज्यादा इतना कर सकते हैं कि लोगों में कुतूहल और उत्सुकता पैदा कर सकते हैं। वहां से तुम्हें गहरे स्रोत तक जाना होगा- मेरी किताबों तक, मेरी टेपों तक, मेरे वीडियो तक। अगर तुम सोचते हो कि सिर्फ समाचार पत्रों की जानकारी काफी है, तो तुम गलतफहमी में रहोगे।
तो आसपास के लोगों को मेरा यह संदेश है कि समाचार पत्रों से तथा अन्य समाचार माध्यमों से सूत्र ले लो। अब लगभग पूरी दुनिया में, हर समाचार पत्र मेरी चर्चा कर रहा है- हर रेडियो, हर टेलीविजन।
कुछ लोग हैं, जिनके पास मेरा सही प्रतिनिधित्व करने की बुद्धिमानी और साहस है; फिर भले ही उनको अपनी नौकरी से हाथ क्यों न धोने पड़े। कुछ ऐसे हैं, जिनके पास बुद्धि तो है लेकिन साहस नहीं है, वे अपनी नौकरी का खतरा मोल नहीं ले सकते। लेकिन वे कम से कम तथ्य को तो पेश करें, उन्हें बातों को विकृत करने की कोई जरूरत नहीं है। लेकिन अधिकांश तो ऐसे होंगे कि हर बात

को विकृत कर देंगे ताकि वह सनसनीखेज खबर बन जाए उसके लिए वे चीजों को संदर्भ के बाहर लेकर प्रस्तुत करेंगे।
लेकिन उसमें कोई अड़चन नहीं है। लोगों को चाहिए कि उनकी सीमाएं जान लें। और वे एक सूत्र को समझ लें कि अगर पूरे विश्व का माध्यम इस व्यक्ति में उत्सुक हैं... वे लोग मुझे विख्यात बनाएं शस कुख्यात, वे मेरी निंदा करे या प्रशंसा, इसका कोई सवाल नहीं है। सवाल यह है कि पूरे विश्व का समाचार-माध्यम इस व्यक्ति में उत्सुक है। तो प्रत्यक्ष रूप से इसके बारे में जानकारी हासिल कर लें। तुम्हारा कोई नुकसान नहीं होगा।
भगवान, समाचार-पत्र स्थानीय लोगों को गलत समाचार दे रहे हैं कि आपके संन्यासियों की मौजूदगी देवताओं की इस घटी को प्रदूष्ति कर देगी। भगवान, क्या हम हिमाचल प्रदेश के लोग, आपके काम से सहयोगी हो सकते है? किस तरह? हमारा मार्ग-दर्शन करने की कृपा करें।
पहली बात, इसे देवताओं की घटी कहने की जरूरत क्या है? शह देश के दरिद्रतम इलाकों में से एक हैं। वस्तुतः लोगों को आश्चर्य होता है कि तुम इसे देवताओं की घटी क्यों कहते हो। कभी रही होगी, कभी फिर हो सकेगी।
और जो जनता से कह रहे हैं कि मेरे लोग इसे प्रदूष्ति करेंगे... उनसे पूछो कि उनका मतलब क्या है? क्योंकि मेरे लोग अत्यंत साफ-सुथरे लोग हैं। मेरे लोग कोई नशीली दवाएं नहीं लेते। मेरे लोग शाकाहारी है। मेरे लोग ध्यानपूर्ण हैं, प्रेमपूर्ण हैं, आनंद में मस्त रहते हैं, नाचते गाते हैं। वे ही इसको वस्तुतः देवताओं की घटी बना सकते हैं।
मैं इस चुनौती को स्वीकार कर सकता हूं। क्योंकि मेरे दो कम्यूनों का अनुभव... एक, मैंने पूना में बनाया था, वहां दस हजार संन्यासी रह रहे थे। और कम्यून के आसपास के लोगों की मुश्किल थीः ईर्ष्या। क्योंकि ये लोग सचमुच देवताओं की तरह जी रहे थे। मैं गरीबी में विश्वास नहीं करता। मैं उसके बिल्कुल खिलाफ हूं। वह बड़ी आसानी से नष्ट हो सकती है। वह तो न्यस्त स्वार्थ उसकी रक्षा किए चले जाते हैं- राजनीतिक तथा धर्म धर्मगुरु।
दस हजार लोग आत्म-निर्भर होकर जी रहे थे; ध्यान करते, नाचते प्रेम करते, आनंद-मग्न होते। और यही बात स्थानीय लोगों में ईर्ष्या पैदा कर रही थी कि इन लोगों को क्या हो रहा है? ऐसा हमें क्यों नहीं हो रहा है? उनके विरोध का यही कारण था।
अमेरिका में भी वही हुआ। मैंने सोचा था, भारत गरीब देश है, मेरा कम्यून समृद्ध है। समृद्धि बड़ी सरल बात हैं। जरा-सी समझ, और गरीबी दूर हो जाती है, लेकिन शायद यह सिर्फ द्वीप है, और चारों ओर गरीबी का सागर है; और स्वभावतः, इससे ईर्ष्या पैदा होती है कि ऐसा आनंदमय जीवन नहीं जी सकते हैं। वह क्रोध बन जाता है, वह हिंसा बन जाती है।
मैंने सोचा था, शायद अमेरिका इस तरह की प्रतिक्रिया नहीं करेगा। लेकिन हैरान की बात है, आदमी का मन एक जैसा है। वह भारतीय में या अमेरिकन में कोई भेद नहीं करता। अमेरिका में, चार वर्षों में हमने मरुस्थल को मरूद्यान में बदल दिया। हमने स्वप्न को साकार कर दिया। शायद यह एकमात्र मौका था, जब संसार में कम्यूनि म का प्रयोग हुआ- उन चार वर्षों में। क्योंकि हमने कम्यून के भीतर पैसे का प्रचलन छोड़ दिया था। कम्यून के भीतर पैसे का प्रयोग नहीं हो सकता था।
तो तुम्हारे पास लाखों डालर हो सकते हैं और मेरे पास एक भी डालर न हो, लेकिन इससे तुम अमीर नहीं होते और मैं गरीब नहीं होता। कम्यून के भीतर पैसे का उपयोग नहीं हो सकता। तुम कम्यून को दान दे सकते थे लेकिन तुम कम्यून के भीतर कुछ खरीद नहीं सकते थे। तुम्हारी जो भी जरूरत है, वह कम्यून पूरी करेगा। चार वर्षों में एक भी जुर्म नहीं हुआ- न बलात्कार, न हत्या, न आत्महत्या, न कोई हिंसा।
और अमेरिकन राजनीतिक डरने लगे क्योंकि समाचार माध्यम के लोग यह देखने आने लगे कि हमने क्या किया। वह मरुस्थल वहां पर पचास वर्षों से पड़ा था; उसे कोई खरीदने को तैयार नहीं था। मरुस्थल लेकर तुम क्या करोगे? और वह कोई जमीन का छोटा सा टुकड़ा नहीं था। उसका क्षेत्र था, चौरासी हजार एकड़। हमने वह जमीन खरीद ली।

ओरेगान के राजनीतिक हंसे थे। पड़ोसी हंसे थे कि हम मूर्ख लोग हैं। हमें कुछ पता नहीं है। हम जमीन का करेंगे क्या? उसमें कुछ पैदा नहीं हो सकता। लेकिन हमने वहां तालाब बना लिए, बरसात का पानी इकट्ठा करके बड़े-बड़े बांध बनाए, पांच हजार-संन्यासियों के लिए मकान बनाए। और सब कुछ हमने अपने हाथों से किया। एक भी अमेरिकन से हमने कोई सहायता नहीं ली। कम्यून के बाहर के एक भी व्यक्ति से नहीं पूछा। हमने खुद अपने रास्ते बनाए। और हमने उस घटी को सुंदर मरूद्यान बना दिया।
जिन लोगों ने इस घटी को पहले देखा था, और अब देखने आए उन्हें तो विश्वास न हुआ। और हमारे लोग सुबह ध्यान करते, फिर मेरे प्रवचन सुनते, फिर काम करने जाते उसके बाद एक साथ खाना खाते। क्योंकि पांच हजार लोगों के लिए हमारी एक ही रसोई थी। और उत्सवों के दिनों में तो बीस हजार लोगों का खाना एक ही जगह बनता था। और बीस हजार लोगों के साथ खाना खाने में इतना आनंद आता था। और कोई गिटार बजा रहा है, और कोई नाच रहा है। और यह कोई साधारण बात नहीं थी कि तुम खाना खा रहे हो और लोग तुम्हारे आसपास नाच रहे हैं, कोई संगीत छेड़ रहा है। और लोग इतने प्रसन्न हैं।
शाम को जब काम खत्म हो जाता था तब भी उनके पास गाने के लिए, नाचने के लिए पर्याप्त ऊर्जा होती थी। उनके गाने के और नाचने के स्थान थे। उसके बारे में एक अफवाह फैल गई थी थक ये लोग सम्मोहित हैं, अन्यथा लोग निरंतर इतने प्रसन्न कैसे रह सकते हैं? एकाध-बार तुम मुस्करा दो, तो क्षमा की जा सकती है; लेकिन तुम दिन भर मुस्कुराते ही रहो तो तुम्हें माफ नहीं किया जा सकता। कुछ गड़बड़ है। चौबीस घंटे स्वस्थ बने रहना स्वीकृत नहीं है। उदासी स्वीकृत है, लंबे चेहरे स्वीकृत हैं। अस्तित्व से नाराज लोग, शिकायत से भरे लोग, चीड़ चिड़े- ये सब स्वीकृत हैं लेकिन नृत्य करते हुए लोग स्वीकृत नहीं हैं। इन लोगों के साथ कुछ गड़बड़ है। क्योंकि वे लोग अल्पमत में हैं, तुम्हारा बहुमत है। दुख में जीनेवाला बहुमत आनंद में जीनेवाले अल्पमत को नष्ट कर देता है।
इन अनुभवों के कारण, अब मैं इस बात पर पूरा ध्यान दूंगा कि जहां भी मैं कम्यून बनाऊंगा। वहां के स्थानीय लोगों को उसमें शामिल करूंगा। अब कम्यून एक पृथक जगह नहीं होगी। यह मुश्किल तो होगा ये स्थानीय लोग अपने सारे संस्कार साथ लाएंगे। उनके संस्कारों से उन्हें मुक्त करना होगा; लेकिन यही एकमात्र रास्ता दिखाई देता है। नहीं तो, आज नहीं कल, यह फासला इतना बड़ा हो जाएगा कि वे क्रोध से भर जाएंगे कि उनके ही प्रदेश में तुम इतने प्रसन्न हो और वे नहीं हैं! मैं चाहूंगा कि स्थानीय लोग सम्मिलित हो जाएं। लेकिन समस्या यह है कि जिन लोगों के पास कुछ भी नहीं है, वे भी कम्यून में सहभागी होना नहीं चाहते। क्योंकि कम्यून का मतलब है, तुम्हारी मनोवृत्ति में आमूल रूपांतरण।
उदाहरण के लिए, तुम्हारा एक परिवार है। कम्यून परिवार नहीं है; अन्यथा पांच हजार लोगों के लिए हम ढाई हजार चौंके बनाते हैं ढाई हजार औरतें अपनी जिंदगी चौके में बरबाद कर रही हैं। यह मानवीय ऊर्जा का निरा अपव्यय है। सिर्फ एक चौका काफी होता, जिसे पंद्रह लोग चलाते। इसकी कोई जरूरत न होती।
स्थानीय लोगों के साथ यह समस्या है। वे परिवार को पकड़े रहते हैं। कम्यून का अर्थ हैः ढीला करना- तुम परिवार की पकड़ को ढीला करते हो। बच्चों की देखभाल कम्यून ही करता था। उनके अपने निवास स्थान होते थे। और यह बड़ा अच्छा अनुभव था क्योंकि मैंने ऐसी व्यवस्था की थी कि बड़े बच्चे छोटे बच्चों की देखभाल करेंगे। उनके ऊपर एक अधीक्षक होगा, लेकिन जिम्मेदारी बच्चों की होनी चाहिए। वे सिर्फ गैर-जिम्मेदार न बने रहे कि उनकी कोई देखभाल कर रहा है, इतना ही। उनको छोटे बच्चों की देखभाल करनी है। और बड़े बच्चे उनकी देखभाल करेंगे।
और यह प्रयोग सफल हुआ। मैंने नहीं सोचा था कि बच्चों के साथ यह प्रयोग सफल होगा। छोटे बच्चों की देखभाल करने में उन्हें बहुत ही मजा आया। खिलौनों के साथ खेलना और गुड्डे-गुड्डियों की शादी करना, यह सब करने की बजाय उन्होंने अपनी ऊर्जा बच्चों की देखभाल करने में लगाना शुरू कर दिया।
और चूंकि वे बच्चों की देखभाल कर रहे थे, वे जिम्मेदार और प्रौढ़ हो गए,

छोटे बच्चों के प्रति रक्षात्मक हो गए। और उनके बीच होनेवाले स्वाभाविक लड़ाई-झगड़े खत्म हो गए। उन्हें उनके माता-पिता के पास मिलने जाने की इजाजत थी। माता-पिता के बच्चों से मिलने दिया जाता। लेकिन बच्चों का पूरा दायित्व कम्यून का था। बच्चों का दायित्व उनके माता-पिता पर नहीं था। माता-पिता यह तय नहीं करेंगे कि बच्चा इंजीनियर बनेगा। कम्यून का मनोवैज्ञानिक विभाग यह तय करेगा कि बच्चे के भीतर क्या संभावनाएं हैं और उसे क्या सिखाना है। शायद बच्चे की संभावना बहुत बड़ा नर्तक बनने की हो, और तुम उसे इंजीनियर बनने के लिए भेज रहे हो। वह जिंदगी भर दुखी रहेगा क्योंकि स्वाभाविक रूप से जो बनना था, वह तो वह बन नहीं पाएगा, और... वह जो बना है उससे सिर्फ दुख ही पैदा होगा।
अब मैं कहीं भी, कोई कम्यून शुरू करूंगा, तो उसमें स्थानीय लोगों को सम्मिलित करने वाला हूं। जिनको भी भीतर आना हो उन्हें अपनी पकड़ छोड़ने का, अपनी पुरानी आदतें और धारणाएं छोड़ने का साहस करना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, दो सौ भिखारी कम्यून में शामिल हुए। लोग सोचते हैं, अमेरिका समृद्ध देश है, और वहां तीन करोड़ भिखारी हैं। और यह बिल्कुल थोथा प्रचार है। और ये भिखारी रास्तों पर भूखे मर रहे हैं। उनके पास न रहने को घर न पहनने को पकड़े हैं न खाने को भोजन है।
दो सौ भिखारी आए। हमने उनको स्वीकार किया। हमने अपनी शर्तें उनके सामने स्पष्ट रूप से रख दीं। क्योंकि तुम अपराधों में ही पले हो। वे सब जेल में जा चुके थे। उन सब ने सब तरह के उपद्रव किए थे। वे सब नशीली दवाएं और शराब लेते थे। उनसे यह साफ कह दिया गया था कि शराब की कोई जरूरत नहीं होगी, नशीली दवाओं की कोई जरूरत नहीं होगी। हमारे पास एक बेहतर दवा है। तुम हमें थोड़ा समय दो। अगर तुम तीन हफ्ते के लिए थोड़े नियंत्रण रख सको... ध्यान का असर होगा और तुम्हें नशीली दवाओं की कोई जरूरत नहीं होगी।
और वे लोग चार साल रहे। और वे प्रामाणिक रूप से व्यसनी अपराधी थे, लेकिन उन्होंने एक भी अपराध नहीं किया। उल्टे वे इतने प्रसन्न थे कि पहली बार किसी समूह ने, किसी समाज ने उन्हें मनुष्य की तरह स्वीकार किया। नहीं तो उनके साथ सिर्फ कुत्तों जैसा व्यवहार किया गया था। किसी ने उनकी इस तरह फिकर नहीं की वे मनुष्य हैं। सच तो यह है कि वे सिर्फ कारागृह में जाने के लिए ही अपराध करते थे; क्योंकि कम से कम वहां रहने की जगह तो मिल जाएगी। कम से कम तुम्हें कपड़े, भोजन, सिगरेट और दवाएं तो देते हैं। और फिर काम कुछ नहीं। तो सड़कों पर भूखे क्यों करना? कोई छोटा सा गुनाह कर लो और कारागृह में जाओ।
जब मैं कारागृह में था तो मैंने लोगों से पूछा, तुम कितनी दफा यहां आ चुके हो? वे बोले, गिनता कौन है? क्योंकि हर बार, जब हम छूट जाते हैं तो एक हफ्ते के भीतर हम फिर लौट आते हैं। क्योंकि हम बाहर करेंगे क्या? हमारा कोई घर नहीं है, कोई देख भाल करने वाला नहीं है। कोई ऐसा नहीं है, जो हमारा इंतजार कर रहा हो। और यहां हमसे आदमी जैसा व्यवहार किया जाता है। यहां कम से कम हमारी जरूरतें तो पूरी होती हैं। एक डाक्टर आकर हमारी जांच करता है, हमें दवाइयां दी जाती है, हमारे लिए टी. वी. उपलब्ध है। हमें ताश खेलने की भी इजाजत है सिगरेट मुफ्त में मिलती है, और तुम चाहते जितनी पी सकते हो। कपड़े मिलते हैं। आदमी को और क्या चाहिए? और चार-पांच सौ कैदियों का एक प्यारा सा समूह, जिसमें सभी पुराने साथी हैं, जो किसी न किसी कारागृह में मिलते रहते हैं।
लेकिन इस बार में जो कम्यून शुरू करना चाहूंगा उसका बिल्कुल नया ढांचा होगा। उसमें मैं स्थानीय लोगों को निमंत्रित करूंगा ताकि अन्य स्थानीय लोगों को उसमें एक संबंध-सूत्र दिखाई पड़े और कम्यून एक अलग द्वीप न बन जाए।
और मुझे यह जगह बहुत पसंद है। और मैं इसे वास्तव में देवताओं की घटी बनाना चाहूंगा। और तुम्हारे स्थानीय लोगों का मुझे पूरा समर्थन है। तुम्हारी पंचायत के प्रधान मुझे निमंत्रण देने आए थे कि मैं यहीं पर रहूं। यहां का वकीलों का संगठन यह कहने आया था कि मैं यहां हूं। और भी कई संगठनों ने मुझे निमंत्रित किया है कि मैं यही रहूं। लेकिन उनके निमंत्रणों का कोई अधिक मूल्य नहीं है।

केंद्र-शासन नहीं चाहता कि मैं यहां रहूं। तब फिर मैं कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि सब कुछ केंद्र-शासन पर निर्भर करता है। और उन पर अमेरिका का दबाव है।
अमेरिका में मेरा... अमेरिका में अंतरराष्ट्रीय व्यक्तिगत सुरक्षा संस्थाएं होती हैं। इनमें से एक सर्वश्रेष्ठ व्यक्तिगत सुरक्षा संस्था मेरे लिए काम करती थी। वह मुझे उन सब रहस्यों की सूचनाएं देती थी, जो शासन में मेरे पक्ष में या विपक्ष में चलते रहते थे।
अब अमेरिका से मुझे यह सूचना प्राप्त हुई है कि भारत का द्वार अब आपके लिए बद हो चुका है। क्योंकि भारतीय राजनीतिकों पर अमेरिकन राजनीतिकों का अत्यधिक दबाव है। और अगर आप हम पर भरोसा नहीं करते, तो उनकी गोपनीय फाइलों की जांच करवा सकते हैं। आरै एक मित्र ने? जिनकी वहां तक पहुंच है, फाइल देखी और पाया कि वे लोग सही कहते हैं।
अमेरिकन शासन उनसे यह कह रहा है कि मेरे ऊपर कोई सीधा हमला न किया जाए, क्योंकि उसका आयोजन करना जरा मुश्किल मामला है। उन्होंने मुझ पर सीधा हमला करके देख लिया; और उन्हें यह दिखाई पड़ा कि किस तरह वे विश्व समाचार माध्यम का लक्ष्य बन गए। और उनकी बड़ी बेइ जती हुई।
तो उनका सुझाव यह है कि मेरे ऊपर सीधा हमला न करें, लेकिन विदेशियों
को यहां न रहने दें, ताकि मैं काम न कर सकूं। क्योंकि मैंने अपने चार-पांच हजार लोगों को हर तरह का काम करने के लिए प्रशिक्षित किया है। यदि मुझे यहां कम्यून निर्मित करना हो तो मुझे उनकी जरूरत होगी। क्योंकि वे बिना किसी वेतन के काम करेंगे और बारह से चौदह घंटे काम करेंगे। उनके लिए यह प्रेमपूर्ण कृत्य होगा।
और वे अब अपने-अपने क्षेत्रों के प्रतिभाशाली लोग हैं- इंजीनियर, डाक्टर, अध्यापक, मनोवैज्ञानिक। हमारा अपना अस्पताल था। हमारा अपना विश्वविद्यालय था। हमारा अपना मनोवैज्ञानिक चिकित्सा विभाग था। हमें जो भी चाहिए था वह सब हमारे पास था। हमारे अपने कृषि विशेषज्ञ थे, जो आधुनिक नवीनतम तकनीक का उपयोग करना जानते थे। हमारे अपने वैज्ञानिक थे। हम कुछ भी निर्माण करना चाहते तो वे करने को तैयार थे।
उदाहरण के लिए, जाड़े के लिए हमें तंबू चाहिए थे क्योंकि जाड़े के दिनों
के लिए तंबू कभी थे ही नहीं। उन्होंने उस तरह के तंबू बना लिए। लेकिन अमेरिकन शासन ने उन्हें पुरस्कार देने की बजाए हम पर जुर्माना लगाया। और वह भी छोटा-मोटा नहीं, डेढ़ करोड़ रुपया! इसलिए क्योंकि वे तंबू हमने बिना इजाजत के बनाए थे। अब तंबुओं के लिए इजाजत की कोई जरूरत नहीं है, लेकिन उन्होंने किसी तरह आयोजित किया, कानून के बीच से रास्ता निकाला। और उन्होंने कहा, ये तंबू नहीं हैं क्योंकि ये जाड़े मग उपयोग करने के काम के हैं। ये स्थायी निर्माण हैं।
मैंने शासन से, अटर्नी जनरल से कहा, इससे पहले कि आप अपना जुर्माना तय करें, एक बार यहां आ जाएं, नहीं तो आप बेवकूफ सिद्ध होंगे। जरा बाहर देख लें कि वे तंबू हैं, स्थायी निर्माण नहीं हैं। लेकिन मेरी बात अनसुनी करके उन्होंने जुर्माना लागू किया। यद्यपि हमारे वैज्ञानिकों ने उन्हें इस तरह बनाया हैं कि उन्हें गरम रखा जा सकता है, उनमें अलग बाथरूम है, उन्हें वातानुकूलित किया जा सकता है लेकिन वे स्थायी भवन नहीं हैं।
मैंने अपने लोगों से कहा, तुम तो बस अदालत में जाओ, बहस की कोई जरूरत नहीं है। तुम तो सिर्फ एक तंबू ले जाओ, उसे खोल दो और तंबू को अदालत में रख दो। क्योंकि तंबू को लगाने में सिर्फ दस मिनिट लगते हैं। मजिस्ट्रेट से कह दो कि वह आकर देख ले। और दस मिनिटों में उसे खोल देना, फिर थैले में रख देना, और फिर उससे पूछना कि स्थापी भवन इस तरह दस मिनिटों में खोलकर, फिर दस मिनिटों में तह करके वापस रखा जा सकता है?
मजिस्ट्रेट सिर्फ हंसा। उसने कहा, इसमें कोई मुकदमा ही नहीं है। यह तो तंबू है। और मैंने ओरेगान के उस अटर्नी जनरल से सार्वजनिक रूप से कहा कि अब तुम समुद्र में डूबकर मर जाओ। हकीकत क्या है इसे देखे बिना इतना बड़ा जुर्माना लागू करना... सिर्फ मूढ़ व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है।

तो अब भारतीय शासन पर अमेरिकन शासन का दबाव यह है कि मुझ पर सीधा हमला
न किया जाए, लेकिन मेरे प्रशिक्षित लोगों को मेरे साथ न रहने दिया जाए। और इस भांति मेरा पूरा काम नष्ट हो जाए।
सवाल यह है कि तुम्हारा प्रादेशिक शासन, विशेष्तः तुम्हारे मुख्यमंत्री- जैसा कि मैं उन्हें समझता हूं, साहसी और बुद्धिमान व्यक्ति हैं। यदि उनमें हिम्मत है तो उन्हें केंद्र-शासन की फिक्र नहीं करनी चाहिए। क्योंकि यह देश की सुरक्षा के खिलाफ नहीं है इसमें केंद्र-शासन का कोई संबंध ही नहीं है। उन्हें केंद्र-शासन के हरी झंडी दिखाने की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। ऐसा उन्होंने कहा है।
और मेरे पास उनका संदेश आया है कि मैं राह देख रहा हूं कि वे मुझे हरी झंडी दिखावे। वह कभी नहीं होगा। क्योंकि वे लोग वाशिंगटन की हरी झंडी की राह देख रहे हैं। और वह तो आने से रही! और मैं ज्यादा देर तक इंतजार नहीं कर सकता। मेरे लोग दुनिया में खोज रहे हैं। और हमने अच्छी-अच्छी जगहें खोज ली हैं।
वस्तुतः दक्षिण अमेरिका के दो देशों ने कम्यूनि बनाने के लिए मुझे निमंत्रित किया है। तो मैंने वहां की परिस्थिति का अवलोकन करने के लिए अपने लोगों को वहां भेजा है- और यह जानने के लिए कि उनकी शर्तें क्या हैं। क्योंकि किन्हीं शर्तों से बंधकर मैं काम नहीं करूंगा।
और हम खोज रहे हैं... कई द्वीप हैं, स्वतंत्र द्वीप; लगता है वही सबसे बुढ़िया बात रहेगी, जहां राजनीतिक या और कोई भी हमें नहीं सताएगा।
लेकिन मुझे यह जगह बड़ी प्यारी लगती है। और सचमुच मैं इसे देवताओं की घटी बनाना चाहता हूं। यह स्थानीय लोगों पर निर्भर करता है कि वे मुख्यमंत्री पर दबाव डालें मैं उनका अतिथि हूं। उन्हें यहां आना चाहिए, वे मेरे आतिथेय हैं। उन्हें यहां आना चाहिए, वे मेरे आतिथेय हैं। और अगर दक्षिण अमेरिका के शासन पूरे कम्यून के साथ मुझे निमंत्रित कर सकते हैं, मुझे मुफ्त में जमीन दे सकते हैं, हर तरह का सहयोग दे सकते हैं, तो अपने देश से मुझे इससे बेहतर व्यवहार की अपेक्षा रखनी चाहिए।
तो अब सवाल स्थानीय निवासियों का है। वे अपनी सम्मति प्रकट करें, जिसकी वे प्रतीक्षा कर रहे हैं। मुख्यमंत्री के लिए एक हरी झंडियों का मोर्चा ही निकालें। क्योंकि यह सुरक्षा का सवाल नहीं है, रक्षा का कोई सवाल नहीं है। केंद्र-शासन का इससे कोई संबंध नहीं है। यह मुख्यमंत्री को स्वयं तय करना होगा। और अगर वे इसे तय नहीं कर सकते तो उन्हें यह ख्याल छोड़ देना चाहिए कि उनमें हिम्मत है। और उन्हें इसे याद रखना चाहिए कि इस तरह के लोगों की राजनीतिक उम्र बहुत कम होती है। उन्हें अपनी सामर्थ्य दिखानी चाहिए। जब उनकी जनता मेरे साथ है तो उनको डरने की क्या जरूरत है? लेकिन केंद्र-शासन अपने ढंग से काम कर रहा है।
मैं कैद में था। यह स्वाभाविक था कि भारतीय शासन अमेरिकन शासन से पूछता कि गिरफ्तारी के वारंट के बिना वे मुझे गिरफ्तार किए हैं। बारह भरी हुई बंदूकें मेरी छाती पर तानकर उन्होंने मुझे गिरफ्तार किया। मैंने उनसे पूछा गिरफ्तारी का वारंट कहां है? उनके पास कोई वारंट नहीं था। मैंने उनसे कहा, तुम सिर्फ जबानी तौर पर मुझे बताओ कि मेरा जुर्म क्या है। उन्होंने कहा, वह हमें पता नहीं है।
मैंने कहा, तुम्हें पता नहीं है तो मुझे मेरे अटर्नी से संपर्क बनाने दो। वे उसकी भी इजाजत नहीं देंगे। और आधी रात गए, निर्जन हवाई अड्डे पर... और कोई रास्ता ही नहीं था। उन्होंने मेरे अटर्नी को एक फोन भी नहीं करने दिया, जो हर व्यक्ति का कानूनी अधिकार होता है। और खास कर ऐसी स्थिति में- जब तुम कोई गिरफ्तारी का वारंट नहीं दिखा रहे हो और मुझे जंजीरों में जकड़ रहे हो- हाथों में हथकड़ियां, पैरों में बेड़ियां, कमर में जंजीर... और तुम्हारे पास कुछ भी नहीं है, कोई कारण नहीं, और तुम लोकतंत्र की बातचीत करते हो, और स्वतंत्रता की, और अन्य सब बकवास... !
तीन दिन तक यह मुकदमा अदालत में पड़ा रहा, नार्थ केरोलिना में। वे मेरे खिलाफ एक भी इलजाम सिद्ध न कर सके। उन्होंने उन छह लोगों को छोड़ दिया, जो मेरे साथ हवाई जहाज में थे। स्वयं अमेरिकन अटर्नी जनरल ने अपने अंतिम वाक्य में कहा कि हम कुछ भी सिद्ध न कर सके; और न ही वे कुछ सिद्ध कर सके।

इस मुद्दे को सुनकर मुझे हंसी आयी। क्योंकि निर्दोषता को कुछ भी सिद्ध करने की कोई जरूरत नहीं होती। तुमने मुझे गिरफ्तार किया है, तुम्हें सिद्ध करना होगा कि किस गुनाह पर, किस जुर्म पर तुमने मुझे कैद कर रखा है। मेरे अटर्नियों को कुछ भी सिद्ध करने की जरूरत नहीं है। उन्हें सिर्फ तुम्हें असिद्ध करना है। और उन्होंने तुम्हें सिद्ध कर दिखाया है। और सरल बात है कि मेरे साथ के छह लोगों को तुमने छोड़ दिया है, और तुम मुझे क्यों नहीं छोड़ रहे हो? और तुम कह रहे हो कि तुम कुछ भी सिद्ध नहीं कर सके? फिर भी उन्होंने कहा, हम आपको छोड़ नहीं सकते। मुझे जमानत पर न छोड़ने
का कारण यह नहीं था कि मैंने कोई गुनाह किया था, जिसकी जमानत नहीं दी जा सकती; इसलिए कि मैं खतरनाक आदमी हूं।
मैंने कहा, अजीब बात है। मेरे कारण किसी को खतरा नहीं हुआ है। मैंने किसी को कोई नुकसान नहीं पहुंचाया है। मैंने किसी की हत्या नहीं की है। मैं शाकाहारी हूं। खतरनाक से क्या मतलब है तुम्हारा? उनका मतलब था, मैं खतरनाक आदमी हूं और मेरे पास अपरिसीम संपदा है। तो तुम मेरे लिए एक करोड़ डालर की भी जमानत मांगो तो भी मुझे कोई चिंता नहीं होगी और मैं यह देश छोड़ सकूंगा। और मेरे हजारों ऐसे मित्र हैं, प्रेमी हैं, जो मुझे पूजते हैं। वे लोग मेरे लिए कुछ भी कर सकते हैं। इसीलिए तुम इजाजत नहीं दे सकते।
मैंने अपने अटर्नियों से कहा, इससे तो यही सिद्ध होता है कि एक अकेले आदमी के सामने, संसार की सबसे बड़ी ताकत कितनी नपुंसक है। वे मुझे इस देश से बाहर जाने से रोक भी नहीं सकते। लेकिन उनका तर्क सिर्फ सतही था। राजनीतिकों का यही ढंग होता है।
मजिस्ट्रेट एक स्त्री थी और उसकी जज के पद पर तरक्की होनेवाली थी। और
उन लोगों ने उसे धमकी दी। मेरे अपने जेलर ने मुझसे कहा कि उसे धमकी दी गई है कि अगर वह मुझे जमानत दी। मेरे अपने जेलर ने मुझसे कहा कि उसे धमकी दी गई है कि अगर वह मुझे जमानत पर रिहा करती है, तो फिर फेडरल जज होने की बात सदा के लिए भूल जाए। तो मुझे रिहा न करने का यह कारण था।
और वे मुझे नहीं छोड़ना चाहते थे इसका यह भी कारण था कि केरोलिन से ओरेगान की दूरी तय करने में हवाई जहाज से सिर्फ आठ घंटे लगते थे। मुझे ओरेगान पहुंचने में बारह दिन लगे। वे मुझे एक जेल से दूसरे जेल ले जाते रहे, जिससे कि मुझे अधिक से अधिक सताया जा सके। और जब मैं उनके साथ दो-तीन दिन रहता तो उनसे मेरी दोस्ती हो जाती। और वे समझ जाते कि इसके पीछे कोई राजनीतिक चाल है।
और अंततः एक जेल में उन्होंने मुझे बाध्य किया... खुद अमेरिकन मार्शल ने, जो कानून को लोग करने का सर्वोच्च अधिकारी है। उसने मुझसे कहा कि मेरा नाम डेविड वाशिंग्टन होना चाहिए। और मुझे उसके नीचे हस्ताक्षर करने होंगे। और मुझे डेविड वाशिंगटन के नाम से पुकारा जाएगा, मेरे अपने नाम से नहीं। मैंने उससे पूछ, यह किस तरह का कानून आरोपण है? तुम्हारे कोट पर लिखा हुआ है, न्याय विभाग। कम से कम इस क्षण तो यह कोट उतार दो। यह कैसा न्याय है? और इसका मकसद क्या है? क्या तुम सोचते हो, मैं नासमझ हूं? क्या मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझ सकता कि तुम मुझे कैदखाने में रखना चाहते हो और किसी को पता न चले कि मैं यहां हूं, ताकि तुम जो चाहो मेरे साथ कर सको? तुम मुझे मार सकते हो और उसकी कोई भी निशानी नहीं रहेगी क्योंकि मैंने कैदखाने में प्रवेश किया ही नहीं। मेरे कैदखाने में मारे जाने का सवाल ही पैदा नहीं होता।
लेकिन मैंने उसे कहा, तुम देख लेना, कल सुबह सभी दूरदर्शन केंद्र, आकाशवाणी अखबार यह समाचार प्रसारित करेंगे कि अमेरिकन मार्शल के दबाव के नीचे मैंने अपना नाम बदल कर डेविड वाशिंगटन लिखा। अभी भी वक्त है, तुम अपना मंतव्य बदल सकते हो; नहीं तो कल सुबह...
उसने पूछा, यह आप किस तरह आयोजित करेंगे? मैंने कहा, मैंने आयोजित कर लिया है। हवाई अड्डे से यहां आते समय मेरे साथ एक स्त्री थी, जिसकी रिहाई होनेवाली थी। मैंने उससे कहा, तुम यहां सिर्फ बैठो और पूरे वार्तालाप को सुनो। और पूरा समाचार-माध्यम बाहर खड़ा प्रतीक्षा कर रहा है। वे मुझे तो वहां से प्रवेश नहीं करने देंगे, मुझे पीछे से ले जाएंगे। लेकिन तुम जब

बाहर निकलोगी, तो जो भी तुमने सुना है और जो भी तुम्हें बताने जैसा लगे, वह प्रेस वालों को बता देना।
और उस स्त्री ने अपना काम बड़ी खूबी से किया। वह दूर, एक कोने में बैठी अपनी रिहाई का इंतजार कर रही थी, और अगल दिन पूरे विश्व में यह समाचार फैल गया कि उन्होंने झूठे नाम से मेरे दस्तखत करवाए। और तुरंत, बड़ी सुबह वे उस कैदखाने से मुझे ले गए। क्योंकि वहां रखना मुश्किल हो गया। पूरे समाचार-माध्यम ने कैदखाने को घेर लिया। हजारों कैमरे, पत्रकार डेविड वोशिंगटन के बारे में पूछ रहे हैं।
तो वे डर गए कि या तो उन्हें डेविड वाशिंगटन को दिखाना होगा, जो कि उनके पास नहीं है... और मैंने अपने ही नाम से हिंदी में दस्तखत किए थे। उसने उसे देखा और पूछा, यह क्या है? मैंने कहा, डेविड वाशिंगटन ही होगा। तो समाचार-माध्यम पूछ रहा था कि हमें डेविड वाशिंगटन का फार्म देखना है, क्योंकि भगवान के हस्ताक्षर विश्वविख्यात हैं। हम हस्ताक्षर दिखाओ। तो इससे पहले कि और कोई पूछताछ हो, वे उसी वक्त मुझे दूसरे कैदखाने ले गए।
ये राजनीतिक, यह नौकरशाही मनुष्यता के लिए काम नहीं कर रही है। वे सिर्फ सत्ता-लोलुप लोग हैं।
तो अगर हिमाचल प्रदेश के लोग चाहते हैं कि मैं यहां रहूं, मेरी यहां रहने की पूरी तैयारी है। लेकिन मैं अकेला हिमाचल के लिए कुछ नहीं कर सकता। हिमाचल का पूरा नक्शा बदलना हो तो उन्हें पांच हजार लोगों के लिए इजाजत देनी होगी। और पांच साल के भीतर तुम देखोगे कि हिमाचल पूरे विश्व के पर्यटकों का सब से बड़ा आकर्षण बन गया है।
तो सवाल मेरा नहीं है, सवाल तुम्हारे प्रादेशिक शासन का और उसके हिम्मत का है। और उनसे कह देना कि तुममें पौरुष हो, तो मैं यह चुनौती स्वीकार करने को तैयार हूं। लेकिन फिर तुम्हें मेरा समर्थन करना होगा। यदि नहीं कर सकते, तो साफ-साफ कह दो कि यह हमारे बस की बात नहीं। तो मैं अपना वक्त यहां जाया नहीं करूंगा। मुझे और भी जगह जाना है और बात पक्की करनी है।
और कुछ?
सिर्फ एक प्रश्न।
भगवान, मनुष्यता के पूरे इतिहास में किसी के इतने आलोचक नहीं रहे हैं, जितने कि आपके; ऐसा क्यों है?
क्योंकि मुझे इस संसार से इतने अधिक सत्य कहने हैं, जितने कि आज तक किसी ने नहीं कह हैं। सुकरात के भी आलोचक रहे हैं लेकिन उसका सत्य सरल था, और एक-आयामी था। मेरा सत्य बहु-आयामी है, और वह उन सारे संस्कारों पर प्रहार करता है जिनसे हर व्यक्ति का अत्याधिक लगाव हो गया है। यद्यपि वे ही तुम्हारे दुख का कारण हैं। वे कैंसर की भांति हैं, जिनका आपरेशन होना जरूरी है। आपरेशन बड़ा कष्टप्रद होने वाला है लेकिन वह तुम्हें मौत से बचाएगा।
बुद्ध, महावीर, लाओत्सु, कबीर, नानक- इन सबसे सत्य को वाणी दी है। लेकिन वे सत्य तुम्हारे समग्र संस्कारों के खिलाफ नहीं थे। वे लोग सिर्फ तुम्हारी आध्यात्मिकता के संबंध में बोल रहे थे। यदि मैं भी सिर्फ तुम्हारी अध्यात्मिकता के संबंध में बोलता, तो आलोचना का कोई सवाल ही नहीं था, सिर्फ प्रशंसा ही प्रशंसा होती। लेकिन उससे किसी का लाभ नहीं होता।
मैं सिर्फ उन फूलों की बात नहीं कर रहा हूं जो सुंदर है, मैं उन जड़ों
की भी बात कर रहा हूं जो कि कुरूप हैं। और जब तक कि तुम जड़ों को नहीं समझते, तुम फूलों को नहीं समझ पाओगे।
मैं संपूर्ण के संबंध मग बोल रहा हूं। संपूर्ण मनुष्य की चर्चा कभी किसी ने नहीं की। उन्होंने तुम्हारे शरीर के संबंधों में कभी बात नहीं की। उन्होंने तुम्हारे मन के संबंध में कभी बात नहीं की। उन्होंने तुम्हारे मनोविज्ञान के संबंध में, तुम्हारे जीव-विज्ञान के संबंध में बात नहीं की। वे सिर्फ परमात्मा के भक्ति करने की, वेदों में श्रद्धा रखने की बात कर रहे थे, इसलिए उससे किसी को चोट नहीं लगती थी। वस्तुतः वे तुम्हारे संस्कारों का समर्थन कर रहे थे।

मैं वैसा नहीं कर सकता। क्योंकि मेरे देखे, वेदों का अधिकांश अंश कचरा है। वह साहित्य भी नहीं है। मैं नहीं कह सकता कि वे ईश्वर के वचन हैं। मैंने नहीं कह सकता कि मनु बुद्ध हैं क्योंकि मनु ने इस देश को पांच हजार साल तक सताया है, और वह अब भी सताए चला जा रहा है। मैं चाहूंगा मनु-स्मृति को आग लगा दी जाए, और उसकी इस भांति नष्ट कर दिया जाए कि उसका कोई नामो- निशान बाकी न रहे। इससे पीड़ा होती है।
तुम्हारे विवाह पर कोई नहीं बोला। उन सबने उसका समर्थन किया। मैं उसके खिलाफ हूं क्योंकि मैं देखता हूं, विवाह ने मनुष्य के साथ क्या किया है। उसने अत्याधिक दुखी बना दिया है। वह एक कृत्रिम संस्था है, प्राकृतिक नहीं है। यह अच्छा है कि जिस व्यक्ति से तुम प्रेम करते हो, उसके पास तब तक रहो जब तक प्रेम है। हो सकता है, तुम उस व्यक्ति से जीवन भर प्रेम करो। लेकिन यह भी संभव है कि आज तुम प्रेम से ओतप्रोत हो, कल वह बात न हरे। तब तुम फंस गए तब तुम कल क्या करोगे? तुम दिखावा करोगे कि तुम अपनी पत्नी से सब भी प्रेम करते हो। तुम अब भी अपनी पत्नी के साथ संभोग करोगे, जिससे कि तुम्हें बिल्कुल प्रेम नहीं है। यह कुरूप है, अमानवीय है।
वे लोग मनुष्य की वास्तविक समस्याओं के संबंध में कभी नहीं बोले। उन्होंने इसकी चर्चा कभी नहीं की कि तुम्हें कितने बच्चे पैदा करने चाहिए। उन्होंने और भी हजारों बातों की कभी फिकिर नहीं की- तुम्हें शिक्षा दी जानी चाहिए। उनकी पूरी धारणा यह थी कि किसी खास पुरोहितों के वर्ग के गुलाम बने रहो- हिंदू, मुसलमान, जैन, बौद्ध। और कभी किसी बात पर संदेह मत करना।
मैं आग्रहपूर्वक कहता हूं कि उनकी मूलभूत शिक्षा यह थीः किसी बात पर संदेह मत करना। और हजारों सालों तक तुमने ऐसी बातों पर भी कभी संदेह नहीं किया, जो कि सचमुच कुरूप हैं।
उदाहरण के लिए, कृष्ण ने सोलह हजार स्त्रियों से विवाह किया। और वे कुंआरी लड़कियां नहीं थी, किसी की पत्नियां थीं। उनके बच्चे थे, उनके पति थे। और वे सिर्फ इसलिए उन्हें भगाकर आए क्योंकि वे ताकतवर थे। इस आदमी ने सोलह हजार परिवारों को नष्ट किया और तुम कभी उन पर संदेह नहीं करते। मोहम्मद की नौ पत्नियां थीं। अब यह बात कुरूप है। क्योंकि पुरुषों और स्त्रियों की संख्या बराबर है। यदि एक पुरुष की नौ पत्नियां हुई, तो उन आठ पुरुषों का क्या होगा, जो बिना पत्नी के रह जाएंगे? वे समलिंगी हो जाएंगे, वे विकृत हो जाएंगे, वे वेश्याओं के पास जाएंगे। और मोहम्मद ने मुसलमानों को चार पत्नियां रखने की इजाजत दे दी थी। अब यह बिल्कुल बेवफूकी है। उनका यह अनुपात नहीं है। स्त्रियां पुरुषों से चार गुना ज्यादा नहीं है। भारत के स्वतंत्र होने के कुछ ही समय पहले तक हैदराबाद के निजाम की पांच सौ पत्नियां थीं- इस सदी में! और कोई संदेह नहीं करता। स्वभावतः। स्वभावतः उनकी आलोचना नहीं हुई; क्योंकि तुम कभी संदेह नहीं करते।
मेरी पूरी शिक्षा यह हैः हर बात पर संदेह करो- तब तक, जब तक कि तुम ऐसी चीज न पा लो, जो संदेहातीत है, जो सत्य की तरह स्वीकृत हो सके, जिस पर संदेह न उठाया जा सके; अगर तुम संदेह करना चाहो, तो भी संदेह करने का कोई उपाय नहीं है। स्वभावतः मैं हजारों आलोचनाओं का शिकार हो जाता हूं।
लेकिन ये आलोचनाएं नपुंसक हैं। किसी भी धर्म के एक भी प्रमुख ने... मैंने सभी को चुनौती दी है- सब शंकराचार्य, पोप, इमाम, अयातुल्ला खोमैनी... सार्वजनिक रूप से विचार-विनियम के लिए। और मैं यह नहीं कह रहा हूं कि वह चर्चा मेरे शिष्यों के बीच ही हो। मैं स्वयं वेटिकन आने को तैयार हूं। ईसाइयों के बीच मैं सवाल उठाना चाहता हूं; क्योंकि मुझे भरोसा है कि मेरे सवाल इतने सुस्पष्ट हैं कि ईसाई भी उसको इंकार नहीं कर सकेंगे। लेकिन एक में भी इतनी हिम्मत नहीं है।
वे लोग मेरी आलोचना करते रहते हैं, लेकिन कोई भी मेरा सामना करने को तैयार नहीं है। यह उनकी आलोचना की नपुंसकता सिद्ध करती है। और मैं उपलब्ध हूं। और मैंने पोप से प्रकट रूप से कहा है कि अगर आप मुझे राजी कर सकें तो मैं कैथोलिक बनने को तैयार हूं; लेकिन अगर मैंने आपको राजी कर लिया तो आपको संन्यास लेना पड़ेगा। इस शर्त के साथ मैं किसी भी विवाद में प्रवेश कर सकता हूं।

लेकिन इन लोगों को मैं जानता हूं। उनके पास अपना कुछ भी नहीं है। सब उधार ज्ञान, जिसकी बड़ी सरलता से आलोचना हो सकती है।
तो यह सच है कि मनुष्य के पूरे इतिहास में इतनी आलोचना किसी की नहीं हुई है जितनी कि मेरी हो रही है। मैं इसे अपनी प्रशंसा समझता हूं। इसका मतलब है कि आज तक इतने ज्यादा सत्य किसी ने नहीं कहे हैं; और इतने पैने, मनुष्य के अज्ञान को इस तरह तहस-नहस करने वाले, जितने कि मैंने कह हैं! और मैं जिंदगी भर यह करनेवाला हूं- अंतिम सांस तक।
लेकिन बुद्धिमान लोग भी हैं। संसार में मेरे दस लाख संन्यासी हैं, और पचास लाख लोग ऐसे हैं, जो मुझे प्रेम करते हैं। और ऐसे बहुत से लोग हो सकते हैं, जो सहानुभूतिपूर्ण हों, और यह कहने से भी डरते हों कि वे सहानुभूति रखते हैं।
तो ऐसा नहीं है कि मेरे सिर्फ दुश्मन ही हैं। संतुलन पैदा करने का प्रकृति का अपना नियम होता है। अगर मेरे इतने ज्यादा दुश्मन हैं तो मेरे इतने ही दोस्त भी होंगे। वे ज्ञात हैं या अज्ञात हैं, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता और मैं विश्व को दो हिस्सों में बांट सकता हूं- मेरे दुश्मन और मेरे दोस्त, तो मुझे अत्यंत प्रसन्नता होगी। मेरा काम पूरा हुआ। क्योंकि आधी मनुष्यता को रूपांतरित करना- यह भी पहले कभी नहीं हुआ था।
14 दिसंबर 1985, अपराह्म, कुल्लू-मनाली

फिर पत्तों की पाजेब बजी आठवां प्रवचन

जीवन सदा अनिश्चित है

रजनीशपुरम के कम्यून के असफल हो जाने के बाद अब कम्यून के भविष्य के संबंध में आपके क्या विचार हैं?

पहली बात, वह असफल नहीं हुआ। क्या तुम सोचते हो कि सुकरात को जहर देकर मार डालना सुकरात और उसके दर्शन की असफलता थी? वस्तुतः वह तो उस आदमी की परम विजय थी। उसने सिद्ध कर दिया, एक अकेला आदमी और उसका सत्य, समाज और उसकी ताकत, उसकी संपदा, जनसंख्या, फौजें- इन सबसे शक्तिशाली है। वे लोग उस आदमी के साथ सिर्फ एक बात कर सकेः वे उसकी हत्या कर सके। लेकिन मनुष्य की हत्या करने से सत्य की हत्या नहीं होती। वस्तुतः उल्टे सुकरात को मारकर उन्होंने उसके सत्य को अमर कर दिया है।
क्या तुम सोचते हो कि जीसस की सूली उनकी असफलता था? यदि जिस को सूली नहीं दी जाती तो ईसाइयत पैदा ही नहीं होती। उनको दी गई सूली ही, उनकी महिमा को उच्चतम शिखर पर ले जाती है।
तो मैं नहीं मानता कि अमेरिका में कम्यून का नष्ट होना उसकी असफलता है; वह सफल हुआ है। हम कई चीजें सिद्ध करने मग सफल रहे हैं।
हम यह सिद्ध करने में सफल हुए कि विश्व की सब से बड़ी रा य-सत्ता भी एक छोटे से कम्यून से डरती है, जिसके पास प्रेम के अलावा और कोई ताकत नहीं है। इसका मतलब हुआ, प्रेम ताकत से अधिक ताकतवर है। हमने सफलतापूर्वक यह दिखा दिया है कि पांच हजार लोगों को छोटा सा कम्यून भी दुनिया में सब से बड़े राष्ट्र के राजनीतिकों और सरकारी कर्मचारियों की नींद हराम कर सकता है, जो कि मनुष्य के इतिहास में कभी घटा नहीं।
उनका भय क्या था? हमारे छोटे से कम्यून से उनकी छाती पर सांप क्यों लोट गया? कारण यह था कि हमारे अत्यल्प साधनों के बावजूद हम सफल हुए, और उनके असीम स्रोतों के बावजूद वे असफल हुए। और हमारी उपेक्षा करना उनके लिए असंभव था, क्योंकि लोगों के मन में हमारे और अमेरिकन सरकार के बीच तुलना पैदा हो रही थी। यदि ये लोग एक मरुस्थल को मरूद्यान बना सकते हैं, यदि इनके यहां एक भिखारी नहीं है, कोई बेरोजगार नहीं, चार सालों से कोई अपराध नहीं हुआ- न कोई हत्या, न बलात्कार, न आत्महत्या; कोई पागल नहीं हुआ, तो फिर बड़े पैमाने पर यह क्यों नहीं हो सकता, जब कि तुम्हारे पास यह सब करने के लिए पूरी ताकत उपलब्ध है? और इन लोगों के पास उनकी बुद्धि और उनके श्रम के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।
इससे और एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात सिद्ध हुई है- न केवल अमेरिका के लिए बल्कि मनुष्य के पूरे इतिहास के लिएः अतीत के और भविष्य के भी। हमारी कोई सरकार नहीं थी। पहली बार पांच हजार लोग चार साल तक बिना किसी सरकार के जीए हैं। यह कोई छोटी घटना नहीं है। यह पहला अराजवादी कम्यून था। अराजवादी इस संबंध में चर्चा करते हैं, लेकिन कोई भी इसको वास्तविकता बनाने में सफल नहीं हुआ है। और हम कोई जा-बूझकर एक अराजवादी समाज बनाने की चेष्टा नहीं कर रहे थे। वह तो उसकी छाया थी। हमने उसके संबंध में कोई सोच-विचार नहीं किया था। यह तो बाद में इसकी प्रत्यभिज्ञा हुई कि यहां कोई सरकार नहीं है, और फिर कोई अपराध नहीं घटते। हमने लोगों को संतति निरोधक साधनों का उपयोग करने का कोई आग्रह नहीं किया था, और फिर भी चार वर्षों में एक भी बच्चा पैदा नहीं हुआ। उनकी बुद्धि पर भरोसा करना ही काफी था।
तो हमने सिद्ध कर दिया है कि तुम व्यक्ति की बुद्धि पर भरोसा करो, उसकी निष्ठा पर भरोसा करो और उसका सम्मान करो तो तुम उससे चमत्कार करवा सकते हो।
दूसरी बात, जो कि बिल्कुल ही असंभव मालूम पड़ती है- कम्यूनिस्ट और अराजवादी कभी एक बात पर सहमत नहीं हो सकते। क्योंकि अराजवादी कहते हैं, सरकार नहीं चाहिए। सरकार को तत्क्षण विसर्जित कर देना चाहिए। सरकार अब

अपराधों का एकमात्र कारण है, जो भी अमानवीय है- सभी युद्ध, रक्तपात, सी तरह की कुरूप राजनीति।
और कम्यूनिस्ट कहते हैं, हम आशा करते हैं कि भविष्य में कभी ऐसा समय होगा जब कोई सरकार नहीं होगी। लेकिन फिलहाल तो सरकार को हटाने से हालात सुधरेंगे नहीं। वे तो और भी बदतर होते जाएंगे।
और शायद वे ठीक कहते हैं। शासन के होते हुए भी अपराध होते हैं, आर उनकी संख्या में वृद्धि होती जाती है। मालूम होता है, मनुष्य के मस्तिष्क में कोई परिवर्तन नहीं होता। इतने सारे नियंत्रणों, अदालतों और सजाओ के बाद भी मनुष्य का मन बड़ा अड़ियल मालूम पड़ता है। यदि ये सार नियंत्रण हटा दिए जाएं तो समाज एक जंगली स्थिति में गिर जाएगा।
कम्युनिस्ट कहते हैं, सुदूर भविष्य में कभी, जिसकी कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती- जब तक कि पूरी दुनिया कम्यूनिस्ट नहीं बनती, और बाट हस्तक्षेप का कोई भय नहीं रह जाता, तब तक शासन को विसर्जित नहीं किया जा सकत। उल्टे शासन को अधिक मजबूत बनाना चाहिए, ताकि लोगों पर समानता थोपी जा सके। क्योंकि आदमी असमान होने का इतना आदी हो गया है कि यह आदत छोड़ना उसके लिए आसान नहीं है। और कोई किसी के साथ समान होना नहीं चाहता। प्रत्येक व्यक्ति उच्चतर और श्रेष्ठतर होना चाहता है। दूसरे से उच्चतर और श्रेष्ठतर होने की इस मनोवृत्ति को नष्ट करने के लिए बहुत कठोर; वह बड़ा शिथिल शासन होता है। केवल सर्वहारा वर्ग की तानाशाही... तो कम्यूनिस्टों का पहला चरण यह है कि सर्वहारा वर्ग की तानाशाही लायी जाए।
फिर अराजवादी और कम्यूनिस्ट कैसे सहमत हो सकते हैं? उनका पहला चरण हैः शासन का इंकार। उन्हें लोकतांत्रिक शासन भी मंजूर नहीं है। और कम्युनिस्टों का पहला चरण हैः देश पर अति कठोर, लगभग फौजी शासन; ताकि हम सभी पुरानी आदतों को तोड़ डालें, जो मनुष्य के मन को जकड़े हुए हैं। बाकुनान, तालस्ताय जैसे अराजवादी, और कार्ल मार्क्स और लेनिन जैसे समाजवादी निरंतर बहस करते रहे हैं। वे एक-दूसरे को दुश्मन की तरह देखते हैं।
मैंने ये बातें इतने विस्तार से कहीं क्योंकि कम्यून में जो हुआ, वह चमत्कार था। वहां कोई शासन नहीं था, और फिर भी एक उच्च कोटि का कम्युनिजम संभव हो सकता, जिसमें कोई तानाशाही नहीं थी। वहां किसी बात को थोपने की कोई जरूरत न थी। हमने इतना ही किया था कि कम्यून के भीतर हमने पैसे का उपयोग करना छोड़ दिया था। तुम कम्यून को पैदा दे सकते थे लेकिन कम्यून के भीतर चीजें खरीदने-बेचने के लिए तुम पैसे का उपयोग नहीं कर सकते थे। तो तुम्हारे पास लाखों डालर हों और मेरे पास फूटी कौड़ी भी न हो, लेकिन कम्यून में न मैं गरीब हूं, न तुम अमीर हो। तुम्हारे लाखों डालर व्यर्थ हैं। उनका उपयोग तो तभी है जब तुम उनका व्यावहारिक उपयोग कर सकते हो। नहीं तो वे तुम्हारे पास हैं या नहीं, इससे क्या फर्क पड़ता है?
तो कम्यून में केवल पैसे का उपयोग न करने से... और कम्यून, लोगों की जरूरतों की पूरी जिम्मेदारी लेता था- स्वास्थ्य संबंधी, शिक्षा, पोष्ण, कपड़े, भोजन, निवास, वाहन, सब कुछ। मुझे इसका अहसास नहीं था कि उसका यह नतीजा निकलनेवाला है। इसीलिए मैं कहता हूं, जीवन इतना रहस्यपूर्ण है, इतना अगम है, इतना अदभुत है कि मैंने समाजवाद और अराजवादी को एक साथ जीते हुए देखा। कोई शासन नहीं, कोई अमीर नहीं, कोई गरीब नहीं।
यह इतनी बड़ी घटना है कि यद्यपि वह सिर्फ चार साल तक चली, और उसको सूली
दी गई... लेकिन सूली पर चढ़ा देना कभी भी सफल नहीं हुआ है। तुम किसी को सूली पर भी चढ़ाते हो जब तुम स्वयं को उसके आगे बेबस पाते हो।
अमेरिका के कम्यून को सूली दी गई है, अब वह पूरी दुनिया में फैल जाएगा। उसकी हत्या उसकी असफलता नहीं है, वह सफलता का सुनिश्चित प्रतीक है। हम यह सिद्ध करने में सफल हुए हैं कि मनुष्यता के सामने जो भी समस्याएं हैं उन सब को हम सुलझा सकते हैं।
ये सब समस्याएं आदमी ने खुद पैदा की है। एक तरफ वे उन्हें पैदा किए चले जाते हैं, और दूसरी तरफ वे उनका समाधान खोजते रहते हैं। यह जगत इतनी मूढ़ता में जीता रहा है कि वह देखता भी नहीं कि समस्या पैदा किसने की है? उसकी जड़ ही क्यों नहीं काट देते?

कल रात एक महिला मुझसे पूछ रही थी... बुद्धिमान महिला है, और अनूठी भी-
इस अर्थ मग कि वह मुसलमान थी। वह पूछ रही थी, साम के साथ किस तरह व्यवहार करें? इतना कलह चलता है कि लगता है, इसका कोई उपाय नहीं है।
मैंने कहा, पहले तुम समस्या खड़ी करते हो और फिर उसका समाधान खोजने लगते हो। पहली बात, विवाह ही अनावश्यक है। विवाह के विलीन होते ही सब ससुराल वाले अपने आप विदा हो जाएंगे। जड़ ही काट दो।
दूसरी बात, जैसे ही पुरुष किसी स्त्री के साथ रहने योग्य हो जाता है, उसे उस स्त्री के साथ अकेला छोड़ देना चाहिए। यह जरा मनोवैज्ञानिक मामला है। वह नौ महीने मां के गर्भ में रहा है; उसने उसकी परवरिश की, शिक्षित किया, उसके काबिल बनाया। और अब तक उसकी जिंदगी में वह एकमात्र स्त्री थी। और ध्यान रहे, वह मां हो या न हो, वह एक स्त्री है। और उसके लिए यह बर्दाश्त के बाहर है कि एक अजनबी स्त्री घर में आए, जिसने तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं किया है... और अचानक तुम्हारी अपनी मां से वह स्त्री अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। और पच्चीस साल तक वह तुम्हारी देखभाल करती रही है। तुम सब कुछ भूल गए... कि जब तुम बीमार थे, वह रात भर तुम्हारे पास बैठी जागती रही... या तुम्हें शिक्षा देने के लिए वह काम कर रही थी... किसी न किसी तरह वह तुम्हारी जरूरतें पूरी कर देती थी, ताकि तुम्हें ऐसा न लगे कि तुम गरीब हो।
अचानक एक परायी और आ जाती है, और मां का तुम्हारे लिए कोई मूल्य नहीं
रह जाता। और उसके लिए पत्नी जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता; क्योंकि उसने तुमसे विवाह किया है, तुम्हारी मां से नहीं। उसका तुम्हारी मां से कुछ लेना-देना नहीं है। और जीवन के संबंध में उसके अपने सपने थे। उनका तुम्हारी मां से कोई तालमेल नहीं बैठता। संघर्ष शुरू हो जाता है। और फिर तुम एक तरफ से सम्हालने की कोशिश करते हो तो दूसरी तरफ से दरार पैदा होती है। यदि वह आदमी अपनी मां का पक्ष लेता है, जो कि वह अपना कर्तव्य समझता है, तो फिर उसकी स्त्री उसके लिए चौबीसों घंटे उपद्रव खड़ा करने वाली है- छोटी- छोटी बातों के लिए। वह असहनीय होता है। कर्तव्य निभाने के लिए वह इतना नर्क नहीं झेल सकता। यदि वह पत्नी का पक्ष लेता है तो मां आगबबूला हो जाती है; ऐसा रूप उसने पहले कभी नहीं देखा था। अब दोनों में बड़ी प्रतिस्पर्धा चलती है। और दो स्त्रियों के बीच बेचारा गैर-अनुभवी पुरुष मारा जाता है। और तुम समाधान चाहती हो? ... कोई जरूरत नहीं है। पहले तो, यह समस्या ही क्यों पैदा करनी? जैसे ही शादी हो जाती है, वह अपना घर अलग बसा सकता है; अपनी नौकरी, अपना काम स्वतंत्र रूप से कर सकता है। हमें इस बात की फिकर लेनी चाहिए कि वह पुराने परिवार से साथ न रहे। अब उसके जीवन में एक नए व्यक्ति का आगमन हुआ है। यह नया व्यक्ति पुराने ढांचे में समा नहीं सकता। यह इतनी सरल बात है। लेकिन, फिर भी यह बात बुनियादी नहीं है। बुनियादी बात यह है कि विवाह हो ही क्यों? दो व्यक्ति प्रेम करते हैं, वे एक साथ रह सकते हैं। प्रेम ऐसी चीज है कि आज है, कल नहीं होगा। कल जब प्रेम विदा हो जाएगा तो तुम क्या करोगे? तुम्हें दिखावा करना पड़ेगा। और आदमी के जीवन में बड़ा पाप तब होता है जब वह प्रेम का दिखावा करता है; क्योंकि प्रेम जीवन की श्रेष्ठतम गुणवत्ता है, और तुम उसका दिखावा कर रहे हो।
और अगर तुम्हें प्रेम का दिखावा करने की आदत हो जाए तो शायद तुम प्रेम
की प्रामाणिक गुणवत्ता को कभी खोज ही न पाओगे। वह दिखावा ही तुम्हारी वास्तविकता बन जाए... और दुनिया में लाखों की वही वास्तविकता बन गई है। उन्हें कभी प्रेम का अनुभव ही नहीं होता, वे हमेशा दिखावा करते हैं। मां से प्रेम करने का दिखावा करते हो। क्योंकि वह तुम्हारी मां है; तुम्हारे पिता से आदर करने का दिखावा करते हो, क्योंकि वे तुम्हारे पिता है; बच्चों से प्रेम करने का दिखावा करते हो, क्योंकि वे तुम्हारे बच्चे हैं। सब दिखावे। इन दिखावों से घिरे हुए तुम्हारा सच्चा विकास नहीं हो सकता। तुम अपनी क्षमता को वास्तविक नहीं बना सकते।
अमेरिका में कम्यून का हमारा अनुभव अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। समय का कोई सवाल नहीं है। सिद्ध करने के लिए चार साल काफी होते हैं। चार सालों में जो घटा है, वह चार सौ सालों में भी घट सकता है; और पांच हजार लोगों के

साथ जो घट सकता है, वह पचास हजार लोगों के साथ भी घट सकता है। सभी आदमी एक जैसे हैं।
तो मत कहना कि वह प्रयोग असफल हुआ। नहीं, प्रयोग तो सफल हुआ है। अमेरिका उसे पहचान नहीं सका। अमेरिका ने सिद्ध कर दिया है कि वह बुद्धिमान नहीं है, संवेदनशील नहीं है। अराजवादी, और साम्यवाद, बिना किसी संघर्ष के एक साथ जी रहे थे, इस संयोग को वे देख नहीं पाए। जहां तक मेरा संबंध है, हम सफल हुए हैं। हमने अपनी छाप छोड़ दी है, और कई प्रदेशों में, विभिन्न कालों में, भिन्न-भिन्न लोगों के साथ यह दोहराया जाएगा; और यह फैलने वाला है।
अन्य दृष्टियों से भी यह अत्यंत सफल रहा है। पहली बार मेरा अस्तित्व, मेरा दर्शन, मेरे लोग विश्व-विख्यात हो गए। पहली बार दुनिया को यह स्वीकार करना पड़ा कि एक निराले ढंग का आदमी है, जिससे शासन डरते हैं, धर्म डरते हैं। अब संन्यास एक घरेलू शब्द हो गया है। एक कम्यून नष्ट हो गया तो कोई परवाह नहीं। उस कम्यून से हमने बहुत कुछ सीख लिया है।
मेरा दूसरा कम्यून एक स्वतंत्र द्वीप पर होगा। तो उसमें शासन के हस्तक्षेप करने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। और कोई शासन हम पर हुक्म नहीं चला सकता कि तुम वीसा पर कितने दिन रह सकते हो या नहीं। वह हमारा अपना घर होगा। और जो जितना चाहे उतना रह सकता है। हम किसी देश की सीमा के अंतर्गत नहीं होंगे, हम आत्मनिर्भर होंगे। और उन लोगों ने जिस कम्यून को नष्ट किया है उससे कहीं अधिक श्रेष्ठतम और बेहतर कम्यून हम बनाएंगे। वह विश्व के सभी कम्यूनिस्टों के लिए आदर्श होगा। इस कम्यून के विनष्ट होने से अब पहली बार तुम पूरी दुनिया की नजरों में आए हो। अब तक तुम एक छोटा सा आंदोलन थे, रहा के एक किनारे पड़ा हुआ। अब हम रास्ते के बीच आ गए हैं। और अब प्रत्येक व्यक्ति को हमारे संबंध में कोई न कोई रुख अख्तियार करना ही पड़ेगा- या तो हमारे पक्ष मग या विपक्ष में। दोनों का स्वागत है। हम एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं छोड़ेंगे, जो उपेक्षा करे।
भगवान, आपके भारतीय संन्यासियों तथा प्रेमियों के लिए आपका क्या संदेश है? जो इस देश में रहने की आपकी अनिश्चितता के संबंध में चिंतित हैं, इस संबंध में वे क्या कर सकते हैं?
पहली बातः जीवन सदा अनिश्चित है। निश्चितता का ख्याल ही उपद्रव पैदा करता है; न केवल इस मामले में बल्कि और मामलों में भी। यहां और अन्यत्र मेरे जो संन्यासी हैं, उनके लिए मेरा संदेश है कि हमें अनिश्चितता के साथ रहना चाहिए। क्योंकि निश्चितता होती ही नहीं। तुम उस संबंध में कुछ नहीं कर सकते। वह बिल्कुल अप्राकृतिक है, अस्तित्वगत नहीं है।
आज तुम सांस ले रहे हो, कल नहीं ले पाओगे; क्या निश्चितता है? आज मैं यहां हूं, कल नहीं होऊंगा। जीवन जिस तत्व का अनुसरण करता है, वह अनिश्चितता। लेकिन हम डरपोक है और हम चीजों को सुनिश्चित बनाना चाहते हैं। हम अज्ञात से भयभीत हैं। इसलिए जो भी निश्चित दिखाई देता है उसे हम पकड़ लेते हैं। और इस कायरता के कारण, भय और किसी भी निश्चित दिखाई पड़नेवाली बात को पकड़ ने के कारण, पूरी मनुष्यता को अत्यधिक मुसीबत झेलनी पड़ी है।
क्योंकि केवल झूठी चीजें निश्चित होती है। प्लास्टिक का गुलाब सुनिश्चित होता है। वह आज है, कल भी रहेगा। वस्तुतः वैज्ञानिक तो कहते हैं कि प्लास्टिक को नष्ट करना अति कठिन है। ये सब प्लास्टिक के थैले, बोतलें, बर्तन, जो हम जमीन में फेंकते रहते हैं, उन्हें जमीन आत्मसात नहीं कर पाती। वे जमीन की रीसाइकलिंग की, चीजों को पुनः प्राकृतिक रूप में ले आने की प्रक्रिया में अवरोध पैदा करते हैं। प्लास्टिक तुम्हारे परमात्मा से अधिक चिरस्थायी है।
असली फूल तो अनिश्चित होगा ही। अब चुनाव तुम्हारा है। असली फूल जीवंत होगा। असली फूल में एक आनंद होगा। असली फूल में एक आनंद होगा। असली फूल में एक सुगंध होगी। असली फूल हवाओं में, वर्ष में, धूप में नाचेगा। लेकिन तुम्हें स्मरण रखना होगा कि चूंकि वह जीवंत है, सांझ होते-होते वह मुरझा जाएगा। और उसमें कुछ भी गलत नहीं है। चीजें सदा क्यों बनी रहें? उन्हें बदलते रहना चाहिए। तो नए फूल, नई, चीजें, नई घटनाएं संभव होगी।

जरा एक बात सोचो, यदि तुम्हारे सभी पूर्वज मर न जाते... और वह कोई छोटी- मोटी संख्या नहीं होती; और यदि डार्विन सही है तो... उस मकान में रहना, उन सब पूर्वजों के साथ, जो कि मनुष्य होंगे, धर्म मानव होंगे, बंदर होंगे, और भी सभी किस्म के जानवर, बिल्कुल मछली तक, तो वह एक अच्छा-खासा चिड़ियाघर होगा। और तुम तो पागल हो जाओगे या आत्महत्या कर लोगे। अच्छा है कि जीवन में परिवर्तन होता रहता है, उसमें नए के उदय के लिए जगह बनती रहती है।
तो मेरे संन्यासियों को मेरा संदेश यह है कि अनिश्चितता के बारे में चिंतित मत होना। उल्टे उसका आनंद लो। उसमें उत्तेजना होती है। अगर तुम सतर्क हो जाओ तो वह मस्ती बन सकती है। यदि यहां मेरा होना सुनिश्चित है तो तुम मुझे भूल ही जाओगे। लेकिन अगर मेरा होना अनिश्चित है, कल शायद मैं चला जाऊं। तुम मेरी उपस्थिति को माने रहकर बैठ नहीं रह सकते। फिर अगर तुम्हें मुझे मिलना है तो आज ही मिलना होगा। तुम उसे कल के लिए स्थगित नहीं कर सकते। यदि तुम मेरे दर्शन को जीना चाहते हो तो आज ही जीना होगा। तुम स्वयं को धोखा नहीं दे सकते कि मैं उसे कल जीऊंगा। क्योंकि कल तुम्हारे हाथ में नहीं है; और कौन जाने, शायद वह आए ही न।
अनिश्चितता सुंदर है। निश्चितता मुर्दा होता है। केवल मुर्दे सुनिश्चित होते हैं। जीवित लोग तो अनिश्चित होंगे ही।
इससे उनके लोग बड़ी उलझन में पड़ते हैं, क्योंकि उन्हें पक्का पता नहीं होता कि कल में क्या कहनेवाला हूं। वे चाहते हैं कि मैं कहीं पर तो रुकूं कि अब पूर्ण विराम आ गया। और तुम तोते की तरह मेरी बातें उद्धृत करते रहो- बिना इस डर के कि तुम्हारा खंडन करूं। लेकिन यह संभव नहीं है।
तुम्हें जानकर आश्चर्य होगा कि चीजें कैसे होती हैं। मेरे दुश्मन चाहते हैं कि मेरी जबान पर ताला लगे; मेरे होंठ सी दिए जाएं, और तब वे बड़े खुश होंगे। मेरे कारण उनको कोई तकलीफ नहीं होगी।
लेकिन बड़े सूक्ष्म रूप से, जो लोग मुझसे प्रेम करते हैं, वे भी यहीं चाहते हैं। हालांकि वे जानते नहीं हैं कि वे यह चाहते हैं कि मैं मेरा दर्शन, ईसाई धर्म शिक्षा की भांति बिल्कुल नपे-तुल शब्दों में प्रस्तुत करूं, ताकि तुम उसमें विश्वास कर सको। मैं तुम्हें विश्वास नहीं करने देता। तुम हमेशा संदेह में रहते हो... कल मैं ऐसा कुछ कह दूं जो उससे असंगत हो।
लेकिन मेरा अपना दृष्टिकोण यह है कि जीवन अपने आप में संगत नहीं होता; इसीलिए उसका विकास होता रहता है। कोई वृक्ष यदि संगत हो तो अपनी जड़ों से ऊपर विकसित नहीं होगा; वह जड़ों के साथ अपनी संगति बनो रखेगा। लेकिन वह असंगत होता है। वह जड़ों के अतिरिक्त भी कुछ और हो जाता है। वह तना बनता है। यदि वह तने के साथ संगत बना रहे तो आशाएं नहीं बनेगा। उनकी तने के साथ कोई संगति नहीं है। यदि वह शाखाओं के साथ संगत होगा तो उसके पत्ते नहीं उगेंगे; क्योंकि पत्तों के और शाखा के बीच क्या संबंध है? उस पर फूल कभी नहीं लगेंगे। फूलों और पत्तों के बीच क्या संबंध है? उस पर फल नहीं आएंगे, क्योंकि फल जड़ों से उतनी ही दूर हैं जितनी दूर कोई दो चीजें हो सकती हैं। तुम नहीं कह सकते कि उनमें कोई संगति है। लेकिन में, उनमें वही रस बह रहा, जो जड़ों में है, जो तने में है, जो फल में है। वह वही रस है। लेकिन उस रस को देखने के लिए तुम्हारे पास एक अंतर्दृष्टि चाहिए। नहीं तो तुम हर कहीं असंगतियां देखोगे।
तो मेरे लोग अनिश्चितता से प्रेम करना सीख लें, असंगति का सम्मान करना सीख लें। क्योंकि वह असंगति सिर्फ तुम्हारी आंखों में है। क्योंकि तुम गहरे नहीं देख सकते। गहरे में एक रस है, जो वही है, जो विभिन्न आकारों में अभिव्यक्त होता है।
और मैं अपने मित्रों को कभी भी निश्चितता में छोड़नेवाला नहीं हूं- कम
से कम जब तक मैं जिंदा हूं, तब तक। आखिरी सांस तक मैं असंगत बना रहूंगा। और मैं चाहूंगा कि मेरे लोग भी ऐसे ही हों। क्योंकि लोग धर्मांध हो जाते हैं। संगत लोग मनुष्यता के लिए अभिशाप सिद्ध हुए हैं।
मैं चाहूंगा कि मेरे लोग लचीले हों, संगत नहीं। वे जीवन के साथ बहे, जहां वह ले जाए। मैं जहां भी हूं, उनका हूं। और सिर्फ भारत के संबंध में क्यों सोचें? क्योंकि मैं किन्हीं राजनीतिक सीमाओं में विश्वास नहीं

करता। यह पूरी पृथ्वी हमारी है। यह संपूर्ण विश्व हमारा है। कहीं भी रहूं, इससे फर्क नहीं पड़ता। मैं तुम्हारे साथ हूं। मेरा प्रेम तुम्हारे साथ है।
सपना संदेश मैं तुम्हारे भीतर उंड़ेलता रहूंगा। मैं यहां रहूं या कहीं दूर, तुम जरा भी वंचित न होओगे। शायद मैं यहां रहूं तो ही तुम चूकोगे। क्योंकि यह मेरा अनुभव रहा है।
मैं चार साल तक बंबई रहा। मेरे फ्लैट के ऊपर ही एक दंपति रहते थे। चार साल तक वे मेरे पास आने की सोचते रहे, और निरंतर स्थगित करते रहे- यह सोचकर कि वे तो किसी भी क्षण मिल सकते हैं। तुमको जानकर आश्चर्य होगा कि जिस दिन मैंने बंबई छोड़ी, उन्होंने भी बंबई छोड़ दी। उसी सांझ वे संन्यास लेने आ गए।
मैंने उनसे पूछा, मैं तुम्हें पहचानता हूं। मैंने तुम्हें लिफ्ट में, सीढ़ियों पर देखा है। तुम उसी जगह रहते थे जहां मैं रहता था। उन्होंने कहा, हम रहते थे, लेकिन हम स्थगित करते रहे... कि आप यहां हैं, किसी भी दिन... लेकिन अब आप नहीं हैं। यद्यपि हम आपके संन्यासी नहीं थे, हम आपसे परिचित भी नहीं थे, आपकी मौजूदगी ने कुछ कर दिया है। अब हम उस घर में आपके बिना नहीं रह सकते। हमने बंबई छोड़ दिया है। अब हम यहां पूना में आपके संन्यासी बनकर रहने आए हैं,
ओरेगॉन में हजारों भारतीय आए जो पूना कभी नहीं आए थे। और ये हजारों भारतीय लोग इतने गरीब थे कि वे इतनी दूर अमेरिका तक यात्रा करने का सपना भी नहीं देख सकते थे। वह उनकी कल्पना के बाहर था। उन्होंने अपने मकान बेच दिए, अपनी जमीन बेच दी, अपनी जिंदगी जोखिम में डाल दी। क्योंकि जब वे वापस लौटेंगे तो फिर क्या करेंगे? लेकिन उन्होंने कहा, कुछ भी हो, लेकिन हम बूढ़े हैं और एक बार हम भगवान को देखना चाहते हैं। हम पूना में चूक गए। बंबई में चूक गए, जब कि वहां मिलना इतना आसान था। अब हम नहीं चूक सकते।
आदमी का मन बड़े बेतुके ढंग से काम करता है। मैं यहां हूं, तो जरूरी नहीं है कि उससे इस देश के संन्यासियों को सहायता मिलती हो। वे सोचेंगे कि भगवान तो यहां उपलब्ध ही हैं। मैं कहीं और हुआ तो वे इस तरह निश्चित नहीं हो सकते। और अच्छा है कि वे किसी भी तल पर मेरे बारे में निश्चित नहीं हो सकते। इस भांति मैं उन्हें सिखा रहा हूं कि अनिश्चितता के साथ आनंदमग्न होकर जैसे जीया जाएं; असंगत अस्तित्व के साथ आनंद से कैसे जीया जाए।
मैं जो भी कर रहा हूं या मेरे आसपास जो भी घट रहा है, वह मेरी देशना का सारभूत अंश है।
साधक के आंतरिक विकास के रास्ते में आनेवाले प्रमुख अवरोध क्या है?
और इन अवरोधों को वह किस भांति पार करे?
अवरोध ज्यादा नहीं हैं, बहुत थोड़े हैं। उनमें एक है, दमित मन। क्योंकि तुमने जो भी दबाया है, जब भी तुम ध्यान में शांत बैठोगे तब तक दमित ख्याल, वह दमित ऊर्जा, पहली बात होगी जो तुम्हारे मन में प्रकट होगी और तुम्हें भर देगी। अगर वह सेक्स होगा तो ध्यान भूल जाएगा और तुम एक अश्लील काम-क्रीड़ा के दौर में फंस जाओगे।
तो पहली बात, दमन को छोड़ दो, जो कि बिल्कुल सरल है; क्योंकि दमन प्राकृतिक नहीं है। तुमसे कहा गया है कि सेक्स पाप है। वह है नहीं। वह प्राकृतिक है। और अगर प्रकृति पाप है तो मैं नहीं सोचता कि पुण्य क्या हो सकता है। वस्तुतः प्रकृति के विपरीत जाना पाप है। एक छोटी सी समझ कि तुम जो भी हो, अस्तित्व ने तुम्हें इस तरह बनाया है। तुम्हें स्वयं को समग्रता से स्वीकार करना है। यह स्वीकृति उन सारे अवरोधों को हटा देगी जो दमन से पैदा हो सकते हैं।
दूसरी बात, जो साधक की राह की राह में अवरोध बनकर खड़ी हो जाती है वह है, ईश्वर के संबंध में उसके मन पर थोपी हुई धारणाएं। क्योंकि जैसे ही तुम ध्यान की बात उठाते हो वैसे ही ईसाई आदमी पूछेगा, किस पर? हिंदू पूछेगा, किस पर? जैसे कि ध्यान के लिए कोई विषय चाहिए!
ये सब धर्म निपट बकवास सिखते रहते हैं। ध्यान का इतना ही अर्थ है कि
मन में कोई विषय नहीं हैं और तुम अपनी चेतना के साथ अकेले रहे गए हो- एक दर्पण, जो कुछ भी प्रतिबिंब नहीं करता।

तो अगर तुम हिंदू होओगे तो तुम अपने अचेतन में परमात्मा की कुछ न कुछ धारणा लिए हुए हो- कृष्ण, राम या कोई और धारणा तो जैसे ही तुम आंख बंद करोगे... ध्यान का अर्थ है, किसी वस्तु पर ध्यान करना। तत्क्षण तुम कृष्ण या क्राइस्ट पर ध्यान करने लगते हो- और तुम चूक गए। ये कृष्ण और ये क्राइस्ट अवरोध हैं। इसलिए तुम्हें ध्यान रखना है कि ध्यान, किसी चीज पर मन केंद्रित करना नहीं है। ध्यान है, तुम्हारे मन का सब बातों से रिक्त होना- उसमें तुम्हारा ईश्वर भी शामिल है। और उस अवस्था में आना जब तुम कह सकते हो कि मेरे दोनों हाथ शून्यता से भरे हैं। उस शून्यता का खिलना जीवन की परम अनुभूत है।
तीसरी बात जो अवरोध बन सकती है, और अवरोध बनती है, वह है ध्यान के संबंध में इस तरह सोचना; जैसे तुम्हें ध्यान करना है- सुबह बीस मिनिट, या आधा घंटा, या दोपहर में या रात को। कुछ समय के लिए ध्यान करना और बाकी समय तुम जैसे हो वैसे ही बने रहना।
सब धर्म यही कर रहे हैं। एक घंटा ध्यान करना काफी है। लेकिन ध्यान का
एक घंटा और गैर-ध्यान के तेईस घंटे... तुम कल्पना नहीं कर सकते कि ध्यान पूर्ण चेतना में प्रवेश करने की दौड़ तुम किस तरह जीत सकते हो। तुम एक घंटे में जो कमाते हो वह तेईस घंटों में खो जाता है। फिर से तुम्हें अ, ब, स से शुरू करना पड़ता है। हर रोज तुम वही करोगे, हर जन्म में तुम वही करोगे, और तुम वही के वही रहोगे।
तो मेरी दृष्टि में ध्यान श्वासोच्छवास जैसा है। ऐसा नहीं कि तुम एक घंटा बैठो। मैं बैठने के खिलाफ नहीं हूं, मैं यह कह रहा हूं कि ध्यान ऐसा होना चाहिए जो छाया की तरह दिन भर तुम्हारे साथ- एक शांति, एक मौन, तनावरहित स्थिति। काम करते समय तुम पूरी तरह से उसमें होते हो। इतनी समग्रता से कि विचारों का नाता-बाना बुनने के लिए मन के पास कोई ऊर्जा नहीं बचती।
और तुम्हें जानकर आश्चर्य होगा कि तुम्हारा काम, फिर वह कुछ भी हो, गड्ढे खोदना, या कुएं से पानी लाना या कुछ भी- वह सब ध्यान में बदल जाता है। तभी बुद्धत्व को उपलब्ध होने की संभावना बनती है। तब तुम बैठ भी सकते हो क्योंकि वह भी एक कृत्य है, लेकिन तुम ध्यान के साथ बैठने का तादात्म्य नहीं करते। वह भी उसी का हिस्सा है। तुम चलते-चलते ध्यान करते हो, काम करते-करते ध्यान करते हो, शांत बैठे-बैठे तुम ध्यान करते हो कभी-कभी बिस्तर पर लेटे-लेटे तुम ध्यान करते हो।
ध्यान तुम्हारा निरंतर साथी बने। और यह ध्यान जो तुम्हारा निरंतर साथी बन सकता है वह बिल्कुल सरल सी बात है। मैं उसे साक्षीभाव कहता हूं। जो भी हो रहा है उसके साक्षी बने रहना। चलते समय, बैठते समय, खाते समय, तुम अपने को देखते रहते हो। और तुम आश्चर्य-चकित होओगे कि तुम अपने कृत्यों के जितने साक्षी होओगे उतने ही तुम उन्हें अधिक कुशलता से करने लगोगे। तुम इसलिए कर पाओगे क्योंकि तुम तनावरहित होते हो। उनकी गुणवत्ता ही बदल जाती है।
तम यह भी देखने लगोगे कि तुम जितने ध्यानपूर्ण होओगे उतनी तुम्हारी
हर भावभंगिमा सौम्य, अहिंसक हो जाती है, उसमें एक सौष्ठव होता है। और न केवल तुम, अन्य लोग भी इसे देखने लगेंगे।
किसी ने मुझे पूछा कि अब तो लोग संन्यास लेना चाहते हैं उन्हें आपने
यह भी इजाजत दी है कि यदि वे माला और कपड़े न पहनना चाहें तो उन्हें उसकी पूरी छूट है। लेकिन फिर वे कैसे पहचाने जाएंगे?
मैंने कहा, अब उनकी पहचान अधिक सूक्ष्म होगी। अब वे उनके ध्यान से पहचाने जाएंगे। और वे सचमुच ध्यान कर रहे हैं तो वे किसी को धोखा नहीं दे पाएंगे। बाजार में रहनेवाले लोग भी जिन्हें ध्यान का कोई अनुभव नहीं है, जिन्होंने ध्यान का नाम भी नहीं सुना है, देखेंगे कि कुछ बदलाहट हुई है। वे जिस ढंग से चलते हैं, जिस ढंग से बोलते हैं, उसमें एक गरिमा है; उनको एक मौन, शांति घेरे हुए है। लोग तुम्हारी प्रतीक्षा करने लगेंगे, क्योंकि तुमसे उन्हें पोष्ण मिलेगा।
तुमने अपनी जिंदगी में देखा होगा कि ऐसे लोग होते हैं जिनसे लोग बचते हैं। क्योंकि उनके साथ रहने से ऐसा लगता है कि वे तुम्हें चूस रहे हैं;

जैसे वे तुम्हारी ऊर्जा को खींचकर तुम्हें रिक्त किए दे रहे हैं। और जब वे विदा होते हैं तब तुम कमजोर अनुभव करते हो, जैसे तुम्हारा कुछ लुट गया हो। ध्यान में ठीक इससे उल्टा है। ध्यानी साथ होकर तुम भर जाओगे। तुम कभी- कभी उस व्यक्ति से मिलना चाहोगे। उसके पास सिर्फ होना काफी है।
मेरे एक प्राध्यापक, डा. एस. के. सक्सेना, दर्शन शास्त्र के विभाग-प्रमुख थे और मैं उनका विद्यार्थी था, लेकिन वे मुझे छात्रावास में रहने नहीं देते थे। और मेरे लिए यह जरा दिक्कत थी क्योंकि वे पियक्कड़ थे, जुआरी थे, भले आदमी थे, और अपने परिवार के साथ कभी नहीं रहें थे। उनका परिवार दिल्ली में रहते था। क्योंकि वे किसी बर्दाश्त नहीं कर पाते थे। और मुझे संकोच होता था क्योंकि वे मुझे अपने घर ले जाते थे, और फिर वे शराब नहीं पीते थे- सिर्फ मेरे प्रति उनके मन में जो सम्मान और प्रेम था, उसके कारण। और मैं जानता था कि उनके लिए बहुत कठिनाई होगी। वे बूढ़े आदमी हैं, और वे कोई कभी-कभार शराब पीनेवालों में से नहीं थे, पक्के पियक्कड़ थे। उन्हें शराब रोज लगती थी। उसके बिना वे जी नहीं पाएंगे।
तो मैंने उनसे कहा कि मैं एक शर्त पर आ सकता हूं कि आप मेरे कारण अपनी दिनचर्या में कोई परिवर्तन नहीं करेंगे। जो भी कुछ आप करते आए हैं वह जारी रखें। यदि आप पीना चाहते हैं तो शौक से पीएं, मैं वहां हूं ही नहीं। उन्होंने कहा, वही तो मुश्किल है। मैं तुम्हें वहां ले जाता हूं क्योंकि जब तुम वहां होते हो तब मुझे पीने की जरूरत ही नहीं महसूस होती है। मुझे लगता है कि तुमसे मुझे पोष्ण मिलता है, जब तुम मेरे मकान में होते हो तो मेरा मकान घर बन जाता है; अन्यथा मैं केवल मकान में रहता हूं। मैंने कभी घर जाना नहीं। मेरी पत्नी है, मेरे बच्चे हैं, लेकिन कभी किसी भांति वह वातावरण नहीं बन पाया, जो तुम्हारे घर में प्रवेश करते ही बन जाता है। तुम अलग कमरे में सोते हो, मैं अलग कमरे में सोता हूं, लेकिन जब तुम मेरे घर में होते हो तो मैं इतनी गहरी नींद लेता हूं- और वह भी बीना पीए। तो यह मत सोचना कि तुम्हें छात्रावास से अपने बंगले पर ले जाने में मैं कोई तुम पर अहसान कर रहा हूं। माना कि मेरा घर हर तरह से अधिक सुविधाजनक है लेकिन नहीं, तुम ही मेरे ऊपर अहसान कर रहे हो। मैं इतना भर जाता हूं।
उन्होंने मुझसे कहा, जब तुम वहां होते हो तब मैं इतना नहीं खाता जितना
कि रोज खाता हूं। और मेरे डाक्टर मुझसे कहते रहते हैं कि ज्यादा खाना मत खाओ। आपकी उम्र हो गई है, आप डाइबिटीज के मरीज हैं, शराब भी पीते हैं। वह शराब आपको नष्ट किए दे रही है। वह शराब आपके डाइबिटीज की बुरी हालत बना रही है और आप खाए चले जाते हैं- मिठाई से और स्वादिष्ट भोजन से आपको खास लगाव है।
लेकिन जब तुम होते हो तब मुझे भूख ही नहीं लगती। मैं भर जाता हूं। डाक्टर जिस बात को इतने वर्षों में नहीं कर सके... तुमने तो मुझसे की कहा भी नहीं। वस्तुतः मुझे उन्हें कहना पड़ता था कि आपको कुछ खाना चाहिए। मैं अकेला खा रहा हूं और आप सिर्फ बैठे हैं। वे कहते, मुझे पता है, लेकिन मुझे भूख ही नहीं है। और मुझे बहुत अच्छा लग रहा है।
ने केवल तुम बल्कि दूसरे लोग भी इस बदलाहट को अनुभव करने लगेंगे। बस
एक छोटा सा ख्याल रखना हैः साक्षीभाव।
आंतरिक जगत और बाट जगत के बीच संतुलन कैसे पैदा करें? चार्वाक और बुद्ध एक साथ कैसे बनें?
संतुलन करने की कोई जरूरत नहीं है, वे संतुलित हैं ही। यह दरार सिर्फ धर्मों ने पैदा की है। उन्होंने तुमसे कहा है कि तुम्हारा शरीर अलग है; तुम्हारी आत्मा अलग है। संसार पदार्थ है, ईश्वर आत्मा है।
इन सब धारणाओं ने एक खंडित अवस्था पैदा कर दी है, नहीं तो तुम एक साथ काम कर ही रहे हो। तुम्हारा शरीर, तुम्हारा मन, तुम्हारी आत्मा, सब संयुक्त होकर काम कर रहे हैं। उसमें कोई समस्या नहीं है। सिर्फ इन धारणाओं से तुम्हें मुक्त होना है, वे व्यर्थ हैं।
अस्तित्व एक है। शरीर उतना ही आध्यात्मिक है जितनी कि आत्मा भौतिक है। शरीर दृश्य आत्मा है, और आत्मा अदृश्य पदार्थ। लेकिन ऊर्जा नहीं है, ठोस होकर वह पदार्थ बन जाती है।

और अब आधुनिक भौतिकी ने इसे निःसंदिग्ध रूप से सिद्ध कर दरिया है कि अणु-ऊर्जा बन सकते हैं- विराट ऊर्जा। छोटे से अणु में इतनी ज्यादा ऊर्जा होती है।
तो भौतिकी के अनुसार, अब ऊर्जा और पदार्थ अलग नहीं है। और ऊर्जा है...
यह ऐसे ही है जैसे बर्फ होती है बर्फ की सघन शिला; वह पिघल सकती है और पानी बन सकती है। अब वह ठोस न रही। वस्तु तो वही है। उसे गरम करके हम भाप बना सकते हैं। पल भर के लिए तुम उसे देख सकते हो और फिर वह अदृश्य हो जाएगी। बर्फ, पानी और भाप, ये तीनों अवस्थाएं तीन अलग चीजें नहीं हैं। वह एक ही चीज हैं; एक ही ऊर्जा, जो विभिन्न चीजों में अभिव्यक्त होती है।
तो यह सवाल नहीं है कि कैसे कोशिश करें। क्योंकि यदि तुम कोशिश कर रहे
हो तो इसका मतलब है, तुमने विभाजन पहले ही स्वीकार कर लिया। और अब तुम, जो कि आत्मा हो, और शरीर जो कि चार्वाक है या जोरबा है, इन्हें जबरदस्ती एक साथ लाना है। नहीं, सिर्फ यह विभाजन छोड़ दो, सरलता से जीयो। फिर भोजन करना आध्यात्मिक हो जात है, नहाना आध्यात्मिक हो जाता है, प्रेम करना आध्यात्मिक हो जाता है। फिर तुम कुछ भी करो, तुम अपनी समग्रता उसमें उड़ेल देते हो- तुम्हारा शरीर, तुम्हारा मन, तुम्हारी आत्मा।
समाज उसमें अड़चन खड़ी करेगा, क्योंकि वह सोच ही नहीं सकता कि भोजन करना आध्यात्मिक हो सकता है। लेकिन चार्वाक यही कहते थेः खाओ, पीओ, मौज करो। लेकिन उस बेचारे को कोई समझ न सका। वह उन भारतीयों में से एक है जिन्हें सर्वाधिक गलत समझा गया है। वह कह रहा हैः खाने जैसी साधारण क्रिया भी आध्यात्मिक आनंद बनाओ।
और तुम्हारे बाकी सब कृत्यों के संबंध में यही बात सच है। किसी बात की निंदा करके उसका इंकार मत करो। उसमें कुछ अच्छा देखने की कोशिश करो।
मैं अमेरिका के कारागृह में था। कारागृह में एक कोठरी में छह कैदी थे।
वे प्रसन्न थे, क्योंकि वे प्रतिदिन मुझे दूरदर्शन पर देखते थे। और वे प्रतीक्षा ही कर रहे थे। और परिचारिका ने मुझे बताया के वे विभाग में जाकर अच्छे कपड़े ले आए। और उन्होंने स्नान किया है। और इन्हें किसी तरह यह पता चल गया है कि आपको एलर्जी है, इसलिए उन्होंने सुगंधित साबुन नहीं लगाया है। ये लोग इतने साथ-सुथरे कभी नहीं थे। और जेल में जितना संभव था उतना उन्होंने सब कुछ सुंदर आयोजित कर लिया है। और वे सब आपकी ही प्रतीक्षा कर रहे हैं।
और वे लोग सचमुच आनंदित थे। एक घंटे के बाद, जब हमें एक-दूसरे का परिचय कराया गया, और मैंने कहा कि मैं सारी रात सोया नहीं हूं इसलिए मुझे सोने दें, तो वे बोले, आप सो सकते हैं, हम कोई बाधा नहीं डालेंगे। और एक घंटे तक उन्होंने एक-दूसरे से बातचीत भी नहीं की। और मैं जब सोकर उठा तब उन्होंने पूछा कि सिर्फ एक अड़चन है; हमें बहुत बुरा लगता है कि इस कारागृह में करने के लिए कुछ भी नहीं है; या तो आप टी. वी. देखें या सो जाएंः खाएंः खाना खाएं, टी. वी. देखें, सो जाएं- बस यही आप कर सकते हैं। कोई काम नहीं है। तो हम ताश खेलते रहते हैं। और हम इसलिए चिंतित थे कि पता नहीं आपको अच्छा लगे या न लगे; और आप हमें ताश खेलने देंगे या नहीं। मैंने कहा, कोई हर्ज नहीं है। सच पूछो तो मैं तुम्हारे साथ ताश खेलूंगा। मुझे खेल के नियम तो पता नहीं हैं, तुम्हें मुझे सिखाने होंगे। और मैं नहीं जानता मुझे कितने दिन यहां रहना होगा। तो यह अच्छी शिक्षा होगी। तुम मुझे सिखा सकते हो।
उन्होंने कहा, आप सचमुच कह रहे हैं? आध्यात्मिक व्यक्ति ताश खेल सकता है? मैंने कहा, ताश में गैर-आध्यात्मिक क्या है? और इतनी एकाग्रता से और इतने ध्यान से खेल सकते हो कि ताश खेलना भी एक ध्यान बन सकता है। उन्होंने कहा, हमने इस तरह कभी सोचा ही नहीं था।
मैं उनके साथ ताश खेला। वे बड़े परेशान थे कि मैं खेल रहा हूं। उन्होंने कहा, आप सिर्फ हमारे लिए मत खेलिए। मैंने कहा, तुम्हारे लिए क्यों, मैं भी तो यहां हूं। मुझे पता नहीं है ये लोग मुझे कितने दिन तक रखनेवाले हैं। ताश खेलना अच्छा होगा। और तुम मुझे सिखा ही दो, क्योंकि वे मुझे एक कारागृह से दूसरे कारागृह में ले जाएंगे? तो मैं कुछ तो जान लूंगा।

तो उन्होंने कहा, हम आपको सभी गुर सीखा देंगे। बहुत बड़े गुर। वह अच्छा रहेगा। उन्होंने शेरिफ से कहा, हम सोचते थे कि आध्यात्मिक कहीं दूर बादलों में होती है; लेकिन यह सच नहीं हैं। यह आदमी ताश खेल सकता है, गुर सीख सकता है। और हम इतने आनंदित है कि आपने हमें उनके साथ रहने के लिए चुना।
और जब मैं वहां से गया तो वे सब रो रहे थे, आंसू बहा रहे थे। मैंने कहा, आंसू बहाने की जरूरत नहीं है। यदि तुम चाहोगे तो मैं फिर आ सकता हूं। मैंने एक छोटा सा अपराध किया नहीं कि वे मुझे वापस भेज देंगे। तो कोई अड़चन नहीं है। फिकर मत करो।
वे बोले, हम लोग नहीं चाहते कि आप यहां दुबारा आएं। आपके लोग वहां पर प्रतीक्षा कर रहे होंगे। हम सोच रहे हैं कि सिर्फ तीन दिन में आप इतने हमसे घुलमिल गए हैं कि हम आपके लिए रो रहे हैं, तो आपके लोगों पर क्या बीतती होगी जो आपके साथ बरसों से रह रहे हैं।
और यह अपराधी कह रहे हैं! और मैंने देखा कि वे अपराधी तुम्हारे राजनीतिकों और तुम्हारे अधिकारियों से कहीं अधिक मानवीय हैं, अधिक सच्चे और प्रामाणिक हैं। उनके साथ रहना बड़ा आनंदपूर्ण था।
16 दिसंबर 1985, अपराह्म, कुल्लू-मनाली

फिर पत्तों की पाजेब बजी नौवां प्रवचन

इस खेल में गुरु ही जीतता है

प्यारे भगवान, रजनीश टाइम्स परिवार तथा रजनीशधाम नव संन्यास कम्यून
के प्रत्येक सदस्य की ओर से बधाई। भारत तथा विदेश में बहुत से संन्यासी ऐसे हैं जिन्होंने आपको कभी नहीं देखा परंतु आपके प्रति उनका प्रेम एवं आपकी दृष्टि के प्रति उनकी प्रतिबद्धता प्रेरणा दायक है। यह कैसे घटित होता है, इतना प्रेम, इतनी श्रद्धा?

वस्तुतः यह आसान है अगर तुमने मुझे न देखा हो और फिर भी प्रेम घटित हुआ हो। यह प्रतिबद्धता कहीं ज्यादा शुद्ध, ज्यादा बेशर्त, ज्यादा अवैयक्तिक होगी। मुझे देखना, मेरे साथ होना और फिर भी मुझसे प्रेम करना कठिन बात है।
कारण यह है कि हमारे मन का इस ढंग से पालन-पोष्ण हुआ है कि हम हमेशा आकांक्षाओं से भरे हैं। अगर मैं तुम्हारी आकांक्षाओं की पूर्ति करता हूं। तुम्हारी श्रद्धा डावांडोल होने लगती है। और जहां तक मेरा संबंध है, मैं तुम्हारी आकांक्षाओं के पूरा नहीं कर सकता। यदि मैं तुम्हारी आकांक्षाओं को पूरा करता चलूं, तब मैं तुम्हारे विकास में मदद करने वाला न रहा। कोई द्वार नहीं खुलता। मैं यहां तुम्हारे मन को सहारा देने के लिए नहीं हूं। इसे आत्यंतिक ऊंचाई तक ले चलने के लिए मैं यहां हूं। लेकिन तुम्हारी आकांक्षाएं ही समस्या है।
सोए-सोए ही तुम जीवन भर छोटी-छोटी बातों में आशा किए जाते हो। और जब भी कोई बात तुम्हारी धारणा के विरुद्ध होती है, तो तुम कभी भी यह नहीं सोचते हो कि तुम्हारी धारणा गलत हो सकती है। तब निश्चित ही यह व्यक्ति जिम्मेवार है। ऐसा एक जैन परिवार में हुआ जहां मैं ठहरा करता था। शाम करीब छह बजे होंगे। जिस महिला के घर में मैं ठहरा हुआ था उसके पिता, जो कि काफी वृद्ध थे, मुझसे मिलने आए। जैन परिवारों में छह बजे शाम, रात्रि भोजन के लिए करीब-करीब अंतिम समय है। सूर्यास्त के पश्चात तुम भोजन नहीं कर सकते। मैं स्नान करने जा रहा था और उसके बाद भोजन करना था, चूंकि वे वृद्ध व्यक्ति काफी दूर से आए हुए थे और लगभग 95 वर्ष की उम्र रही होगी उनकी, सो मैंने कहा ठहरा, कोई जल्दी नहीं है, मैं थोड़ी देर से स्नान कर लूंगा और फिर भोजन कर लूंगा, इसमें कोई समस्या नहीं है। पहले मुझे उनसे बात कर लेने दो, क्यों आए हैं वे। 95 वर्ष के बूढ़े आदमी और पिछले तीस वर्षों से वे एक जैन आश्रम में रहा करते थे, संसार का त्याग कर चुके थे, एक संत के रूप में वे जाने जाते थे, मुझसे मिलने आना जैन समुदाय में आश्चर्यजनक बात थी! अतः बहुत से जैनी उनका अनुसरण करते हुए आए थे। सर्वप्रथम उन्होंने मेरे पांव छुए। मैंने कहा, यह ठीक नहीं है, क्योंकि आप 95 वर्ष के हैं! मेरे दादा जी की आयु भी 95 वर्ष नहीं थी।
उन्होंने कहा, मैं बहुत दिनों से आपके चरण स्पर्श करना चाहता था। मैं भयभीत था कि मृत्यु सभी कुछ नष्ट कर सकती है और कहीं मैं उनके चरण-स्पर्श से वंचित न रह जाऊं। मैंने आपकी केवल एक पुस्तक पाथ टू सेल्फ रिअलाइजेशन पढ़ी है। इसने मेरे पूरे जीवन को बदल डाला और तभी से आप मेरे गुरु रहे हैं। अगर मेरे वश में होता... एक सृष्टि कल्प में जैनों के चौबीस तीर्थंकर होते हैं, चौबीस पैगंबर होते हैं। इसका अर्थ है कि करोड़ों वर्षों में यह सृष्टि विलीन होगी और तब फिर एक नई सृष्टि का आरंभ होगा और फिर चौबीस तीर्थंकर होंगे।
उन्होंने मुझसे कहा, चौबीस तीर्थंकर पहले ही हो चुके हैं, लेकिन यदि
यह मेरे वश में होता तो मैं आपको पच्चीसवां तीर्थंकर घोषित कर देता। कारण यह है कि आपने मेरे साथ इतना कुछ किया है जो वे चौबीसों नहीं कर पाए। वह मेरी प्रशंसा कर रहे थे कि तभी एक नौकर आया और वह कहने लगा, आपके नहाने की व्यवस्था हो गई है और भोजन ठंडा हो जाएगा। यह सुनकर उन वृद्ध व्यक्ति को धक्का लगा। वह कहने लगे, क्या? आप शाम को नहाते हैं? जैन तीर्थंकर तो

बिल्कुल नहीं नहाते, क्योंकि वह तो शरीर को सजाना हुआ, इसको गंध रहित करना हुआ। यह तुमसे जो निम्नतर है उसकी सेवा करना है; जो उच्चतर है उसके लिए इसकी बलि चढ़ाई जा सकती है। इसलिए जैन तीर्थंकर नहाते नहीं। और मैंने कहा, हां, मैं दो बार नहाता हूं, एक सुबह, एक बार शाम। उन्होंने कहा, सूरज डूब चुका और आपने अभी तक खाना नहीं खाया? पहली तो बात, जैन तीर्थंकर दिन भर में सिर्फ एक बार भोजन करता है इसलिए रात्रि भोजन का प्रश्न ही नहीं उठता। अगर आप दो बार भोजन करते भी हैं तो आपको इतनी समझ तो होनी चाहिए कि यह कम से कम सूर्यास्त के पूर्व हो जाए।
वे सारी प्रशंसा भूल गए। अब मैं तीर्थंकर न रहा। वर्षों तक मैं सिर्फ
एक अपेक्षा बना रहा जिसका मैंने कोई वादा नहीं किया था। वह उनका ही मन था परंतु उन्होंने कह, मैं बिल्कुल गलत था। इतने वर्षों से मैं आपकी प्रशंसा करता रहा हूं, आपकी पुस्तकें पढ़ी हैं, लेकिन आप सही आदमी नहीं हैं। जिसका अनुगमन किया जाए। मैंने उनसे कहा, कि आप एक छोटी सी बात समझो। मैंने कभी भी आपको मेरा अनुसरण करने को नहीं कहा। मैंने कभी भी मेरी पुस्तक पढ़ने को नहीं कहा, मैंने कभी कहा नहीं कि आप मुझे अपना तीर्थंकर मानो। मुझ से कोई अपेक्षा रखने को मैंने कभी कहा नहीं। यह आसान था क्योंकि आपने मुझे देखा नहीं था, आपने मुझे जाना नहीं था। पुस्तक मृत है। और आप जो पुस्तक पढ़ रहे हो, वह मेरी पहली पुस्तक है, मैं बहुत आगे निकल गया हूं। अगर आपने मेरी दूसरी, तीसरी, चौथी पुस्तक भी पढ़ी होती तो उन्होंने आपकी सारी प्रशंसा को नष्ट कर दिया होता। लेकिन वे इतने क्रोध में थे कि जाते समय जब मैंने कहा, कि फिर मेरे स्पर्श नहीं करेंगे? क्योंकि आप काफी वृद्ध हैं, फिर दुबारा हम मिलें कि न मिलें, उन्होंने कहा कि मैंने एक बार गलती की है, दोबारा ऐसा नहीं कर सकता।
इसलिए जो लोग पुस्तकों, टेप, वीडियो, फिल्मों के माध्यम से मेरे पास
आए हैं उनको कोई समस्या नहीं है। उनके लिए उनका पुराना मन साथ लिए चलना आसान है। मैं उनके पुराने मन को बाधा नहीं पहुंचाता। वे मेरी पुस्तकों की अपनी अपेक्षाओं के अनुसार व्याख्या कर सकते हैं। असली कठिनाई तो मेरे साथ होना है। प्रतिदिन तुम मुझे ऐसी बातें कहते हुए पाओगे जो असंत हैं। तुम मुझे ऐसे कार्य करते देखोगे जो मुझे नहीं करने चाहिए थे, इस तरह से व्यवहार करते हुए जो कि मसीहा पा पैगंबर या एक अवतार के योग्य नहीं हैं। अतः असली समस्या तो उन लोगों को है जो मेरे साथ रह रहे हैं, क्योंकि उनको धीरे-धीरे, छोटे-छोटे अंशों में स्वयं ही अपने मन को, संस्कारों को गिराना होगा। उन्हें प्रतिक्षण मेरे और उनके बीच चुनाव करना होगा। या तो मैं रहूंगा या वे रहेंगे। दोनों एक साथ बिल्कुल नहीं रह सकते। अन्यथा वे निरंतर दिक्कत में, चिंता में पड़ेंगे। इसलिए या तो उन्हें स्वयं को बचाने के लिए मुझे छोड़ना पड़ेगा या यदि वे साहसी हैं तो उन्हें एक प्रक्रिया से होकर गुजरना पड़ेगा जो करीब-करीब मृत्यु के समान है, और वे पुनर्जीवित होंगे। जो लोग मेरे पास नहीं आए हैं, एक मनोहारी जगत की यात्रा कर रहे हैं- काल्पनिक। उनकी श्रद्धा, उनका प्रेम, उनकी स्वयं के मन की प्रति प्रतिबुद्ध है। मैं उनके मन की एक कल्पना मात्र हूं। एक बाट वास्तविकता नहीं, एक ऐसी वास्तविकता नहीं जिसके द्वारा उन्हें स्वयं को ही तोड़ना पड़ेगा।
जिस तरह सागर सतत स्वयं को किनारे के पत्थरों से तोड़ता रहता है... और यही एकमात्र परीक्षा होगी। लेकिन सामान्यतया हम यह सोचते हैं कि यह बहुत ही अनोखी बात है कि जिन लोगों ने केवल टेप पर मेरी आवाज सुनी है, मुझे वीडियो पर देखा है, मेरे प्रेम में पड़ गए हैं। यह बहुत से कारणों में से एक कारण है कि क्यों लोग मृत संतों को प्रेम करते हैं। वे जीसस क्राइस्ट के लिए मरने को क्यों तैयार हैं। वे यह भी नहीं जानते कि वह कभी हुए भी थे या नहीं। ऐसे भी लोग हैं जो यह सोचते हैं कि जीसस क्राइस्ट कभी नहीं हुई कि यह एक यहूदी नाटक था जो हर वर्ष खेला जाता था। ठीक भारत की तरह जैसे हम यहां प्रति वर्ष रामलीला खेलते हैं। कोई नहीं जानता कि क्या राम सच में हुए थे? जो कुछ हमें पता है वह है एक नाटक, जो पिछले पांच हजार सालों से हम खेलते चले आ रहे हैं। पांच हजार वर्षों तक लगातार एक नाटक खेलते-खेलते हमने राम को एक तरह की वास्तविकता प्रदान कर दी है। और राम के प्रति श्रद्धा

दिखाना, उनके प्रति समर्पित होना आसान है क्योंकि राम तुम्हारे ही मन की एक कल्पना हैं। तुम उन्हें एक रूप दे सकते हो। तुम उन्हें जैसा चाहो वैसा बना सकते हो। तुम अपनी विचार प्रक्रिया के अनुसार व्याख्या कर सकते हो और वे इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं।
यह एक ज्ञात तथ्य है कि तुम दुनिया में जितने भी धर्म देखते हो वे उनके संस्थापकों की मृत्यु के बाद निर्मित हुए। अजीब बात है! फिर तुम उन्हें संस्थापक क्यों कहते हो? उन्होंने इसे कभी बनाया नहीं। उनका पीछा किया गया, उन्हें सताया गया। तुम जो कुछ दुष्ट कृत्य कर सकते थे तुमने वे सब किए और जब वे मर गए तो एक महान धर्म उठ खड़ा हुआ- महान प्रशंसा, क्योंकि अब तुम व्यवस्था कर सकते थे। यह सब तुम्हारी कल्पना का खेल मात्र है। एक समसामयिक व्यक्ति को स्वीकार करना इतने प्रेम के साथ कि तुम्हारी उसके प्रति प्रतिबद्धता समग्र हो, यह एक अतिमानवीय कृत्य है, लेकिन यह रूपांतरित करता है। बुद्ध, महावीर, जीसस क्राइस्ट इनकी महानता को स्वीकार किसी को रूपांतरित नहीं करता। विश्व की आधी जनसंख्या ईसाई है। लेकिन हमें ऐसा कुछ दिखता नहीं है जिससे ऐसा लगे कि जीसस आधी मानवता में जीवित है। लाखों चर्च, लाखों पादरी, लेकिन तुम एक पादरी में वह शान, चमक, वह अधिकार नहीं देखते जो स्वयं के अनुभव से आती है। जो कुछ वे कर सकते हैं वह मात्र काल्पनिक समर्पण भर है। मनुष्य के बनाए हुए परमात्मा हैं, लेकिन जब कोई जीवित हो तो उसे परमात्मा कहना बहुत ही कठिन है। क्योंकि वह परमात्मा संबंधी तुम्हारी धारणाओं को निरंतर तोड़ता जाएगा। उदाहरण के लिए, जन यह सोचते हैं कि महावीर को कभी पसीना नहीं आया लेकिन मैं ऐसा नहीं कर सकता। और मैं यह भी जानता हूं कि महावीर भी ऐसा नहीं कर सकते थे, क्योंकि पसीना निकलना एक स्वाभाविक प्राकृतिक है। बिना पसीने के व्यक्ति जीवित नहीं रहेगा। पसीना तुम को एक सुस्थिर आंतरिक तापमान पर रखता है। जब बहुत गरमी होती है तो तुम्हें पसीना आता है। तुम्हारे पूरे शरीर में जो ग्रंथियां हैं वे पानी से भरी हुई हैं। जब भी किन्हीं परिस्थितियों में बहुत गर्मी हो तो ये पानी छोड़ने लगती हैं। वे सूरज को धोखा देती हैं। पानी के निकलते ही सूरज पाने को वाष्पीभूत करने लगता है। सूरज तुम्हारे अंदर प्रवेश नहीं कर सकता। पसीना सूरज को रोकता है और उसे पूरी तरह से धोखा देता है। सूरज वाष्पीकरण में व्यस्त हो जाता है और तुम्हारे भीत तापक्रम एकदम स्थायी बना रहता है। अगर ठंड है तो तुम्हारा पसीना नहीं निकलता है। अगर ठंडक है तो तुम कांपते हो। कंप-कंपी तुम को गरम कर देती है।
यह ठंडक के विरुद्ध एक प्रक्रिया है। कंपकंपी तुम्हें उसी तापक्रम पर रखती है। अतः सर्दी हो या गर्मी तुम्हारा शरीर एक निश्चित तापक्रम को बनाए रखने मग सक्षम है क्योंकि इसका जीवन अति सीमित है, मात्र 12 डिग्री तापक्रम- 9" से 110 डिग्री। 9" डिग्री से कम और कि यह तापक्रम बना रहे। लेकिन अगर तुम एक कहानी लिख रहे हो या कुछ कल्पना कर रहे हो तो तुम उसमें कुछ भी जोड़ सकते हो- महावीर को पसीना नहीं आता। लेकिन जैनियों के लिए यही मापदंड है।
जब तक वे नहीं पाते कि कोई कड़ी धूप में नग्न खड़ा है और फिर भी पसीना नहीं आता, तब तक वे उसे सचमुच पहुंचा हुआ नहीं स्वीकार करते। अतीत में से परमात्मा का निर्माण कर लेना अति सरल है। एक समय था जब महावीर समसामयिक व्यक्ति थे। उनके समकालीन लोग उन्हें परमात्मा नहीं मानते थे। बुद्ध एवं महावीर दोनों ही समकालीन थे। औरों की क्या कहें, स्वयं उनमें से किसी ने भी दूसरे को परमात्मा नहीं माना। उनकी अपनी अपनी परिभाषएं थीं, और कोई भी जीवित व्यक्ति तुम्हारी परिभाषा में सीमित नहीं रह सकता।
यह आसान है उनके लिए, जो दूर हैं। वे मेरे मैं करीब-करीब समसामयिक नहीं हूं। वे मुझमें जो भी गुण चाहते हैं, रच सकते हैं। वे मेरे चारों ओर कोई भी धारणाओं का इंद्रजात रच सकते हैं। मेरे बारे में सपने सजाने के लिए वे स्वतंत्र हैं। उनका समर्पण और प्रेम और उनकी प्रतिबद्धता एक स्वप्न है। और वे बहुत अच्छा, बहुत संतोष, बहुत खुशी अनुभव करेंगे कि उन्हें एक ऐसी व्यक्ति मिल गया है जो कि पूर्णरूपेण उनकी धारणा के अनुकूल पड़ता है कि व्यक्ति के कैसा होना चाहिए। उन्होंने पाया नहीं, उन्होंने रचा है, उन्होंने आविष्कार किया है।

परंतु मेरे निकट होने के लिए तुम्हें अपनी अपेक्षाओं को छोड़ना होगा,
जो कि प्रत्येक व्यक्ति में बहुत सूक्ष्म रूप से मौजूद हैं। और विशेषकर मेरे साथ, क्योंकि मैं कटिबद्ध हूं कि मैं किसी की अपेक्षाओं को पूरा नहीं करूंगा। क्योंकि इसका अर्थ है कि मैं उसके विरुद्ध हूं। मैं उसके विषाक्त मन को बढ़ावा दे रहा हूं। मुझे तो उसे झकझोरना है चाहे वह मेरा दुश्मन ही क्यों न हो जाए। लेकिन मुझे झकझोरना है। और मुझे एक ढंग से जीना है, एक ढंग से बोलना है, ऐसी बातें कहनी हैं जिन्हें उसे अपने पूरे मन के खिलाफ भी समझना है, स्वीकार करना है। एक सदगुरु के साथ होने का अर्थ है संर्घ्ष-तुम्हारे मन और गुरु के बीच एक संर्घ्ष। और अगर गुरु सचमुच ही गुरु है तो वह तुम्हारे मस्तिष्क को जीतने नहीं देगा। या तो गुरु जीतता है या फिर तुम्हें छोड़कर चले जाना होता है। लेकिन इस खेल में तुम्हें जीतने नहीं दिया जा सकता है। यह एक विचित्र खेल है जिसमें हमेशा गुरु ही जीतता है। और फिर सतत हारते रहने के लिए साहस की जरूरत है। और फिर भी उसी व्यक्ति के प्रेम में होना जो कि तुम्हें पराजित रहा है, फिर भी उसी व्यक्ति के प्रति प्रतिबद्ध रहना जो कि तुम्हें मिटा रहा है। साधारणतः लोग इसे समझ नहीं पाते लेकिन यही यथार्थ है।

भगवान, बहुत से मंद बुद्धि के लोग काफी शोरगुल मचाते हैं। प्रेमपूर्ण, शांत, कोमल एवं ध्यानपूर्ण संन्यासियों को ब्रेन वाश कहकर गलत व्याख्या करते हैं। इस तरह की घटनाओं के संबंध में आपका क्या कहना है?

उन मंद बुद्धि लोगों से कहो कि वस्तुतः यह ब्रेन-वाश ही नहीं बल्कि माइन्ड-वाश है, इसकी जड़ें कहीं अधिक गहरी हैं। ब्रेन-वाश का अर्थ है कि पत्तों को काटना, जो फिर से आ जाएंगे। वस्तुतः तम एक पत्ता काटोगे, तीन आ जाएंगे उसके स्थान पर। वृक्ष इतनी जल्दी हारने वाला नहीं। उन्हें कहो, कि यह माइंड-वाश है। और तुम सही रास्ते पर हो, तुम जो भी कह रहे हो वह सही है। लेकिन वह पूर्ण सत्य नहीं है, सिर्फ एक अंश है। पूर्ण सत्य यह है कि हमने मन को पूर्णतः गिरा देने का निर्णय किया है क्योंकि मन ने सिवाय पीड़ा, संताप, कष्ट, दुःस्वप्न के कुछ भी नहीं दिया है। तुम चाहो तो अपना मन बचाए रखो। तुम देख सकते हो कि हमारे लोग सरल हैं, निर्दोष हैं, आनंद में रहते हैं, वे प्रेमपूर्ण हैं। यदि ब्रेन-वाश इतना कुछ दे सकता है तो यह उचित ही है। इसमें गलत क्या है? और उनसे यह भी कहो कि हमारे गुरु ब्रेन-वाश पर ही नहीं रुकते। क्योंकि यह मात्र ऊपरी है। वह मन (माइंड) को ही पूर्णरूपेण मिटा देना चाहते हैं और हमें अ-मनी (नो-माइंड) बनाना चाहते हैं जिसे कि वे ध्यान कहते हैं। लेकिन तुम्हारी समस्या क्या है? तुम अपने दुख में खुश रहो। तुम अपनी पीड़ा, संताप इत्यादि में जो कि तुम अपने को तथा औरों को दे रहे हो।- खुश रहो। क्यों तुम कुछ लोगों को, जो दुखी नहीं होना चाहते, छोड़ नहीं सकते, जो कि जीवन में आनंद से रहना चाहते हैं?
दरअसल हमें मंद बुद्धि के लोगों का उनकी ही भूमि पर सामना करना सीखना चाहिए। वे कहते हैं कि यह ब्रेन-वाश है। उनसे कहो कि हां, यह है। तुम किसलिए इंतजार कर रहे हो कि तुम्हारा ब्रेन-वाश न हो? यह पूरा ड्राइक्लीन है। तुम्हारे पास बचाने योग्य है भी क्या? किस बात से तुम भयभीत हो?
वे जो कुछ कहते हैं उन्हें उन्हीं के शब्दों पर लो। यदि वे कहते हैं
कि यह सम्मोहन है, स्वीकार करो कि हां यह सम्मोहन ही है, लेकिन इसमें बुरा क्या है? तुम खुश नहीं हो, तुम अपने जीवन में आनंदित नहीं हो, तुम पीड़ा से भरे हो। तुम मृत्यु के बाद के स्वर्ग की प्रतीक्षा कर रहे हो। हमने इसे यहीं पर पा लिया है। आर अगर इसे तुम सम्मोहन कहकर पुकारना चाहते हो तो हमें कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन यह पाने जैसा है। आओ और अनुभव करो! हो सकता है तुम्हें भी स्वाद अच्छा लग जो। हमने तो दोनों को आजमाया है। तुम्हारा जीवन भी हमने जीया है और पाया कि यह नर्क है। और हमारा जीवन भी हमने जीया है जिसको कि तुम सम्होहन कहते हो, हम सम्होहन को चुनते हैं नर्क के विरुद्ध।
वे लोग तुम्हारी ओर सिर्फ शब्दों को फेंकते हैं। वे सोचते हैं कि ऐसा करे वे घटना की निंदा कर सकते हैं। वे मूढ़ हैं। उनके शब्दों को लेकर लड़ने

से कि यह ब्रेन-वाश नहीं है, सम्मोहन नहीं है, तुम उन मूढ़ों के जाल में आ जाते हो। अच्छा है उन्हें झटका देना, यह कह कर कि ऐसा ही है। लेकिन स्पष्ट कर दो कि हम दोनों से ही परिचित हैं। हम तुम्हारे जीवन को भी जानते हैं, हमने उसे जीया है और हम इस जीवन के भी जानते हैं। हम जी रहे हैं। तुम दोनों को नहीं जानते हो। इसलिए तुम हमारे जीवन के बारे में कुछ नहीं कह सकते। थोड़ा साहस जुटाओ, हमारे जीवन का भी अनुभव लो, तब जाकर तुम तुलना कर सकते हो। और अगर तुम पाते हो कि ब्रेन-वाश संन्यासी का जीवन, सम्मोहित संन्यासी का जीवन पुराने नर्क से श्रेष्ठ नहीं है तो तुम अपने नर्क में हमेशा वापस जा सकते हो। हम तुम्हारी सहायता करेंगे। हम तुम्हें आश्रम के बाहर फेंक देंगे।
मैंने पाया है कि उनके लेबल को स्वीकार कर लेना ज्यादा ठीक है बजाय लेबल के बारे में अनावश्यक विवाद करने के। लेबल से फर्क नहीं पड़ता बल्कि एक मुदा बना लो कि हमें इसका अनुभव है और तुम बिना अनुभव के बोल रहे हो। तुलना के लिए तुम्हारे पास कोई उपाय नहीं है, हमारे पास है। और फिर भी हम तुम्हारे नर्क में नहीं आ रहे हैं।

भगवान श्री, ऐसा मालूम पड़ता है कि अमरीकन अधिकारी तथा शासन, और विश्व
भर के सभी शासन, हम संन्यासियों की एकता और साहस को देखकर इतने ज्यादा आश्चर्य चकित हुए हैं, जितने कि हम लोग उनके आपके प्रति किए नए नृशंस दुर्व्यवहार से भी नहीं हुए हैं।
भगवान, क्या आप ऐसा सोचते हैं कि हमारी कोई भूल हो रही है, या फिर इस तरह की असाधारण परिस्थिति से हम क्या सीख सकते हैं?

नहीं, तुम्हारी कोई भूल नहीं हुई हैं। तुम्हारे लिए यह घटना इतनी नयी थी, कि तुम समझ ही नहीं सकते कि क्या हो रहा। तुम असमंजस में पड़ गए। लेकिन तुमने अपनी ताकत अच्छी तरह से दिखा दी। और तुमने अमेरिकन सरकार को इस बात का एहसास दिलाया कि स्वयं की लोकतांत्रिक प्रतिमा पर धब्बा लगाए बिना वे मेरे साथ कुछ नहीं कर सकते। इसमें बहुत खतरा था।
एक कारागृह का शेरिफ- पहले कारागृह का, जिसमें मैं था- मेरा मित्र बन गया था; उसने मुझे बताया, मुझे यह सब आपसे नहीं कहना चाहिए लेकिन दुनिया भर से हजारों तार, हजारों फोन, हजारों फूल हजारों विरोध-पत्र... शासन हिल गया है। उन्होंने यह नहीं सोचा था कि सिर्फ एक आदमी को छूना ओ से खेलने जैसा है। तो मैं आपसे एक बात कह सकता हूं, कि वे आपका बाल भी बांका नहीं कर सकते। वे आपके शरीर को हाथ भी नहीं लगा सकते। बल्कि हमें तो ऐसे आदेश हैं कि आपको पूरी सुरक्षा देनी है, और आपको कुछ भी नहीं होना चाहिए; नहीं तो हम संसार को मुंह दिखाने के लायक नहीं रहेंगे।
और यह बड़ी अजीब बात थी कि उन्हें मेरे लिए सुरक्षा की वही व्यवस्था करनी पड़ी, जो वे अमेरिका के राष्ट्रपति के लिए करते थे। मेरे पीछे पांच कारें होती थीं, पांच मोटर साइकिलें, रास्तों पर यातायात बंद की जाती। उन्हें डर था कि जब तक मैं उनके संरक्षण में था तब तक यदि मुझे कुछ हो जाता, तो उसके लिए वे जिम्मेदार ठहराए जाते।
इस आदमी ने मुझसे कहा, यह मेरी जिंदगी में पहली बार हो रहा है कि हमें इसकी चिंता नहीं है कि आप भाग जाएंगे, हमें इसकी चिंता है कि कोई आपको नुकसान न पहुंचाए। अन्यथा उसका दोष हमारे सिर पर आएगा।
पहले ही दिन किसी ने उसे फोन किया। अभी मुझे वहां पहुंचे बस दो-तीन घंटे ही हुए होंगे, वह आदमी शायद आस्ट्रेलिया से बोल रहा था- कि आप चिंतित होंगे; क्योंकि इतने ज्यादा टेलीफोन आ रहे हैं, तार आ रहे हैं।
उसने उस आदमी से कहा, नहीं, हम इसके आदी है; क्योंकि यह विशिष्ट लोगों
का कारागृह है। और यहां पर महत्वपूर्ण व्यक्ति आते रहे हैं- मंत्री मंडल के सदस्य, सर्वोच्च राजनीतिक वर्तुल के लोग। तो इसमें कोई बड़ी समस्या नहीं है।
लेकिन तीन दिन के बाद आंखों में आंसू भरकर उसने मुझसे क्षमा मांगी। उसने कहा, यह मेरे हृदय पर बोझ बना रहेगा, जो मैंने उस व्यक्ति से कहा। मैं उसका नंबर नहीं जानता, अन्यथा मैं उससे माफी मांगता। तब आपको आए दो-तीन

घंटे ही हुए थे, इसलिए मुझे आपके बारे में कुछ पता नहीं था। लेकिन अब, तीन दिन के बाद, मैं सुनिश्चित रूप से कह सकता हूं कि हमारे कारागृह में ऐसा व्यक्ति कभी नहीं आया। पूरा कारागृह आपके पक्ष में है; इसके पांच सौ कैदी आपके पक्ष में हैं; इसका सम्पूर्ण चिकित्सा विभाग आपके पक्ष में है, मैं आपके पक्ष में हूं। और पूरे विश्व का ध्यान इस बात पर है कि आपको कुछ हो गया, तो वह अमेरिका की प्रतिमा के लिए बहुत खतरनाक सिद्ध होगा।
तो मैं आपसे यह कहने आया हूं कि मुझे क्षमा करें, कि मैंने उस आदमी से कहा कि हमारे यहां बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति आ चुके हैं; लेकिन वह वक्तव्य गलत था। हमारे यहां ऐसा व्यक्ति कभी नहीं आया, जिसके बारे में पूरा जगत चिंतित हो। हमारे यहां मंत्री मंडल की कोटि के लोग आए हैं, लेकिन आखिर... अधिक से अधिक उनका महत्व राष्ट्रीय तल पर था; लेकिन कोई भी अंतरराष्ट्रीय रूप से महत्वपूर्ण नहीं था, और न किसी को इतना प्रेम मिला।
दूसरे दिन उसने मुझसे पूछा, हम इन फूलों का क्या करें? इतने फूल आ रहे हैं कि इस विशाल कारागृह में भी उनके लिए जगह नहीं है।
तो मैंने उससे कहा, इन फूलों को मेरी ओर से सभी विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में भेज दो।
उसने वही किया। और उसका प्रत्युत्तर असीम था। जब वे मुझे उस कारागृह
से हवाई अड्डे पर ले जाने लगे, तो पूरे रास्ते पर दोनों ओर खड़े होकर विद्यार्थी फूल बरसा रहे थे।
वस्तुतः वे लोग पछता रहे होंगे कि उन्होंने बड़ी मूढ़तापूर्ण भू की।
उन्होंने हमारे शांतिपूर्ण आंदोलन को एक विश्व-विख्यात घटना बिना दिया। सब सारे संसार में, सभी भाषा आए में, यह एक घरेलू नाम हो गया है।
कारागृह में बिताए गए मेरे बारह दिन इस आंदोलन के लिए बहुत सहयोगी रहे हैं। वे कुछ भी कर नहीं सके क्योंकि उनके हाथों में कुछ था ही नहीं। वे सिर्फ बेवकूफ बने। और उन्होंने पाया क्या?
हमने उनके मरुस्थल को मरूद्यान में बदल दिया था, अब फिर से वह मरुस्थल
बन जाएगा- यह उनका लाभ हुआ। लेकिन हमने बहुत कुछ पाया है। ये चार साल अब नए कम्यून की आधार शिला बनेंगे, जो कि स्वभावतः अधिक श्रेष्ठतर, अधिक बेहतर होगा। तब हम इतने कुशल नहीं थे; और उससे हमें बहुत सी नयी कल्पनाएं मिली हैं।
उदाहरण के लिए, अब मैं किसी भी दशा में, किसी शासन के अंतर्गत कम्यून नहीं बनाऊंगा। मैं एक नितांत स्वतंत्र द्वीप की खोज कर रहा हूं, जहां तुम्हें किसी वीसा की जरूरत नहीं है, कोई तुम्हें यह न बताए कि तुम कितने दिन रह पाओगे।
और हम वहां पर कोई शासन निर्मित नहीं करेंगे; हम उसको राष्ट्र नहीं बनाएंगे क्योंकि मैं शासनों और राष्ट्रों के खिलाफ हूं। और अब हमें उस कम्यून में कुछ और भी सिद्ध करना हैः लोग बिना राष्ट्र के रह सकते हैं, लोग फौजों के बिना रह सकते हैं और उन्हें कारागृहों, पुलिस तथा न्यायाधीशों की कोई जरूरत नहीं है।
तो यह अत्यधिक सहयोगी रहा है। और विश्व में फैल हुए संन्यासियों के पूरे समूह को इस घटना ने नव-जीवन दिया है। वे सोचने लगे हैं कि वे कुछ अर्थपूर्ण काम कर रहे हैं, जो कि दुनिया की महानतम सत्ता को विचलित कर सकता है।
अमेरिका अकारण विचलित नहीं हुआ था। वह इसलिए विचलित हुआ था क्योंकि
हम कुछ ऐसा निर्माण कर रहे थे, जो हर सरकार को और हर राजनीतिक को विचलित कर देगा।
तो अब मेरे लिए संन्यास, सिर्फ तुम्हारा ध्यान, तुम्हारी शांति, तुम्हारा मौन तुम्हारा जीवन ही नहीं है। अब, बड़े विचित्र ढंग से, हम संपूर्ण विश्व की नियति के साथ जुड़ गए हैं। उन्होंने ही हमें बाध्य किया है। हम चुपचाप अपनी राह पर चले जा रहे थे, हम उन्हें कोई तकलीफ नहीं दे रहे थे; उन्होंने ही हमें उकसाया है। तो अब हमें यह सिद्ध करना है कि वे सही थे! अब यह किसी व्यक्तिगत जीवन की वैयक्तिक क्रांति न रही। हम ऐसा क्षेत्र निर्मित करेंगे, जो पूरे विश्व के लिए आदर्श बन जाएगा। अगर यह पांच हजार या दस हजार, या उससे अधिक व्यक्तियों के साथ घट सकता है, तो यह हर

कहीं संभव क्यों नहीं हो सकता? हम पहली बार, उन समस्याओं में प्रवेश कर रहे हैं, जिन्हें दुनिया के नेता हजारों सालों में सुलझा नहीं सके। और हमने पांच सालों के भीतर उन्हें सुलझा दिया है। और हम में आत्म-उत्साह बहुत है।
निश्चित ही, मैं कैद में था इसलिए संन्यासी बहुत दुखी हुए। और वे असहाय अनुभव कर रहे थे क्योंकि वे कुछ कर नहीं सकते थे। लेकिन उन्हें इस भांति नहीं सोचना चाहिए। जो भी आवश्यक था वह सब उन्होंने किया। जरूरत थी सिर्फ विश्व जनमत की, और उन्होंने विश्व जनमत बदल दिया है। अब हमारे प्रति लोगों की इतनी सहानुभूति है, जितनी पहले कभी नहीं थी। अब बहुत बड़ा बुद्धिजीवी वर्ग हममें उत्सुक हुआ है, जो पहले कभी नहीं था। विश्व का पूरा प्रसार माध्यम--... दो महीने लगातार हम चर्चित रहे; और फिर भी हर देश से मांग है कि वे आना चाहते हैं, और इस संबंध में कुछ अधिक जानकारी चाहते हैं।
जो घटनाएं घटी हैं; उनके संदर्भ में देखा जाए तो हमारी प्रचंड विजय हुई है। अगर वे घरों और रास्तों को नष्ट करते हैं तो कौन इसकी परवाह करता है? हम कोई घर नहीं हैं, रास्ते नहीं हैं। और अगर हम वह कम्यून निर्मित कर सकते हैं, तो हम कहीं भी और कई कम्यून निर्मित कर सकते हैं।
और अब की बार, पूरे विश्व का ध्यान उस पर केंद्रित होगा। यह सिर्फ उन लोगों के लिए नहीं होगा, जो साधारण जगत से आगे होना चाहते हैं, जो संन्यासी हैं। अब हम इस बात की पूरी फिकर लेंगे कि पूरे विश्व उस पर लगा रहे, और पूरा विश्व उससे कुछ सीख ले। उन्होंने हमें उकसाया है, अब हमें चुनौती को स्वीकार करना है। और मुझे चुनौतियां बहुत अच्छी लगती हैं। और मुझे परिवर्तन भी अच्छे लगते हैं। तो चिंता करने की कोई बात नहीं है।
अब हम इतनी अच्छी स्थिति में हैं, जितने पहले कभी नहीं थे। सबसे मुश्किल स्थितियां, तुम्हारे भीतर जो श्रेष्ठतम है उसे प्रकट करती हैं। जब स्थिति मुश्किल न हो, तो आदमी की मनोवृत्ति शिथिल होने की ओर, सुस्त होने की ओर झुकती है। यदि घर में आग लगी हो, तो तत्क्षण तुम देखोगे कि हर व्यक्ति की पूरी ऊर्जा जग जाती है फिर कोई इसकी फिकर नहीं करेगा कि बर्फ की वर्षा हो रही है, या ठंड है या क्या है!
अमेरिका ने हमारे ऊपर आक्रमण करके अपनी ही मौत को निमंत्रण दिया है। उसमें कुछ देर जरूर लगेगी, लेकिन मैं इस घटना को इसी तरह देखता हूं।

भगवान, एक बार आपने कहा था कि दो सौ ज्ञानोपलब्ध व्यक्ति ऐसी ऊर्जा निर्मित करेंगे, जो उन शक्तियों को नष्ट कर देगी, जो तीसरा विश्व युद्ध शुरू कर सकती हैं। इन दो सौ व्यक्तियों कोढूंढ़ने में आप कहां तक सफल हुए हैं?

मैं काफी हद तक सफल हुआ हूं। लेकिन इस बीच कई चीजें बदल गई हैं।
एक बात सुनिश्चित है, कि हम दो सौ ज्ञानोपलब्ध व्यक्ति निर्मित करने में और तीसरे विश्व युद्ध से बचने में सफल हो जाएंगे। लेकिन सवाल यह है, जो इस बीच पैदा हुआ है, कि- और यहां पर मेरी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती- क्या हम तीसरे विश्व-युद्ध से बचना चाहेंगे? क्या उससे इसलिए बचना चाहिए, ताकि ये मूढ़ इसी तरह जीए चले जाएं? क्या यह बेहतर नहीं होगा कि ये बेवकूफ आपस में लड़ें? एक-दूसरे को मार डालें और दुनिया में बहुत थोड़े से लोग बचें, जो फिर अ ब स से शुरुआत करें?
इस संबंध में किसी ने सोचा नहीं है, लेकिन मुझे लगता है कि यह अस्तित्वगत जरूरत है। मनुष्य इतने कुरूप, अमानवीय और जहरीले मार्गों पर पहुंच गई है, कि अच्छा होगा कि उसे खत्म ही हो जाने दें। रोनाल्ड रीगन की रक्षा करने में क्या सार है? मुझे इसमें कोई मतलब नहीं दिखाई देता।
यह अत्यंत महत्वपूर्ण बात है कि फिर से नयी शुरुआत क्यों न की जाए? पुरानी और सड़ी-गली चीजों का बोझ इतना ज्यादा हुआ है कि उसकी रक्षा करते जाना, करते जाना- इससे उस सड़े-गले कचरे की भी रक्षा हो जाती है, उन हालातों की भी रक्षा हो जाती है। अच्छा होगा कि इस्लाम नष्ट हो जाए, हिंदू धर्म नष्ट हो जाए, ईसाइयत नष्ट हो जाए, पोप चले जाएं, वेटिकन विदा हो जाए।

निश्चय ही, कुछ लोग रहेंगे। ये लोग आदिवासी होंगे, जिनका कोई धर्म नहीं होगा, कोई राजनीति नहीं होगी, जो शिक्षित नहीं होंगे और जो यथासंभव स्वाभाविक जीवन जी रहे होंगे। यह कहीं बेहतर होगा। एक बार ये सोवियत युनियन और अमेरिका मिट जाएं तो नए मनुष्य की शुरुआत करने में सुविधा होगी। क्योंकि उसका कोई अतीत नहीं होगा। सारा अतीत खो गया। नए लोग... बचे हुए थोड़े से लोगों के पास सिर्फ भविष्य होगा और जो कुछ भी अतीत में हुआ है उसका अनुभव होगा- उसे दोहराने के लिए नहीं, जीवन की नयी राहों की खोज करने के लिए।
तो मैं किसी ऐसे द्वीप की खोज में हूं, जो इतनी दूर हो कि वह उस युद्ध
से अछूता रहेगा जो अमेरिका और रूस के बीच होगा। उन्हें उसे भुगतने दो, उनकी यही पात्रता है। और हम उस द्वीप पर एक समाज निर्मित कर सकते हैं। अगर इस विश्व का विनाश हो जाता है, तो जिन लोगों को हमने बचाया है उन्हें बिल्कुल ही नई शुरुआत करने के लिए, पूरे जगत में भेज सकते हैं। शायद अस्तित्व इस मनुष्य से, और वह जो बन गया है उससे थक चुका है।
तो वे दो सौ लोग निकट हैं, लेकिन शायद में थोड़ी रुकावट... मैं उन्हें थोड़ा रुकने के लिए कह सकता हूं। पहले तीसरा विश्व युद्ध होने दो, उसके बाद तुम ज्ञान को उपलब्ध हो सकते हो। और फिर पूरे जगत में लोगों की खोज में घूमते फिरो; क्योंकि तब पासपोर्ट की जरूरत नहीं होगी और पहली बार पूरा विश्व सब के लिए उपलब्ध होगा।
यह ख्याल खतरनाक मालूम होता है लेकिन मैं खतरनाक ख्याल पसंद करता हूं।

भगवान, भारतीय पत्रकार आपकी सिर्फ भारत की आलोचना ही लिपिबद्ध और प्रकाशित क्यों करते हैं? मुझे याद नहीं आता कि सच्चे भारत के विषय में आपके सुंदर प्रवचन मैंने कहीं पढ़े हों।

कारण सरल है। क्योंकि स्वतंत्र भारतीय पत्रकारिता जैसी कोई चीज ही नहीं है। या तो दूरदर्शन, आकाशवाणी जैसे प्रसार माध्यम पर शासन का नियंत्रण होता है... और खास कर भारत जैसे देश में, जहां अधिकांश लोग पढ़ नहीं सकते, लेकिन वे देख सकते हैं, सुन सकते हैं। तो सरकार सचमुच ही बड़ी चालाकी कर रही है। उसने दूरदर्शन और आकाशवाणी को अपने नियंत्रण में रखा है, ताकि वे अस्सी प्रतिशत भारत से संपर्क बना सकें और उनके दिमाग में अपनी धारणाएं भर दें।
अब समाचारपत्र बचे हैं। वे स्वतंत्र दिखाई पड़ते हैं, लेकिन हैं नहीं। सरकार ने अप्रत्यक्ष रूप से उनकी स्वतंत्रता के पंख काट दिए हैं। अगर कोई समाचारपत्र उसको दिए गए आदेशों के खिलाफ कुछ करता है, तो उसका न्यूज प्रिंट का नियतांश (कोटा) कम कर दिया जाता है। न्यूज प्रिंट का कागज बाजार मग उपलब्ध नहीं है, वह शासन के हाथों में ही होता है। अब यह बड़ी सूक्ष्म चाल हैः हम जो चाहते हैं वही लिखो, अन्यथा तुम्हें लिखने के लिए कोई कागज नहीं दिया जाएगा।
भारतीय समाचारपत्र अधिकतर शासन के विज्ञानों पर निर्भर करते हैं। जैसे ही वे इस तरह की बात लिखने लगते हैं, शासन नहीं चाहता, तो उन्हें विज्ञापन मिलने बंद हो जाते हैं। ये समाचारपत्र अपने आप मर जाते हैं, उन्हें किसी को मारने की जरूरत नहीं पड़ती। सब समाचारपत्रों के मालिक कुछ अति धनवान लोग हैं- कोई चार या पांच परिवार।
ये चार या पांच परिवार मूलतः शासन के पक्ष में होते हैं क्योंकि उन्हें लाइसेंस की जरूरत होती है, शासन से हर तरह के सहारे की जरूरत होती है। और उनके बीच यह सौदा होता है कि वे समाचारपत्र सरकारी नीति का समर्थन करें। तो वस्तुतः इस संपूर्ण चित्र को देखते हुए भारत में स्वतंत्र पत्रकारिता है ही नहीं। वे वही लिखते हैं, जो उनके मालिक उनसे लिखवाना चाहते हैं।
अब जहां तक मेरा संबंध है, उन्हें वही बातें लिखनी पड़ती है, जिससे भारतीय लोगों के मन में मेरे प्रति विरोध पैदा हो। मेरे लिए जीवन दोनों है- दिन भी है और रात भी, जीवन भी और मृत्यु भी; और मैं उस पर सभी दृष्टिकोण

से बोला हूं, जितने कि संभव हैं। लेकिन जिस समाचारपत्र का मालिक हिंदू हो, वह ऐसी बातें प्रकाशित नहीं करेगा, जिससे जनता के मन में मेरे प्रति सहानुभूति पैदा हो। मैं इतना बोला हूं, जितना कोई हिंदू नहीं बोला होगा। यदि वे चुनना चाहें, तो वे पूरे भारत को मेरे पक्ष में रूपांतरित कर सकते हैं। लेकिन उन्हें इसी बात का डर है। इसलिए वे वही हिस्से चुनते हैं, जहां मैंने आलोचना की है।
और मैं कोई राजनीतिक नहीं हूं। जीवन भर, राजनीतिक मुझे सलाह देते रहे हैंः आप इस देश में एक महान घटना बन सकते हैं। लाखों लोग आपके साथ खड़े हो सकते हैं; आपको थोड़ी सावधानी बरतनी चाहिए, बस। आप हिंदू धर्म पर इतने सुंदर ढंग से बोलते हैं, फिर कभी-कभी आप उसकी आलोचना क्यों करने लगते हैं? आप जैन धर्म पर इतने सुंदर प्रवचन देते हैं, फिर किसी भी छोटी सी बात पर उसकी आलोचना कर देते हैं?
आप बौद्ध धर्म पर इतना बोले हैं, जितना कोई नहीं बोला है; और फिर भी कोई बौद्ध आपसे सहानुभूति नहीं रखता, क्योंकि आप उसकी आलोचना करते रहते हैं। आप नब्बे प्रतिशत, गौतम बुद्ध की और उनके धर्म की सुंदरता प्रकट करके दिखाते हैं, लेकिन शेष दस प्रतिशत से यदि आप बच सकें तो... ।
मैंने कहा, वह असंभव है, वह लोगों को धोखा देना होगा। मैं जानता हूं कि
वह इस प्रतिशत अंश वहां पर है; मैं यदि उसके संबंध में कुछ नहीं कहता हूं, तो वह लोगों के साथ धोखा होगा। और उसका मेरे हृदय पर भारी बोझरहेगा कि मैंने पूरी तरह से सब कुछ उदघटित नहीं किया; कि मैं लोगों की तरफ देखता रहा, और वे जो सुनना चाहते थे वही उनसे बोलता रहा, बजाय इसके कि मैं जो बोलना चाहता हूं वही बात करूं।
तो मैंने उनसे कहा, मैंने तय किया है कि मैं अकेला ही रहूंगा। मुझे तुम्हारे लाखों लोग नहीं चाहिए मेरे साथ; लेकिन मैं पूरी बात ही कहूंगा। मैं सौंदर्य को प्रकट करूंगा लेकिन साथ वहां जो छिपी हुई कुरूपता है, उसकी अपेक्षा नहीं करूंगा। क्योंकि सौंदर्य कुछ ऐसा है, जिसे सिर्फ थोड़े से, विरले, बुद्धिमान लोग समझ सकते हैं। तो बुद्ध ने भी उस संबंध में कहा है, लेकिन वह लोगों के सिर ऊपर से निकल गया है। लेकिन कुरूपता, जो कि सिर्फ दस प्रतिशत है, उसने लोगों के जीवन को प्रभावित किया है।
उस नब्बे प्रतिशत ने लोगों के जीवन को जरा भी प्रभावित नहीं किया है, लेकिन उस दस प्रतिशत ने प्रभावित किया है। अब तुम मुझसे कह रहे हो कि उस दस प्रतिशत के संबंध में भी मत बोलिए, जिसके कारण इस देश में इतना दुख, इतनी गरीबी, और सब तरह की मूढ़ताएं जारी हैं। मैं तुम्हारी सलाह नहीं मान सकता। उदाहरण के लिए, यह अच्छा है कि बुद्ध अहिंसा पर बोले, लेकिन फिर इस देश
की दो हजार सालों की गुलामी के लिए कौन जिम्मेवार है? उनकी अहिंसा की शिक्षा अधूरी है। लोगों ने उसको स्वीकार किया कि वह बहुत अच्छी है; लेकिन इस शिक्षा ने लोगों को बहादुर नहीं बनाया, कायर बनाया। वे लोगों को न मारने की बात कर रहे थे, लेकिन मूलभूत रूप से उनके मन में यह ख्याल था कि हम न मारे जाएं। तो अगर तुम किसी को नहीं मारते, तो तुम भी बच जाते हो।
यह जरूरी नहीं है। बुद्ध ने उनसे कभी नहीं कहा था, कि तुम्हारे दूसरों
को न मारने का यह मतलब है, कि वे तुम्हें नहीं मारेंगे। और न ही महावीर ने उनसे कहा था। फिर जब लोग तुम्हारे देश पर आक्रमण करना चाहते हैं, तुम्हारी संपदा लूट लेते हैं, पत्नियों को भगाकर ले जाते हैं, बच्चों को मारते हैं, औरतों पर बलात्कार करते हैं, तुम्हारे घर और शहर जला डालते हैं, तब तुम क्या करोगे? तब अहिंसा क्या करेगी?
मेरी दृष्टि में, वस्तुतः अहिंसक व्यक्ति वह है, जो किसी की हत्या नहीं करता, किसी को दुख नहीं देता; क्योंकि वह हत्या करने के और चोट पहुंचाने के खिलाफ होता है, लेकिन यदि कोई उसे चोट पहुंचाने लगता है, उसे मारने लगता है, तब वह भी मारने के खिलाफ होता है। वह उसे होने नहीं देगा। वह किसी प्रकार ही हिंसा का सूत्र-पात्र नहीं करेगा, लेकिन अगर उसे खिलाफ कोई हिंसा की पहल करें, तो वह जी जान से लड़ने को तैयार हो जाएगा। तभी अहिंसक लोग स्वतंत्र रह सकते हैं; नहीं तो वे गुलाम हो जाएंगे, गरीब हो जाएंगे, और निरंतर लूटे जाएंगे।

दो हजार सालों, तक कितने लोगों ने भारत को लूटा! उसके लिए कौन जिम्मेवार है? बुद्ध और महावीर, दोनों इसके लिए जिम्मेवार हैं। अब ऐसा कहने का मतलब है... तत्क्षण जैन समाचार पत्र इस बात को पकड़ लेंगे, बौद्ध समाचारपत्र उसको उठा लेंगे; और जैनों और बौद्धों को मेरे खिलाफ भड़का देंगे। लेकिन मैं अपने को पूरा सत्य कहने से रोक नहीं सकता।
तो इसमें थोड़ा समय लगेगा।
वस्तुतः जिस भांति हमारा आंदोलन फैला है, वह असाधारण है। जीसस के तो केवल बारह ही शिष्य थे... और केवल पंद्रह सालों में हमारा आंदोलन दुनिया पर छा गया है। बस, दस साल और- और फिर कोई समस्या नहीं रहेगी। ये सब मूढ़ जो खिलाफ पैदा कर रहे हैं, ये तुम्हारे पीछे दौड़ेंगे।
और जब मैं कैद में था तब ऐसा हुआ। अमेरिका का पूरा प्रसार माध्यम तत्क्षण सहानुभूतिपूर्ण हो गया; क्योंकि वे देख सके कि तुम एक निर्दोष व्यक्ति को सता रहे हो, जिसने किसी को नुकसान नहीं पहुंचाया, जिसने कोई अपराध नहीं किया। उसका एकमात्र अपराध यह है कि उसने एक सुंदर कम्यून निर्मित किया है- एक प्यारी जगह। जो भी उसे देखने आता था, वही कामना करने लगता था, कभी न कभी मैं यहां रहना चाहूंगा।
यही मेरा एकमात्र अपराध था। पूरी दुनिया में हमारे जो संन्यासी हैं, उनमें बहुत बुद्धिमान लोग हैं। इसलिए ये सब साधारण बुद्धि के लोग, और ये पत्रकार- इनकी हमें कोई परवाह नहीं है। और ये लोग गुलाम हैं। तुम देखोगे जैसे-जैसे पश्चिम प्रेम और प्रसार माध्यम मेरे प्रति सहानुभूतिपूर्ण होता जा रहा है, ये मूढ़ उनके पीछे चल पड़ेंगे। उनकी वही मनोवृत्ति है- गुलामों की।
रवींद्रनाथ टेगोर को जब नोबेल पुरस्कार दिया गया तब ऐसा हुआ था; उसने उसके बाद ही भारत को पता चला कि उनके देश में एक महान कवि है। और उन्हें डाक्टरेट की उपाधि देने के लिए विश्वविद्यालय उन्हें निमंत्रित करने लगे। उनमें सबसे पहला था, कलकत्ता विश्वविद्यालय। और वे जीवन भर कलकत्ता में रहे थे; और उनकी सर्वश्रेष्ठ कृतियां बंगाल भाषा में थी। उन्हें एक छोटी सी किताब पर नोबेल पुरस्कार मिला था, जो उन्होंने स्वयं अनुवादित की थी। उनका अधिकांश साहित्य उससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण है, जिसका अभी तक कोई अनुवाद नहीं हुआ है।
लेकिन कलकत्ता विश्वविद्यालय ने कभी उन्हें डाक्टरेट देने की फिकर नहीं की। और अब, चूंकि उन्हें नोबेल पुरस्कार मिला था, सब भारतीय विश्वविद्यालय... लेकिन रवींद्रनाथ ऐसे आदमी थे, जिनसे मैं प्रेम करता हूं। उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय को इंकार कर दिया। उन्होंने कहा, आप नोबेल पुरस्कार को डाक्टरेट दे रहे हो, मुझे नहीं। मैंने अपनी पूरी जिंदगी यहां बितायी है; आपने कभी मुझे विश्वविद्यालय में आने के लिए भी नहीं कहा- कि आप आएं और लोगों को अपनी कविता सुनाएं। अब मैं आपकी डाक्टरेट क्यों स्वीकार करूं? वह मेरा अपमान है।
लेकिन यह देश ऐसा ही है। दो हजार सालों तक गुलाम रहने के बाद... तुम उन्हें दोषी भी नहीं ठहरा सकते। वे सिर्फ पश्चिम की तरफ देखते रहते हैं- वहां जो भी घटता है, वे तत्क्षण उसका अनुसरण करने लगते हैं।
और पश्चिम्--उनका प्रेस, उनका प्रसार माध्यम बहुत मैत्रीपूर्ण और प्रेमपूर्ण हो रहा है। तो ये लोग, जल्दी ही पीछे आनेवाले हैं। चिंता की कोई बात नहीं।
और वे क्या नुकसान पहुंचा सकते हैं? मेरे अनुभव में, मुझे कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकता- फिर वह मेरे पक्ष में लिखे, या विपक्ष में। बस, उसे लिखते रहना चाहिए। दोनों हालत में मैं उसका उपयोग कर लूंगा। तुम पूरे विश्व को दोस्त नहीं बना सकते; और वह नीरस भी लगेगा। दुश्मन कुछ मिर्च-मसाला डालते हैं!
17 दिसंबर 1985, कुल्लू-मनाली

फिर पत्तों की पाजेब बजी
दसवां प्रवचन

कम्यून अर्थात आध्यात्मिक विश्वविद्यालय

भगवान, ओरेगान के कम्यून के निर्माण-काल में आपने मौन व्रत लिया हुआ था; फिर कम्यून के निर्माण कार्य में आप सहभागी कैसे हुए? और इस किस्म का कम्यून किसकी जरूरत है- आपकी, आपके शिष्यों की, या बृहत समाज की?

पहली बात, मैं उसमें किसी भी तरह भागीदार नहीं था। इसे समझाना जरा कठिन होगा कि बिना भाग लिए भी चीजें संभव हैं।
उदाहरण के लिए, सुबह सूरज उगता है, पक्षी गीत गाने लगते हैं- सूरज उसमें सहभागी नहीं है। वह किसी भांति कोई कृत्य नहीं कर रहा है, पक्षियों को गाने के लिए प्रवृत्ति नहीं कर रहा है। फूल खिलते हैं- सूरज सहभागी नहीं है।
तो मैं कहूंगा कि मैं जरा भी सहभागी नहीं था, वह समक्रमिकता थी। मैं वहां उपस्थित था। और मेरे मौन में तो यह उपस्थिति और भी सघन थी। और मेरी उपस्थिति ने कम्यून निर्मित करने में मेरे लोगों की मदद की।
कम्यून के बारे में मैं वर्षों चर्चा करता रहा हूं। उसको मैंने पूरी दृष्टि दी है, लेकिन जब वह निर्मित हो रहा था तब मैं उसमें कोई सक्रिय भाग नहीं लिया। मैं सिर्फ एक उपस्थिति था।
तो मैं सहभागिता शब्द का उपयोग नहीं कर सकता, लेकिन मैं समक्रमिकता शब्द का उपयोग कर सकता हूं। और शह शब्द कई तरह से अर्थपूर्ण है। वह कई नए द्वार खोलता है, कई नए अर्थ प्रकट करता है। यह हो सकता है कि बिना एक शब्द कहे बिना किसी आंख में झांके; और उसने एक शब्द भी न सुना हो, फिर भी बहुत कुछ संक्रमित हो गया हो। न मैंने कुछ कहा, न उसने कुछ सुना, लेकिन फिर भी कुछ घटा।
प्राचीन भारत में हम इसको सत्संग कहते थे। गुरु केवल उपस्थित होगा, लोग उसके निकट बैठेंगे, और उसके भीतर से झरता हुआ मौन उनके हृदय को रूपांतरित करने लगेगा, उनकी आत्मा की पंखुड़ियों को खोलेगा। हमने इसे जाना है। हमने इसका कई प्रकार से उपयोग किया है।
सत्संग जैसा ही शब्द है, दर्शन। कोई गुरु के दर्शन करने जाता है। अब गुरु को देखने का क्या मतलब है? पश्चिम अब तक इसे समझ नहीं सका कि इसका मूल्य क्या है- गौतम बुद्ध को सिर्फ देखने जाना, जब कि वे कुछ बोलते नहीं, कहते नहीं, करते नहीं; जब तक कि किसी प्रकार का संवाद न हो, उन्हें सिर्फ देखने में क्या सार है? तुम उनका चित्र देख सकते हो, उनकी मूर्ति देख सकते हो। लेकिन अब वे अपनी भूल को महसूस कर रहे हैं।
चित्र मुर्दा है। मूर्ति जीवित है। गौतम बुद्ध एक जीवंत उपस्थिति हैं, जिसमें असीम ऊर्जा है, अथाह प्रेम है, गहन मौन है। और इस संबंध में पूरब बिल्कुल सही था कि शब्दों से संवाद करने की कोई जरूरत नहीं है। इस आदमी को सिर्फ देखना ही रूपांतरित करने वाला अनुभव बन जाता था- जैसे तुम नहा गए। तुम्हें दिखाई नहीं देता कि इस आदमी से क्या तरंगायित हो रहा है। ये आंखें उसे नहीं देख सकतीं, और तुम इस व्यक्ति का संगीत सुन नहीं सकते क्योंकि यह स्थूल कानों से नहीं सुनाई देता, लेकिन वह होता है। और अगर तुम ग्रहणशील हो खुले हो, उपलब्ध हो, विनम्र हो, कोई प्रतिरोध नहीं करते हो चमत्कार घट सकते हैं।
एक आदमी बुद्ध के पास आया, बहुत बड़ा दार्शनिक और उसने बुद्ध के सामने
एक प्रश्न मालिका रखी। सभी प्रश्न अर्थपूर्ण थे, और वह चाहता था कि बुद्ध उनका जवाब दें। वह कई दार्शनिकों के पा गया था और उसने तर्क किया था, लेकिन कोई उसको तृप्त नहीं कर सका।
बुद्ध ने उसके प्रश्नों को सुना, और उनका जवाब देने की बजाय उससे पूछा, तुमने कितने लोगों से ये प्रश्न पूछे? उसने कहा, सैकड़ों। जो भी गुरु हैं, साधु हैं... मैंने पूरे देश में भ्रमण किया है, और कोई मुझे संतुष्ट

नहीं कर सका है। मेरे प्रश्न जैसे थे वैसे के वैसे हैं। जहां से मैंने यात्रा शुरू की थी वहीं पर हूं।
बुद्ध ने कहा, फिर मेरी बात सुनो। मैं उनके जवाब दूं तो भी तुम संतुष्ट नहीं होओगे। इन सैकड़ों लोगों में मेरा भी एक नाम जुड़ जाएगा। लेकिन अगर तुम सचमुच चाहते हो तो तुम्हें एक काम करना होगाः दो साल तक मेरे पास सिर्फ बैठो, और यहां सिर्फ होओ। और दो साल बाद मैं तुम्हें तुम्हारे प्रश्नों को फिर से पूछने की अनुमति दूंगा।
इससे पहले कि वह आदमी कुछ कहता, एक पुराना शिष्य, महाकाश्यप, जोर से हंस पड़ा। नवागत ने पूछा, वह क्यों हंस रहा है? महाकाश्यप बोला, मैं हंस रहा हूं क्योंकि मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ था। मैं प्रश्नों से भरा हुआ आया था और उन्होंने मुझसे भी दो साल तक अपने पास चुपचाप बैठने के लिए कहा था। मैं दो साल तक इनके पास चुपचाप बैठा रहा। मेरे सभी प्रश्न विदा हो गए। मेरे सब विचार विलीन हो गए। मैं पूरी तरह से नया आदमी हो गया। और दो साल बीतने पर उन्होंने मुझे उन प्रश्नों के संबंध में पूछा। और मैंने कहा, क्षमा करें, मेरे भीतर कोई प्रश्न नहीं हैं। आपके मौन ने उन प्रश्नों को निष्प्रश्न कर दिया है। मेरे पास कोई उत्तर भी नहीं हैं, लेकिन असीम तृप्ति भीतर छा गई है। मैं इसलिए हंसा क्योंकि अगर तुम उत्तर चाहते हो तो यही समय है, अभी ही उत्तर के लिए आग्रह करो। और यदि तुम समाधान चाहते हो तो दो साल प्रतीक्षा करो। लेकिन तुम्हें कोई उत्तर नहीं मिलेंगे, प्रश्न खो जाएंगे। और साधारणतः बुद्ध का यही तरीका थाः वे लोगों को चुपचाप बैठे रहने के लिए कहते।
हजारों वर्षों से, पूरब में लोग सदगुरु को या ऋषि को सिर्फ देखने के लिए उनके पास जाते थे। दर्शन का यही अर्थ है।
कोई भी भौतिकवादी पूछेगा, किसी आदमी को देखकर क्या लाभ होगा? लाभ तो अपरिमित होगा। यह दो बातों पर निर्भर होगाः क्या उस आदमी के भीतर से कुछ विकीर्णित होता है? क्या उसका केंद्र बिल्कुल शांत है? क्या उसने पा लिया है? क्या वह घर लौटे आया है? और दूसरी बातः क्या तुम अज्ञात के प्रति, अदृश्य किरणों के प्रति थोड़े से ग्रहणशील हो?
जब कम्यून का निर्माण हो रहा था तब साढ़े तीन साल तक मैं वहां पर मौन था। मैं उस वक्त जान-बूझकर मौन था; क्योंकि लोग जो का कर रहे थे उसमें मैं दखल नहीं देना चाहता था। मैं सक्रिय रूप से सहभागी होना नहीं चाहता था। मैंने उन्हें दृष्टि दी थी, अब उन्हें मैं अपनी ऊर्जा देना चाहता था। उनके पास दृष्टि थी, उन्हें ऊर्जा की जरूरत थी। और वह ऊर्जा देखी नहीं जा सकती है, उसकी नाप-तौल नहीं की जा सकती है।
मैंने सक्रिय रूप से कोई भाग नहीं लिया था, लेकिन मेरे और उनके बीच एक समक्रमिकता थी। वे मेरे मौन में मुझसे जुड़े थे। मेरे मौन में मैं उनका एक अंग हो गया था। वे जो भी कर रहे थे, किसी सूक्ष्म ढंग से वे मेरे हाथ थे, वे मेरी आंखें थीं। और शारीरिक रूप से कहीं भी मौजूद न होकर भी मैं हर कहीं मौजूद था।
दूसरी बात तुमने पूछी है, क्या वह आपकी जरूरत थी?
मेरी कोई जरूरत नहीं है, कोई आवश्यकता नहीं है। जहां तक मेरा सवाल है, मैं परितृप्त हूं। यदि इस क्षण ही मुझे मरना हो तो मैं पूरे संतोष के साथ मरूंगा। क्योंकि अब कुछ भी अधूरा नहीं है। मैं कुछ पूरा करने के लिए एक क्षण की भी मांग नहीं करूंगा।
निश्चित ही, वह मेरे शिष्यों के लिए था- उनके लिए जो मुझे प्रेम करते हैं, जिन्होंने मेरे साथ बड़ी दूर तक यात्रा की है। उन्हें किसी स्थान की जरूरत थी; या कहो, ऊर्जा क्षेत्र की। पांच हजार साधक एक साथ ध्यान कर रहे हैं- उससे बहुत फर्क नहीं पड़ता है।
विज्ञान में इसके समानांतर सिद्धांत है। वे कहते हैं, एक खास बिंदु पर परिमाणात्मक परिवर्तन, गुणात्मक परिवर्तन में बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए, निन्यानबे डिग्री तक पानी, पानी रहता है एक डिग्री और- सौ डिग्री, और पानी रूपांतरित होता है, वह भाप बन जाता है। एक डिग्री का जुड़ना संख्यात्मक था लेकिन वह रूपांतरण गुणात्मक था।

एक आदमी ध्यान कर सकता है लेकिन पांच लोग एक साथ ध्यान कर रहे हों, तो गुणात्मक रूपांतरण होता है। और अगर पांच हजार लोग एक साथ ध्यान कर रहे हों तो वहां ऊर्जा की सुवास फैल जाती है। वह एक विशाल प्रवाह की भांति होता है, जिसमें वे लोग जो अकेले पार नहीं हो सकते पांच हजार लोगों के साथ आसानी से पार हो जाएंगे।
वह मेरे संन्यासियों के लिए था, और बृहत्तर समाज में रहने वाले उन लोगों के लिए भी था जो उत्सुक थे। दुनिया में ऐसे लाखों लोग हैं, जो विषाद में हैं, जो पीड़ा में जी रहे हैं; उनके पास जरूरत की हर चीज हैं। लेकिन फिर भी कुछ अधूरापन लगता है। उनकी पीड़ा भूख के कारण नहीं है, गरीबी के कारण नहीं है, उनकी पीड़ा आध्यात्मिक है।
तो मैं चाहता था कि यह कम्यून एक आदर्श निर्मित करे। और हम इसी आदर्श
का अनुसरण कर और देशों में कम्यून बनाएं, जो इसी ढंग से काम करेंगे। तो जिसे भी आध्यात्मिक प्यास होगी, वह कम्यून में आ सकता है।
यह ठीक ऐसे ही है जैसे विश्वविद्यालय होते हैं। तुम पूछ सकते हो, वे किसके लिए हैं? सबके लिए लेकिन अगर तुम उनमें उत्सुक नहीं हो तो वे तुम्हारे लिए नहीं हैं। लेकिन अगर तुम उत्सुक हो, तुममें ज्ञान की प्यास है, तो विश्वविद्यालय उपलब्ध है।
ये कम्यून आध्यात्मिक विश्वविद्यालय होंगे। तो जिसे भी अपने जीवन में खालीपन लगता है, और यह महसूस हो रहा है कि सिर्फ भौतिक चीजें उसे भर नहीं सकती; कुछ और कुछ उच्चतर लोकों से अवतरित हो, कुछ श्रेष्ठतर होना जरूरी है। ये कम्यून उसके लिए विश्वविद्यालय बन जाएंगे, जहां वह ध्यान सीख सकता है; और यह सीख सकता है कि मन को संस्कार मुक्त कैसे किया जाए, अपने प्रेम को विशुद्ध कैसे किया जाए। और वह अपने अंतर तक केंद्र को पा सकता है।
तो यह मेरी जरूरत नहीं थी लेकिन मेरे संन्यासियों की जरूरत निश्चित रूप से थी। और निश्चय ही, उन सब के लिए इसके द्वार खुले हैं जो खोजी हैं, तलाश में हैं।

भगवान, राजीव गांधी ने शिक्षा प्रणाली मेरे सुधार करने के लिए पूरे देश से सुझाव मांगे हैं और इस समस्या पर चिंतन करने के लिए कहा है। इस विषय में क्या आप कुछ सुझाव दे सकते हैं? या इस विषय पर बोलने से पहले शासन को औपचारिक निमंत्रण दे सकते हैं?

किसी औपचारिक निमंत्रण की कोई जरूरत नहीं है। वस्तुतः मैं इस पर पहले
से बोल ही रहा हूं। लेकिन शासन बहरा है। शिक्षा प्रणाली में क्या सुधार हो सकते हैं, इस पर देश की जनता से सुझाव मांगन राजीव गांधी की मूढ़ता है।
जिस देश में अस्सी प्रतिशत लोग गैर-पढ़े-लिखे हों, और जो पढ़े-लिखे हैं
वे भी इस ढंग से शिक्षित हुए हों कि वे सिर्फ क्लर्क बन सकते हैं... ये लोग कोई सुझाव नहीं दे सकते। यदि राजीव गांधी सचमुच पूरी प्रणाली में परिवर्तन चाहते हैं, तो उन्हें उन लोगों को निमंत्रित करना चाहिए जो शिक्षा से संबंधित रहे हैं। सभी उपकुलपतियों, डीनों विख्यात प्राध्यापकों का सम्मेलन आयोजित करना चाहिए, और वे इस संबंध में चर्चा करें।
पहली बात, यह शिक्षा प्रणाली अंग्रेज हुकूमत ने निर्मित की थी क्लर्क पैदा करने के लिए। उनका अद्देश्य यह नहीं था कि बुद्धिमान लोग पैदा करें। कोई शासन नहीं चाहता कि लोग बुद्धिमान हों। हर शासन चाहता है कि लोग मंद बुद्धि बने रहें; तब उनका शोषण करना, उन पर शासन करना आसान है, फिर किसी भी तरह की क्रांति से बचना आसान है, और फिर अति साधारण लोगों के लिए भी नेता बना आसान है।
अंग्रेज सरकार ने बड़ी सुंदरता से यह सब आयोजित कर लिया था। पच्चीस साल
तक आदमी एक प्रक्रिया से गुजरता है, उसके जीवन का लगभग एक तिहाई हिस्सा इस तरह व्यतीत होता है कि उसके बाद या तो वह स्टेशन मास्टर बनता है, या हेड क्लर्क या पोस्ट मास्टर। ये ही सरकार की जरूरतें थीं।

यह समझने जैसी बात है कि सब स्वर्ण पदक विजेता, विश्वविद्यालय में प्रथम आने वाले, अपने विषयों में प्रथम श्रेणी में प्रथम क्रमांक पाने वाले दुनिया में अदृश्य हो जाते हैं। फिर उनका कोई पता ही नहीं चलता। उन्हें तो अपनी छाप छोड़नी चाहिए। विश्वविद्यालय में उन्हें स्वर्ण पदक मिलता है, सर्वोच्च पुरस्कार मिलता है, और जीवन में वे बस हेड क्लर्क बन कर रह जाते हैं।
यह पूरी प्रणाली ही गलत है। इसलिए इसमें सुधार करने का कोई सवाल ही नहीं है; सवाल यह है कि उसमें क्रांतिकारी परिवर्तन कैसे लाया जाए। वास्तविक शिक्षा प्रणाली संपूर्ण मानव की फिकर करेगी। यह शिक्षा प्रणाली केवल मस्तिष्क को विकसित करती है; जब कि सम्पूर्ण मानव यानी शरीर, मन, हृदय, आत्मा। जब तक कोई शिक्षा संतुलित ढंग से इन चारों की फिकर नहीं लेती तब तक वह प्रामाणिक मानव को, संपूर्ण मानव को जन्म नहीं दे सकती।
उदाहरण के लिए, एक भी शाकाहारी व्यक्ति को आज तक नोबेल पुरस्कार नहीं मिला है। यह शाकाहार का सीधा-साफ धिक्कार है। सब नोबेल पुरस्कार मांसाहारी व्यक्तियों को क्यों मिलते हैं? क्योंकि शाकाहारी भोजन में वे प्रोटीन नहीं होते जो बुद्धि को विकसित करते हैं। और जब तक हम प्रोटीन की मात्रा नहीं बढ़ाते तब तक बुद्धि का विकास नहीं होगा। वह बड़ी ही नाजुक घटना है, और उसके लिए बहुत संतुलित भोजन की आवश्यकता है। शरीर की देखभाल करनी जरूरी है।
कोई विश्वविद्यालय विद्यार्थियों के शरीर की फिकर नहीं कर रहा है। यदि वे सोचते हैं कि सिर्फ फूटबाल, वालीबाल, हाकी खेलने से ही तुम शरीर की फिकर कर रहे हो, तो तुम सिर्फ अपनी मूढ़ता सिद्ध कर रहे हो। शरीर बड़ी जटिल घटना है। हरेक विद्यार्थी की ओर ध्यान देना जरूरी है क्योंकि हर व्यक्ति का शरीर अलग है। उसकी जरूरतें अलग हो सकती हैं।
उदाहरण के लिए, कोई मांसाहारी हो सकता है, कोई शाकाहारी हो सकता है। मेरे कम्यून में मैंने शाकाहारी भोजन के साथ अन-उर्वरित अंडों का उपयोग करना शुरू किया थे। मैं खुद शाकाहारी हूं और मैं चाहूंगा कि पूरी दुनिया शाकाहारी हो जाए, लेकिन इसके लिए तुम्हारी बुद्धि का विकास रुक जाने का खतरा मोल लेने को मैं तैयार नहीं हूं। अन-उर्वरित अंडा वह जरूरत निःसंदेह रूप से पूरी करता है- वस्तुतः मांसाहारी भोजन से भी अधिक।
हम ऐसा नियम बना लें कि विश्वविद्यालयों में मांसाहारी भोजन की अनुमति न दें क्योंकि सिर्फ भोजन के लिए किसी की हत्या करना, हिंसा करना इतना कुरूप है, इतना अमानवीय है कि इन लोगों से तुम ऐसे अपेक्षा न कर सकोगे कि जिंदगी में वे प्रेमपूर्ण होंगे, संवेदनशील होंगे, मानवीय होंगे। तो अगर चारों तरफ अपराध हत्याएं, आत्महत्याएं होती हैं, अगर निरंतर कलह होती रहती है- पति पत्नी से लड़ रहा है, पत्नी पति से लड़ रही है। पूरा समाज जैसे एक युद्धभूमि बन गया है, जहां हर व्यक्ति एक दूसरे से लगातार लड़ रहा है। लगता है शरीर के मूल तत्वों में कुछ बुनियादी भूल हो गई है। इसका एक आधारभूत कारण हैः मांसाहारी भोजन। वह तुम्हें संवेदन विहीन बनाता है, कठोर बनाता है, पाषण हृदय बनाता है; और वह तुम्हारे भीतर क्रोध, हिंसा जैसे भावों को जन्म देता है, जिससे बड़ी सरलता से बचा जा सकता है।
शरीर की देखभाल करने का मतलब है, शरीर को पर्याप्त व्यायाम मिलना चाहिए। विद्यार्थी दिन भर विश्वविद्यालय में बैठे हैं, और रात को उन्हें अपना गृह पाठ करना पड़ता है, और उन्हें सिनेमा देखने भी जाना है। तो वे मूढ़ की तरह बैठे रहते हैं। प्रकृति ने शरीर सिर्फ बैठे रहने के लिए नहीं बनाया है। शरीर की यह जरूरत है कि विद्यार्थी टहलने जाएं दौड़ लगाएं, तैरें, वृक्षों पर चढ़, पहाड़ों पर चढ़े। शरीर की जो प्राकृतिक क्षमता है उसे उपलब्ध करने को अवसर उसे मिलना चाहिए।
मेरा अनुभव यह है कि शरीर जितना स्वस्थ हो, जितना प्राकृतिक हो, उतना
ही आदमी हर तरह से बेहतर होता है। लेकिन हमने इसकी अपेक्षा की है। किसी की उसमें उत्सुकता नहीं है। हम शरीर में जीते हैं। वह एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात है। इस संबंध में कोई नहीं सोचता। कि हम क्या खा रहे हैं।
अब सबको भोजन मग दही और खाखरा देना और उसे दीर्घयु बनाना इतना आसान है। और निश्चित ही, जब तुम पचीस वर्ष शिक्षा में व्यर्थ गंवा रहे हो, तब

तुम्हें उस व्यक्ति की जिंदगी में पचीस साल और जोड़ देने चाहिए। उसे कम से कम सौ साल जीना चाहिए।
वैज्ञानिक कहते हैं, जहां तक शरीर का संबंध है, वह स्वयं का नवीनीकरण करके तीन सौ साल तक जिलाए रख सकता है। तो अगर लोग सत्तर साल की उम्र में मरते हैं, तो कहीं हमारी ही भूल हो रही है, शरीर की कोई गलती नहीं है। हम उसे गलत भोजन दे रहे हैं, या तो बिल्कुल व्यायाम नहीं कर रहे हैं या फिर गलत व्यायाम कर रहे हैं।
तो मेरी पहली चिंता है, शरीर। शरीर के विशेषज्ञों की सलाह लें, भोजन
के विशेषज्ञों की सलाह लें। स्वाद निर्णायक तत्व नहीं है। स्वाद तो किसी भी चीज में डाला जा सकता है। कोई भी सुगंध मिलाई जा सकती है। लेकिन मूलभूत बात होनी चाहिएः शरीर विज्ञान।
दूसरी बात्--और लोगों से मत पूछो कि तुम क्या कर सकोगे? इसीलिए मैं राजनीतिकों को चालाक कहता हूं। वे कुछ करना नहीं चाहते। जब तुम कुछ करना नहीं चाहते- तब लोगों से पूछो, तुम शिक्षा प्रणाली में क्या सुधार करना चाहते हो? अब शिक्षा, या शिक्षा प्रणाली, या शरीर, या मन, या हृदय, इनके संबंध में वे क्या जानते हैं? तो अपने सुझाव लेकर कोई भी सामने नहीं आएगा, और राजनीतिक खुश होगा कि वह तो परिवर्तन लाने को तैयार था लेकिन कोई परिवर्तन चाहता ही नहीं, कि लो संतुष्ट हैं। लेकिन हमें पता है कि यह बात सच है। लोग संतुष्ट नहीं हैं लेकिन वे कोई विशेषज्ञ भी नहीं हैं।
तो मैं चाहूंगी कि राजीव गांधी विशेषज्ञों से पूछे। एक सम्मेलन आयोजित करो। पहले उन लोगों को बुलाओ, जो शरीर के विशेषज्ञ हैं। जो लोग बरसों से योग साधना कर रहे हैं, उनके अनुभव से सीखो। प्रत्येक विश्वविद्यालय में एक ऐसी योग-कक्षा होनी चाहिए, जो ऐच्छिक न हो। उन लोगों से पूछो, जो जापान में रहते हैं, अकिदो जानते हैं, जो कि शरीर का बिल्कुल ही अन्य तरह का अनुशासन है, या युयुत्सु... उनसे पूछो क्योंकि उन लोगों ने शरीर को वज्र समान बनाने का उपाय खोज लिया है।
पूरे विश्व से लोगों को बुलाओ; क्योंकि हर देश में ऐसी पद्धति है, जो सदियों से चली आ रही है और उसने बहुत प्रज्ञा इकट्ठी कर ली है। अब एक ही देश तक सीमित रहने की कोई जरूरत नहीं है। प्रत्येक क्षेत्र से एकत्रित की गई प्रज्ञा शैक्षणिक क्रांति की बुनियाद होनी चाहिए।
उन लोगों से पूछो, जो भोजन पर काम कर रहे हैं; जिन्होंने खोज लिया है
कि किस प्रकार का भोजन, कैसे शरीर को अधिक स्वस्थ बनाता है। पूछो कि चालीस प्रतिशत नोबेल पुरस्कार यहूदियों को क्यों मिलते हैं? संसार में तो उनका इतना बहुमत नहीं है। यह बिल्कुल ही अनुपात से बाहर है। दुनिया में चालीस प्रतिशत यहूदी नहीं हैं लेकिन आधे नोबेल पुरस्कार उनको मिल जाते हैं। आश्चर्य है!
यहूदी कहते हैं... और अब यह बात अधिकाधिक स्वीकृत हो रही है, ईसाई भी इसे स्वीकार करने लगे हैं कि इसमें कुछ रहस्य है जिसका अभी अन्वेष्ण होना बाकी है। यहूदियों की यह धारणा है कि उनकी बुद्धि... और इसमें कोई शक नहीं है कि वे बुद्धिमान हैं; हर क्षेत्र में वे लगभग शिखर पर होते हैं। तुम किसी यहूदी को नीचे रख दो, जल्दी ही तुम पाओगे कि वह ऊपर पहुंच गया।
यह पूरी सदी यहूदियों से प्रभावित है। कार्ल मार्क्स यहूदी है, सिगमंड फ्रायड यहूदी है, अलबर्ट आइंस्टीन यहूदी है। बाकी लोग क्या कर रहे हैं? केवल यहूदी योगदान दे रहे हैं। यहूदी परंपरा में कोई अर्थपूर्ण बात रही हो... मुझे इसका अहसास था। लेकिन यह थोड़ी हैरान कर देने वाली बात लगती है कि वे कहते हैं, खतना करने से बुद्धि विकसित होती है। लेकिन यह कैसे होता है और क्यों होता है, इसका कोई सूत्र उनके पास नहीं है।
पैदा होते ही यहूदी बच्चे का खतना कर दिया जाता है। अब चिकित्सा विज्ञान ने इसे स्वास्थ्य की दृष्टि से स्वीकृत किया है। इसमें स्वास्थ्य है और जिसका खतना किया गया हो उसे जननेंद्रिय की बीमारियां होने की संभावना कम होती है। लेकिन यहूदी कहते हैं कि जब बच्चा पैदा होता है तब उस बच्चे का खतना करना, उसकी पतली चमड़ी काट देना उसके बुद्धि के केंद्र पर चोप करता है। अब यह यहूदियों की यह एक प्राचीन परंपरा है। यह संभावना हो सकती है, उसका अन्वेष्ण करना चाहिए। ऐसा होना चाहिए क्योंकि उनकी बुद्धि

यह सिद्ध करती है कि यहूदी में कुछ बात भिन्न है, जो अन्य लोगों में नहीं है। और इसकी संभावना है मैं इस संबंध में सोचता हूं। यह संभव है क्योंकि सेक्स के केंद्र जननेंद्रिय में नहीं होते, वे सिर में होते हैं। और सिर में जो सेक्स के केंद्र होते हैं... सिर में सात सौ केंद्र होते हैं। सेक्स का केंद्र बुद्धि के केंद्र के ठीक करीब होता है; इतने करीब- लगभग छूता हुआ। तो यह संभव है कि छोटे बच्चे को धक्का लग जाए। स्वभावतः जब उसकी चमड़ी काटी जाती है तो उसे धक्का लगता है। और शायद उस धक्के से बुद्धि के केंद्र को ताकत मिलती है।
लेकिन इसका अन्वेष्ण करना चाहिए। यदि यह तथ्य है तो तुम यहूदी हो या नहीं, इसका कोई सवाल नहीं है। हर व्यक्ति का खतना होना चाहिए। जिसका खतना न हुआ हो उसे किसी विश्वविद्यालय में प्रवेश नहीं मिलना चाहिए।
जिस तरह हम शरीर और मनुष्य के पूरे व्यक्तित्व पर होने वाले उसके जबरदस्त प्रभाव के संबंध में सोचा-विचार करते हैं, उसी तरह हमें मन के संबंध में सोचना चाहिए। पचीस साल शिक्षा में व्यर्थ गंवाने के बाद तुम बौने क्यों पैदा करते हो? कुछ गड़बड़ है।
और मेरी समझ यह है- क्योंकि मैं विश्वविद्यालय में शिक्षक रहा हूं- मेरी समझ यह है कि पूरी शिक्षा विश्वास पर आधारित है, और विश्वास जहर है। वह तुम्हारी बुद्धि को विकसित नहीं होने देता। विश्वास को हटाकर उसकी जगत संदेह को रखना चाहिए। क्योंकि संदेह, संदेहवाद तुम्हारी बुद्धि पर धार रखता है मुझे अनेक विद्यालयों से निष्कासित किया गया क्योंकि मैं किसी बात को तब तक मानने को तैयार नहीं था जब तक बौद्धिक रूप से मैं उससे राजी न हो जाऊं। सिर्फ तुम कहते हो इसलिए... माना कि तुम एक महान प्राध्यापक हो, तुम एक समादृत प्राध्यापक हो, वह सब स्वीकार है, लेकिन तुम जो भी कहते हो उसके लिए तुम्हें श्रेष्ठतम तर्क के आधार देने होंगे। तुम्हें इसकी मांग नहीं करनी चाहिए कि उसे यूं ही मान लिया जाए।
एक महाविद्यालय से मुझे इसलिए निष्कासित किया गया क्योंकि एक प्राध्यापक ने धमकी दी कि यदि इस विद्यार्थी को निष्कासित नहीं किया जाता है, तो मैं त्यागपत्र दे दूंगा। क्योंकि आठ महीने से उसने मुझे कुछ पढ़ाने नहीं दिया है। और इस तरह मैं पाठ्यक्रम कैसे पूरा करूंगा?
प्राचार्य ने मुझे बुलाया और कहा, तुम इतना उपद्रव क्यों पैदा कर रहे हो? मैंने कहा, मैंने कोई उपद्रव पैदा नहीं किया है। मैं उनसे सिर्फ इतना पूछ रहा हूं कि आप जो कह रहे हैं, उसके लिए तर्क दें, अन्यथा वैसा वक्तव्य न दें। और वे कहते हैं कि उनकी चिंता सिर्फ इतनी है कि पाठयक्रम कैसे पूरा हो। और मेरी चिंता यह है कि मेरी बुद्धि कैसे तीक्ष्ण हो। मुझे उनके कोर्स से कुछ लेना-देना नहीं है। मैं उनके कोर्स का क्या करूंगा? और वे जो कहते हैं उसके लिए कोई तर्क नहीं दे पा रहे हैं। और छोटी-छोटी बातें...
उदाहरण के लिए, उन्होंने कहा कि पश्चिम में अरस्तू को तर्क शास्त्र का जनक कहा जाता है। इस तथ्य को सबने मान लिया है। करीब-करीब सभी विश्वविद्यालयों में, पूरे विश्व में यह बात दोहरायी जाती है कि अरस्तू पश्चिमी तर्क शास्त्र का जनम है। मैंने उनसे पूछा, क्या आपको पता है कि अरस्तू ने लिखा है, कि स्त्रियों के पुरुषों की अपेक्षा कम दांत होते हैं? और क्या आप जानते हैं कि अरस्तू की दो पत्नियां थीं? वह दोनों में से किसी भी एक पत्नी का मुंह खोलकर उसके दांत गिन सकता था। क्योंकि पुरुष के और स्त्री के दांतों की संख्या एक जैसी होती है। और जिस आदमी की दो पत्नियां हों, वह अगर लिखता है कि स्त्री के दांत पुरुष से कम होते हैं, तो मैं उसे तर्क शास्त्री की तरह स्वीकार नहीं कर सकता। और उसे मैं पाश्चात्य तर्क का जनक तो बिल्कुल ही नहीं मान सकता।
वह सिर्फ अंधविश्वासी है। क्योंकि स्त्री को हर बात में छोटा होना चाहिए। तो ग्रीस में यह एक स्वीकृत तथ्य था कि स्त्री के दांत कम होते हैं। न तो किसी स्त्री ने कभी गिनती की, न किसी पुरुष ने गिनती की।
मैंने उनसे पूछा, आपने अरस्तू की जीवनी पढ़ी है, क्या इससे आप हैरान नहीं हुए? वे बोले, नहीं तो! मैंने सिर्फ पढ़ लिया कि उसकी दो पत्नियां थीं, और फिर उसका वक्तव्य... । मैंने कहा, आपने अपनी पत्नी के दांत बिनने का कष्ट

नहीं किया? पत्नी कोई इतनी मुश्किल चीज नहीं है कि न मिले। यह आदमी तार्किक नहीं है।
मैंने प्राचार्य से पूछा, अब आप ही बताएं कौन उपद्रव पैदा कर रहा है? उन्हें स्वीकार करना चाहिए कि यहां आदमी तार्किक नहीं था, अंधविश्वासी था, बात खत्म हुई; फिर वे आगे बढ़ सकते हैं। यदि वे स्वीकार नहीं करते हैं तो मैं हर रोज वहां खड़ा होने वाला हूं- अरस्तू के संबंध में क्या?
और अब नए विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि अरस्तू का पूरा तर्क शास्त्र गलत था। उन्हें तर्क की एक नवीन प्रणाली विकसित करनी पड़ी। ठीक उसी तरह, जिस तरह उन्हें यामिति की नयी प्रणाली विकसित करनी पड़ी। सदियों- सदियों से वे सिखाते चले आ रहे हैं, और किसी को फिकर ही नहीं है। और इसका कारण सिर्फ इतना है कि हमारा पूरा ख्याल है, विश्वास करो। प्राध्यापक जानते हैं और हम नहीं जाते हैं, बस। व्यर्थ समय क्यों गंवाएं? वे जानते हैं इसे हम मान लेते हैं।
विश्वविद्यालयों को अधिक बुद्धिमान होना चाहिए। प्राध्यापक का जोर चर्चा करने पर, संदेह करने पर अधिक होना चाहिए। और किताबों में जो भी विश्वास पद्धति है, उसे उन्हें पूरी तरह से नष्ट कर देना चाहिए। उन पुस्तकों को हटा ही देना चाहिए; फिर तुम ज्ञान का एक विस्फोट देखोगे। लेकिन हम सोचते है कि संदेह करना पाप है। और विश्वास करना आध्यात्मिक है, धार्मिक है। बात इससे ठीक उलटी है। विश्वास करना पाप है, संदेह करना स्वाभाविक है। और तब तक संदेह करते जाना जब तक कि तुम किसी निस्संदिग्ध सत्य तक न पहुंच जाओ।
तो सभी विश्वविद्यालयों को, संदेह और विश्वास के प्रति उनका जो दृष्टि कोण है, उसे छोड़ना होगा। और यह सवाल महत्वपूर्ण नहीं है कि तुम परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाओ। क्योंकि उन पांच प्रश्नों का उत्तर ऐसा व्यक्ति भी दे सकता है, जो उन प्रश्नों के अलावा और कुछ भी न जानता हो। मैं परीक्षाओं के खिलाफ हूं इसका सीधा सा कारण यह है कि वे विद्यार्थी में बिल्कुल ही गलत दृष्टि कोई पैदा करते हैं। विद्यार्थी की उत्सुकता परीक्षा में उत्तीर्ण होने में अधिक होती है। इसलिए किताब पढ़ने की बजाय वह संक्षिप्त संस्करण की या कुंजी की खोज में होते हैं किसी प्राध्यापक ने परीक्षा में संभावित प्रश्नों के उत्तर तैयार कर दिए हैं। उसमें उस विषय के वे सभी प्रश्न होते हैं, जो पूछे जा सकते हैं। और उसने उत्तर लिख दिए हैं। और विद्यार्थी केवल उन कुंजियों को पढ़ते हैं और उत्तर लिखकर उत्तीर्ण हो जाते हैं। उनकी बुद्धि कुंठित ही रह जाती है। यह परीक्षा है जो उनमें गलत दृष्टिकोण पैदा करती है। मेरे विचार में, एक विद्यार्थी को हर प्राध्यापक द्वारा अंक मिलने चाहिए। पूरे साल, प्रतिदिन जिस तरह वे उपस्थिति देते हैं, उसी तरह उन्हें अंक देने चाहिए। और वे अंक विद्यार्थी को उसी अनुपात में मिलेंगे, जिस अनुपात में वह अपनी बुद्धिमत्ता प्रकट करेगा। हमारी पुरी प्रणाली स्मृति पर निर्भर करती है बुद्धि पर नहीं- तुम कितना रट सकते हो।
लेकिन स्मृति में कोई गरिमा नहीं है, कम्प्यूटर भी उसे कर सकता है। और शीघ्र ही, अब स्मृति की कोई जरूरत नहीं होगी। तुम अपनी जेब में एक छोटा सा कम्प्यूटर रख सकते हो और तुम्हें जो भी उत्तर चाहिए वह तत्क्षण उपलब्ध हो सकता है। नाहक क्यों समय और जीवन गंवाना और स्मृति के लिए लोगों को सताना? और स्मृति का बुद्धि से कोई संबंध नहीं है। अभी तो हमारी पूरी शिक्षा प्रणाली स्मृति पर आधारित है। मैं चाहूंगा कि वह बुद्धि पर आधारित हो। और हर प्राध्यापक प्रतिदिन कुछ अंक दे। ऐसा नहीं कि साल के अंत में... क्योंकि उससे कई उपद्रव पैदा होते हैं।
साल भर विद्यार्थी कोई फिकर नहीं करते, सिर्फ आखिर में एक महीना... ।
और फिर वे अपने को सता रहे हैं, किताबें खोज रहे हैं और हर तरह की कोशिश कर रहे हैं। प्रतिदिन उन्हें अंक मिलेंगे और एक साल में या नौ महीनों में या दस महीनों में या छह महीनों में वे पूरे अंक इकट्ठे करेंगे। अगर कोई इतना बुद्धिमान है कि छह महीने में ही इतना मूल्यांकन प्राप्त कर ले कि वह अगली कक्षा में जा सके, तो फिर उसी कक्षा मग उसके और छह महीने बरबाद क्यों करना?

जैसे ही वह इस मूल्यांकन की सीमा पर कर लेता है, वह अगली कक्षा में प्रवेश कर जाता है।
तो न कोई उत्तीर्ण होता है, न कोई अनुत्तीर्ण होता है; लोग सिर्फ गति करते हैं। किसी को बारह महीनों से ज्यादा लगेंगे, चौदह महीने लगेंगे, और फिर वह असली कक्षा में प्रवेश करेगा। विश्वविद्यालय एक गतिमान घटना होगी। लोग उनकी बुद्धि के अनुसार गति कर रहे हैं।
और कोई नियत अवरोध नहीं हैं क्योंकि नियत अवरोध होने से एक बड़ी विचित्र घटना घटती है, और वह यह कि सबसे बुद्धिमान विद्यार्थी को सबसे मूढ़ विद्यार्थी की रफ्तार से चलना पड़ता है। मूढ़ विद्यार्थी भी बारह महीने पढ़ता है और बुद्धिमान विद्यार्थी भी बारह महीने पढ़ता है। कक्षा का निम्नतम वर्ग सभी का स्तर निर्धारित करता है। यह उचित नहीं है। यह तो बुद्धि के साथ की गई हिंसा है। मूढ़ व्यक्ति एक कक्षा में दो साल, तीन साल रहना चाहे; यह उस पर निर्भर करता है। लेकिन जो व्यक्ति्--क्योंकि यह मेरा अनुभव है कि विश्वविद्यालय जो भी कोर्स एक साल में पढ़ा रहे हैं, वे दो महीनों के योग्य भी नहीं हैं। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति उन्हें दो महीनों में पढ़कर उत्तीर्ण हो सकता है। और बाकी दस महीने तो महज अपव्यय हैं। और उन दस महीनों में वे सब तरह के उपद्रव करते हैं। वे हड़ताल करेंगे और बलात्कार करेंगे और महाविद्यालयों में आग लगाएंगे और शिक्षकों की पिटाई करेंगे। क्योंकि उनके पास ऊर्जा है, और ऊर्जा के लिए कोई न कोई अभिव्यक्ति चाहिए। और तुम इन लोगों को सिर्फ छोटी-छोटी कोठरियों में बांधकर रखते हो, छोटी- छोटी कक्षाओं में और उनके पास करने के लिए कुछ काम नहीं होता। क्योंकि वे जानते हैं कि अंत में सिर्फ एक महीना या दो महीने... और वे उत्तीर्ण हो जाएंगे।
स्मृति नहीं, बुद्धि। क्योंकि यह बड़ी महत्वपूर्ण बात है कि जिन लोगों
की स्मृति अच्छी होती है, वे बहुत बुद्धिमान लोग नहीं होते। क्योंकि स्मृति यांत्रिक ढंग से काम करती है और बुद्धि गैर-यांत्रिक ढंग से काम करती है। अति बुद्धिमान लोगों की स्मृति अच्छी नहीं होती।
यह एक जाना-माना तथ्य है कि बहुत बुद्धिमान लोग... उदाहरण के लिए, अलबर्ट आइंस्टीन अपने बाथ टब से बाहर निकलना भूल जाएगा। वह छह घंटे बाथ टब में ही बैठा रहेगा, जब तक कि उसकी पत्नी आकर शोरगुल नहीं मचाएगी- दरवाजा खटखटाएगी कि बहुत हो गया। दह घंटे तुम कर क्या रहे हो? छह घंटे बीत गए वह बोलना, मैं तो सोचता था कि यह मेरा रोज की तरह साधारण स्नान है।
वह संसार का सर्वश्रेष्ठ गणितज्ञ था। लेकिन एक दिन वह बस में चढ़ा और उसने कंडक्टर को कुछ पैसे दिए। कंडक्टर ने उसे बाकी पैसे लौटाए। उसने वे पैसे गिने और कंडक्टर से कहा, यह ठीक नहीं है। तुम मुझे धोखा दे रहे हो। कंडक्टर ने दुबारा गिना और वह बोला, यह बिल्कुल ठीक है। मैं तुम्हें धोखा नहीं दे रहा हूं। मालूम है तुम्हें गिनना नहीं आता है। अब यह बात अलबर्ट आइंस्टीन से कही जा रही है! मालूम होता है तुम्हें पैसे गिनना नहीं आता हैं।
उसने अपने संस्मरण में लिखा है कि वह कंडक्टर सही था। मैं घर गया, मैंने अपनी पत्नी से कहा तो वह बोली, उसने ठीक ही कहा। तुम्हारी गलती थी। लेकिन तुमसे गलती हुई कैसे? उसने कहा, क्योंकि मेरे दिमाग में दूर के सितारों के संबंध में चिंतन चल रहा था। गिनते समय मैं वहां नहीं था। संभवतः स्मृति एक अलग घटना है और बुद्धि एक अलग घटना है। और ऐसा सदा हुआ है कि जिन लोगों की बहुत अच्छी स्मृति रही है, उनकी बुद्धि कभी भी प्रखर नहीं थी। और अत्यंत बुद्धिमान लोगों की स्मृति बड़ी कमजोर रही है। दूसरा आदमी, एडीसन... उसे कम से कम एक हजार आविष्कारों का श्रेय मिला है। पहले विश्व युद्ध में, वह एक राशन की दुकान में गया और वह वहां सामने खड़ा है। और टेबल पर बैठा हुआ आदमी चिल्ला रहा है, थामस अल्वा एडीसन कौन है? और वह इधर-उधर देख रहा है। कतार में खड़ा हुआ आदमी उसे पहचानता है क्योंकि उसने उसके चित्र देखे हुए हैं। उसने पूछा तुम किसे खोज रहे हो? एडीसन बोला, मैं थामस एडीसन को खोज रहा हूं। वह आदमी बेचारा चिल्लाए जा रहा है और कोई जवाब ही नहीं दे रहा है। वह आदमी बोला, जहां तक मैं जानता हूं, आप ही थामस अल्वा एडीसन हैं।

एडीसन बोला, शायद कोई मेरा नाम नहीं लेता। मेरे विद्यार्थी प्रोफेसर कहते हैं, मेरे सहयोगी मुझे प्रोफेसर कहते हैं। मुझे कोई एडीसन कहता ही नहीं है। तो स्वभावतः जब मेरे माता-पिता जीवित थे, या जब मैं विद्यार्थी था, तो मुझे मेरे नाम से पुकारा जाता था। शायद तुम ठीक कह रहे हो। अगर इस कतार में कोई भी थामस एडीसन नहीं है, तो फिर मैं ही होऊंगा। क्योंकि मैं यहां हूं और मुझे कोई और नाम पता नहीं है। तुमने इसे सूचित किया है तो मैं इसे मान लेता हूं।
यह आदमी, जिसने एक हजार आविष्कार किए थे, इसकी स्मृति ऐसी थी कि वह अपना खुद का नाम भूल जाता है, जिसे भूना बहुत कठिन है। दुनिया में तुम और सब कुछ भूल सकते हो लेकिन अपना स्वयं का नाम भूलना तो कल्पनातीत है। मस्तिष्क को विश्वास से बुद्धि की ओर, संदेह की ओर, संशय की ओर ले जाया जाना चाहिए। परीक्षाओं को हटा दें। विद्यार्थी गतिमान हों। और उनका मूल्यांकन प्रतिदिन प्राध्यापकों द्वारा दिए जाने वाले अंकों से निर्धारित हो। इसलिए उपस्थिति की चिंता मत करो। उपस्थिति की चिंता करने की कोई जरूरत ही नहीं है। प्रति-दिन मूल्यांकन करते जाओ। जो उपस्थित नहीं हैं वे मूल्यांकन पाने से अपने आप वंचित रह जाएंगे। जो उपस्थित हैं उन्हें मूल्यांकन प्राप्त होगा। और उस मूल्यांकन के अंकों की गिनती करो। और यदि कोई उस कक्षा के लिए बहुत बुद्धिमान सिद्ध होता है, तो उसे अगली कक्षा में जाने दो। इससे कोई उत्तीर्ण नहीं होगा और कोई अनुत्तीर्ण नहीं होगा। यह सिर्फ समय का सवाल होगा- दो महीने पहले या दो महीने बाद।
इससे उस हीनता की ग्रंथि को नष्ट करने में भी सहायता मिलेगी, जो तुम अनुत्तीर्ण विद्यार्थियों में पैदा करते हो। और वह श्रेष्ठता की ग्रंथि भी, जो उन लोगों में पैदा करते हैं, जो प्रथम आते हैं। दोनों खतरनाक हैं, दोनों बीमारियां हैं। किसी के श्रेष्ठ या निकृष्ट होने का सवाल ही नहीं है।
ठीक शरीर की भांति हृदय भी अत्यंत उपेक्षित है। कोई विश्वविद्यालय इस बात की फिकर नहीं करता कि अगर आदमी का हृदय काम नहीं करता हो तो शुष्क, नीरस हो जाएगा। सिर्फ मस्तिष्क्--उन्हें संगीत और नृत्य सिखाना चाहिए, चित्र कला सिखानी चाहिए। और ये विषय ऐच्छिक नहीं होने चाहिए। मनुष्य के संपूर्ण विकास के लिए जो आवश्यक है, वह ऐच्छिक नहीं होना चाहिए। उन्हें कविता पढ़ाती चाहिए; फिर वे विज्ञान के विद्यार्थी हों या वाणि य के, या कला के, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कविता कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे सिर्फ कवि पढ़ते हैं।
दूसरी बात, कविता तुम्हारे हृदय का द्वार खोलने में सहयोगी होती है,
वह तुम्हें ऐसे अनुभव देती है जो गणित कभी नहीं दे सकता। संगीत तुम्हें उन ऊंचाइयों पर ले जाता है, जहां भूगोल कभी नहीं जा सकता। तो हृदय की फिकर करनी चाहिए।
और अंततः आत्मा- जो कि बिल्कुल ही विस्मृत है। और आत्मा के लिए एकमात्र बात जो है वह यह कि प्रत्येक विद्यार्थी को एक घंटा ध्यान करना चाहिए। और ध्यान का एक प्राध्यापक होना चाहिए जो विद्यार्थियों को ध्यान करना सिखाए।
और यह इतना लंबा समय है... यदि तुम विश्वविद्यालय में किसी विषय में स्नातकोत्तर उपाधि लेना चाहते हो, और उसमें यदि हर रोज एक घंटा ध्यान करो, तो जब तुम बाहर निकलोगे तब तुम गहन मौन और शांति से भरे हुए, और सौंदर्य और प्रेम से ओतप्रोत होओगे। मैं इसे नितांत आवश्यक समझाता हूं।
लेकिन मेरा अंतिम सुझाव यह है कि मनुष्य के व्यक्तित्व के हर अंश के लिए राजीव सम्मेलन आयोजित करें। कुल मिलाकर चार सम्मेलन होंगे। और उसमें विशेषज्ञ अपने-अपने सुझाव दें कि क्या किया जाए। जनता कोई सुझाव नहीं दे सकती। अगर तुम ईमानदारी से परिवर्तन लाना चाहते हो, तो विशेषज्ञों से पूछो।
संसार में हजारों ध्यान करने वाले हैं। ध्यान की एक सौ बारह विधियां हैं। इन सब लोगों को निमंत्रित करो। ध्यान की सरलतम विधियां खोजो और सभी विश्वविद्यालयों में उन्हें सिखाना शुरू करो।

और यही रवैया हर बात के संबंध में अपना चाहिए। हम इस आधार पर विश्वविद्यालय का निर्माण कर सकते हैं, और एक महत आध्यात्मिक क्रांति और नए मनुष्य का जन्म इन विश्वविद्यालय में हो सकता है। अभी तो केवल नौकरी खोजता हुआ आदमी बाहर आता है। यह पूरी प्रणाली के लिए बहुत बड़ा लांछन है। 18 दिसंबर, 1985, प्रातः, कुल्लू-मनाली

फिर पत्तों की पाजेब बजी ग्यारहवां प्रवचन
धर्म नितांत वैयक्तिक है

भगवान, गौतम बुद्ध के साथ धर्म ने एक बहुत बड़ी छलांग, "क्वांटम लीप" ली; परमात्मा निरर्थक हो गया, ध्यान सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो गया। अब बुद्ध के पश्चात, पच्चीस सदियों के बाद, धर्म पुनः एक बार आपकी उपस्थिति में वैसी ही छलांग ले रहा है, और धार्मिकता बन रहा है। इस घटना को समझाने की अनुकंपा करें।

धर्म की छलांग, यह "क्वांटम लीप" गौतम बुद्ध से भी पच्चीस सदियों पहले एक बार लगी थी, और उसका श्रेय आदिनाथ को मिलता है। उन्होंने पहली बार अनीश्वरवादी धर्म की देशना दी। यह एक बहुत बड़ी क्रांति थी क्योंकि पूरे जगत में इसकी कभी कल्पना नहीं की गई थी कि ईश्वर के बिना भी धर्म हो सकता है। ईश्वर सभी धर्मों का आवश्यक अंग, एक केंद्रीय तत्व रहा है- ईसाइयत, यहूदी धर्म, इस्लाम सभी का।
लेकिन ईश्वर कोधर्म का केंद्र बनाने से मनुष्य सिर्फ एक परिधि हो जाता है। ईश्वर को यदि इस सृष्टि का स्रष्टा माना जाए तो मनुष्य सिर्फ एक कठपुतली हो जाता है। इसलिए हिबू्र भाषा में, जो कि यहूदी धर्म की भाषा है, मनुष्य को आदम कहा जाता है। अदम यानी कीचड़। इस्लाम धर्म की जो अरेबिक भाषा है, उसमें मनुष्य को आदमी कहा जाता है, जो कि आदम शब्द से बना है। उसका अर्थ फिर कीचड़ होता है। अंगरेजी में जो कि ईसाईधर्म की भाषा बनी, जो शब्द है "ह्यूमन" वह ह्यूमस से आता है; और ह्यूमस यानी मिट्टी। स्वभावतः परमात्मा अगर स्रष्टा है, तो उसे कुछ तो बनाना चाहिए। जैसे मूर्ति बनाते हैं वैसे उसे मनुष्य को बनाना चाहिए। तो पहले वह मिट्टी से आदमी बनाता है और फिर उसमें प्राण फूंक देता है। लेकिन अगर यह ऐसा है तो मनुष्य अपनी गरिमा खो देता है।
और अगर ईश्वर मनुष्य का और इस सृष्टि का स्रष्टा है, तो यह पूरी धारणा ही बेतुकी है। क्योंकि मनुष्य को इस सृष्टि को बनाने से पहले, अनंत काल तक वह क्या करता रहा? ईसाइयत के अनुसार उसने जीसस क्राइस्ट के चार हजार चार वर्ष पूर्व सृष्टि की रचना की। तो अनंत काल से वह क्या कर रहा था? इसलिए यह बड़ी बेतुकी बात जान पड़ती है।
इसका कोई कारण हो नहीं सकता। क्योंकि अगर इसका कोई कारण हो, जिसके लिए ईश्वर को सृष्टि का निर्माण करना

पड़े, तो इसका मतलब है, ईश्वर से भी अधिक शक्तिशाली कोई शक्ति है। ऐसे कारण हैं, जो उसे सृजन करने के लिए बाध्य करते हैं। या ऐसा भी हो सकता है कि अचानक उसमें वासना जगी हो। दार्शनिक दृष्टि से देखा जाए तो यह तर्क बहुत मजबूत नहीं है। क्योंकि अनंत काल तक वह वासना रहित था- और वासना रहित होना इतना आनंदपूर्ण है कि इसकी कल्पना करना भी संभव नहीं है कि शाश्वत आनंद मयता के इस अनुभव से, उसके भीतर वासना पैदा होती है कि वह सृष्टि का निर्माण करे।
और वासना आखिर वासना ही है; फिर तुम कोई घर बनाना चाहो या प्रधानमंत्री बनना चाहो, या सृष्टि का निर्माण करना चाहो। और ईश्वर की ऐसी कल्पना नहीं की जा सकती कि उसके अंदर वासनाएं हों।
तो अब एकमात्र बात जो बचती है वह यह कि वह सनकी है झक्की है। फिर न किसी कारण की जरूरत है, न किसी वासना की जरूरत है; सिर्फ एक सनक्--!
लेकिन यह पूरा अस्तित्व अगर एक सनक से पैदा हुआ हो, तो उसका पूरा अर्थ खो जाता है, पूरा अभिप्राय खो जाता है। और कल फिर उस पर एक और सनक सवार हो जाए कि इसे नष्ट कर देना है, इस पूरे अस्तित्व को विलीन कर देना है। तो हम सिर्फ इस तानाशाह ईश्वर के हाथ की कठपुतलियां बन जाते हैं, जिसके हाथों में पूरी ताकत तो है लेकिन जिसके पास स्वस्थ मन नहीं है, जो सनकी है।
आदिनाथ पांच हजार साल पहले इस बात की कल्पना कर सके, तो निश्चित ही, वह बहुत गहरे ध्यानी और चिंतक रहे होंगे। और वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे होंगे कि ईश्वर की धारणा बनायी तो इस संसार में कोई अर्थ नहीं होगा। यह संसार अर्थपूर्ण तभी हो सकता है यदि ईश्वर को विदा कर दिया जाए। और वे बड़े हिम्मतवर आदमी रहे होंगे। क्योंकि लोग अब भी गिरजाघरों में, सिनागागों में और मंदिरों में प्रार्थना कर रहे हैं; और वह आदमी आदिनाथ, हमसे पांच हजार साल पहले एक सुस्पष्ट, वैज्ञानिक निष्कर्ष पर पहुंचा कि मनुष्य से श्रेष्ठतर और कुछ भी नहीं है। और जो भी विकास होने वाला है, वह मनुष्य और उसकी चेतना के साथ होगा।
यह पहली क्वांटम छलांग थीः ईश्वर को विदा कर दिया गया। यह काम जैन-धर्म के सर्वप्रथम सद्गुरु आदिनाथ ने किया। तो इसका श्रेय बुद्ध को नहीं मिलता क्योंकि बुद्ध आदिनाथ के पच्चीस सदियों के बाद आते हैं।

लेकिन बुद्ध को एक और श्रेय मिलता है, और वह यह कि आदिनाथ ने ईश्वर को तो विदा कर दिया, लेकिन उसकी जगह ध्यान को नहीं ला सके। उल्टे उन्होंने तप, व्रत, कायाक्लेश, उपवास, नग्नता, दिन में सिर्फ एक बार भोजन करना, रात में पानी नहीं पीना, खाना नहीं खाना, केवल गिनी- चुनी चीजें खाना-इन बातों कोप्रचलित किया। वे एक सुंदर दार्शनिक निष्कर्ष पर पहुंचे थे। लेकिन मालूम होता है, वह निष्कर्ष दार्शनिक ही था, ध्यान से पैदा नहीं हुआ था। तुमने ईश्वर को विदा कर दिया, अब तुम क्रिया-कांड नहीं कर सकोगे, पूजा नहीं कर सकोगे, प्रार्थना नहीं कर सकोगे। उस रिक्त स्थान को भरना होगा। उन्होंने उस रिक्त स्थान को तपों से भर दिया। क्योंकि मनुष्य उसके धर्म का केंद्र हो गया। मनुष्य को स्वयं को विशुद्ध करना है। और विशुद्धि की उनकी धारणा थीः मनुष्य को इस संसार से विरक्त होना है, अपने शरीर से अनासक्त होना है। इससे पूरी बात ने ही गलत मोड़ ले लिया। वे अत्यंत अर्थपूर्ण निष्कर्ष पर पहुंचे थे, लेकिन वे केवल एक दार्शनिक धारणा बन कर रह गई। इस श्रेय बुद्ध को मिलता है कि आदिनाथ ने ईश्वर को विदा करके जो रिक्त स्थान छोड़ दिया था, वह उन्होंने ध्यान से भर दिया। ध्यान बुद्ध का योगदान है।
आदिनाथ ने अनीश्वरवादी धर्म निर्मित किया।
बुद्ध ने ध्यानपूर्ण धर्म को जन्म दिया।
शरीर को सताने का सवाल नहीं है।
सिवाय यह है कि और मौन कैसे हों, और तनाव-रहित, और शांत कैसे हों। यह एक अंतर्यात्रा हैः स्वयं की चेतना के केंद्र पर पहुंचना। और स्वयं की चेतना का केंद्र ही पूरे अस्तित्व का केंद्र है।
पच्चीस सदियां फिर बीत गईं; और जिस तरह आदिनाथ की अनीश्ववादी धर्म की क्रांतिकारी धारणा तपों के और कायाक्लेश के रेगिस्तान में सूख गई, उसी तरह बुद्ध की ध्यान की धारणा भी... क्योंकि वह आंतरिक है, कोई और इसे देख नहीं सकता। सिर्फ तुम ही जानते हो कि तुम कहां हो, तुम्हारी प्रगति होरही है या नहीं। वह एक और ही रेगिस्तान में खो गई; और वह थाः संगठित धर्म।
क्योंकि अकेले व्यक्तियों पर भरोसा नहीं किया जा सकता कि वे ध्यान कर रहे हैं या नहीं। उन्हें समूहों, सदगुरुओं और आश्रमों की जरूरत है, जहां वे एक साथ रह सकते हैं। और जो चेतना के उच्चतर तल पर हैं, वे दूसरों का ध्यान रख सकते हैं और उनकी सहायता कर सकते हैं। यह

जरूरी हो गया कि धर्म व्यक्तियों के हाथों में न छोड़ा जाए। उसे संगठित किया जाए और उन लोगों के हाथों मैं सौंपा जाए, जो ध्यान के उच्चतर बिंदु पर आ पहुंचे हैं। शुरू-शुरू में यह अच्छा था। जब तक बुद्ध जीवित थे, कई लोग आत्मज्ञान को और बुद्धत्व को उपलब्ध हुए। लेकिन जैसे ही बुद्ध का निर्वाण हुआ, और ये लोग मर गए तो वही संगठन, जिसे ध्यान में लोगों का मार्गदर्शन करें, उन्होंने बुद्ध के आसपास क्रिया-काण्ड खड़े करने शुरू किये। बुद्ध ने फिर ईश्वर की जगह ले ली। जिसे आदिनाथ ने विदा कर दिया था, जिसके अस्तित्व को बुद्ध ने कभी स्वीकार नहीं किया था... लेकिन यह पुरोहितों की जमात ईश्वर के बिना नहीं की जा सकती। तोस्रष्टा के रूप में कोईईश्वर को भले ही न हो, लेकिन बुद्ध को ही ईश्वर बनाया गया। और फिर अन्य लोगों के लिए एक ही बात बची; बुद्ध की पूजा करना, बुद्ध पर श्रद्धा करना, बुद्ध के सिद्धांतों का अनुसरण करना, उनकी धर्म-शिक्षाओं के आधार पर जीवन जीना। और बौद्धधर्म संगठन के और अनुकरण के जंगल के राह भटक गया। हर कोई कोशिश कर रहा है। लेकिन वे सब एक मूलभूत बात भूल गए-ध्यान।
मेरा पूरा प्रयास यह है कि एक धर्म-विहीन धर्म पैदा किया जाए। हमने देख लिया कि उन धर्मों का क्या होता है, जिनके केंद्र में ईश्वर होता है। हमने देख लिया कि आदिनाथ की क्रांतिकारी धारणा का क्या हुआ- ईश्वरविहीन धर्म। हमने देख लिया कि बुद्ध का क्या हुआ- ईश्वरविहीन संगठित धर्म। अब मेरा प्रयास हैः जिस तरह उन्होंने ईश्वर को विदा किया जाए। सिर्फ ध्यान शेष रह जाए, ताकि उसका किसी भांति विस्मरण न हो। उसके स्थान पर और कुछ भी नहीं रखा जा सकता।
न कोईईश्वर है, न कोईधर्म है। धर्म से मेरा मतलब है, संगठित सिद्धांत, मत, क्रियाकांड, पुरोहिती।
और पहली बार, मैं चाहता हूं, धर्म नितांत वैयक्तिक हो। क्योंकि सभी संगठित धर्मों ने फिर वह ईश्वरवादी हों या अनीश्वरवादी हों, मानवता को भटका दिया है। और उसका एकमात्र कारण था: संगठन। क्योंकि संगठन के अपने ढंग होते हैं, जो ध्यान के विपरीत जाते हैं।
वस्तुतः संगठन एक राजनीतिक घटना है। यह धार्मिक नहीं है। वह सत्ता पाने के लिए सत्ता की आकांक्षाओं के लिए एक दूसरा रास्ता है। अब हर ईसाई पुरोहित की आशा होती है कि वह एक दिन वह बिशप बनेगा, कार्डिनल बनेगा, कम से कम पोप तो बनेगा ही। यह एक नया पदानुक्रम है, एक नयी

नौकरशाही है; और चूंकि यह आध्यात्मिक किस्म की है, इसमें किसी को कोई आपत्ति नहीं है। तुम पोप होओ, या बिशप होओ, या और कुछ भी होओ, यह आपत्तिजनक नहीं है, क्योंकि तुम किसी के जीवन में टांग अड़ानेवाले नहीं हो। वह सिर्फ एक अमूर्त कल्पना है।
मैं पुरोहिती को पूरी तरह से खत्म करने की कोशिश कर रहा हूं। वह ईश्वर के साथ बना रहा, अनीश्वरवादी धर्म के साथ बना रहा। अब एकमात्र उपाय यह है कि हम ईश्वर और धर्म दोनों को विदा कर दें ताकि इसकी कोई संभावना ही न बचे कि पुरोहितों का वर्ग खड़ा हो।
मनुष्य पूर्ण रूप से स्वतंत्र है, और अपने विकास के लिए वह पूरी तरह से स्वयं उत्तरदायी है। और मेरा मानना है कि मनुष्य अपने विकास के लिए जितना जिम्मेदार होगा उतना वह उसे अधिक समय तक स्थगित नहीं कर सकता। क्योंकि उसका अर्थ हुआ, यदि तुम दुखी हो तो उसके लिए तुम जिम्मेदार हो। यदि तुम तनाव में हो, तुम विश्रामपूर्ण नहीं हो, तो तुम जिम्मेदार हो। यदि तुम पीड़ा में हो तो अपने ही कारण। न कोईईश्वर है, न कोई पौरोहित्य है, जिसके पास जाकर तुम कोई क्रियाकांड पूछ सकते हो। तुम अपने दुख के साथ अकेले छूट जाते हो। और कोई भी दुखी नहीं होना चाहता।
पुरोहित तुम्हें अफीम की गोली दिए जाते हैं। वे तुम्हें आशा बंधाते रहते हैं कि चिंता की कोई बात नहीं है, यह सिर्फ तुम्हारी श्रद्धा और तुम्हारे विश्वास की कसौटी है। और अगर तुम इस दुख से और पीड़ा से, शांति से और धैर्य से गुजर सको, तो मृत्यु के पार, परलोक में इसका बहुत पुरस्कार मिलेगा।
यदि पौरोहित्य बीच में न हो, तो तुम्हें इसे ठीक से समझ लेना चाहिए कि तुम जो भी हो उसके लिए तुम ही जिम्मेदार हो, कोई और नहीं। और यह अहसास कि मेरी पूरी पीड़ा के लिए मैं ही जिम्मेदार हूं, एक द्वार खोलता है। तब तुम इसके उपाय और साधन खोजने लगते हो कि इस दुखद स्थिति के बाहर कैसे निकला जाए। और यही ध्यान है। वह सिर्फ दुख, संताप, चिंता, पीड़ा इनके विपरीत स्थिति है। वह आत्मा का शांतिपूर्ण, आनंदपूर्ण खिला है-इतना निःशब्द इतना समयातीत कि तुम कल्पना भी नहीं कर सकते कि इससे बेहतर भी कुछ हो सकता है। और इस जगत में ध्यानपूर्ण मन से अधिक बेहतर कुछ भी नहीं है।
तो तुम कह सकते हो कि ये तीन क्वांटम छलांगें हैं। आदिनाथ ईश्वर को छोड़ देते हैं। क्योंकि उन्हें दिखाई

देता है कि ईश्वर मनुष्य के लिए बहुत भारी पड़ रहा है; उसके विकास में उसकी सहायता करने की बजाय वह एक बोझ बन गया है। लेकिन वे उस रिक्त स्थान को भरना भूल गए-ऐसा कोई सहारा, जिसकी आदमी को उसके दुखद क्षणों में, उसकी यातनाओं में जरूरत हो। वह ईश्वर से प्रार्थना करता था, तुमने उसका ईश्वर छीन लिया, तुमने उसकी प्रार्थना छीन ली। और अब, जब वह दुखी होगा तब वह क्या करेगा?
जैन-धर्म में ध्यान के लिए कोई जगह नहीं है। यह बुद्ध की अंतदृष्टि है कि उन्होंने देखा कि ईश्वर विदा हो गया है, अब इस रिक्त स्थान को भरना होगा, नहीं तो यह रिक्तता मनुष्य को नष्ट कर देगी। उन्होंने ध्यान को रखा कुछ ऐसा प्रामाणिक, जो उसके पूरे अस्तित्व को बदल देगा। लेकिन उन्हें इसका अहसास नहीं था, शायद उन्हें इसका अहसास नहीं हो सका कि जब तक घटनाएं नहीं घटतीं हैं तब तक वे तुम्हें पूरी ख्याल में नहीं आती हैं कि कोई संगठन नहीं होना चाहिए; कि पुरोहितों का वर्ग नहीं होना चाहिए; कि जिस तरह ईश्वर विदा हुआ है उसी तरह धर्म भी विदा होना चाहिए।
लेकिन उन्हें क्षमा की जा सकती है। क्योंकि उन्होंने उस संबंध में सोचा नहीं था, और अतीत का कोई अनुभव नहीं था, जिससे इसे देखने में उन्हें मदद मिलती। वह उनके बाद आया। फिर यह बात साफ हो गई कि ईश्वर इतना महत्वपूर्ण नहीं है। असली समस्या है पुरोहित, और ईश्वर पुरोहित का आविष्कार है। जब तक तुम पुरोहित से मुक्त नहीं होते तब तक तुम ईश्वर से मुक्त नहीं होओगे। और पुरोहित क्रियाकांडों के नए उपाय खोज लेगा। वह नए ईश्वर पैदा करेगा।
मेरा प्रयास यह है कि तुम्हें ध्यान के साथ अकेला छोड़ दिया जाए और तुम्हारे अस्तित्व के बीच कोई मध्यस्थ न हो। जब तुम ध्यानपूर्ण नहीं होते हो तब अस्तित्व से अलग हो जाते हो, और वही तुम्हारी पीड़ा है। यह ऐसे ही है जैसे तुम मछली के सागर से निकालकर किनारे पर फेंक देते हो। फिर उसे जो दुख और पीड़ा और जो यातना अनुभव होती है, और उसकी छटपटाहट और उसकी चेष्टा कि फिर से किसी तरह सागर में पहुंच जाए क्योंकि वही उसका घर है। वह सागर का अंग है और सागर से अलग वह नहीं जी सकती। कोई भी पीड़ा यही दिखाती है कि तुम्हारा अस्तित्व के साथ संवाद नहीं है- कि मछली सागर में नहीं है।
और ध्यान और कुछ नहीं है, सभी बाधाओं को हटा देना हैः विचार, भावनाएं भावुकता-जो कुछ भी तुम्हारे और अस्तित्व

के बीच दीवार बनकर खड़ा होता है। जिस क्षण वे गिर जाते हैं, अचानक तुम पाते हो कि तुम्हारा पूर्ण के साथ सुर सध गया। न केवल इतना, तुम पाते हो कि तुम ही पूर्ण हो गए। जब एक ओस-कण पत्ते के ऊपर से फिसल कर सागर में गिरता है, तो उसे ऐसा नहीं लगता कि वह सागर का अंश है, उसे लगता है, वह सागर ही है। और इसे खोजना ही अंतिम लक्ष्य है, अंतिम अनुभव है, उसके पार कुछ भी नहीं है।
तो आदिनाथ ने ईश्वर को विदा किया लेकिन संगठन को विदा नहीं किया। क्योंकि कोईईश्वर नहीं था इसलिए संगठन ने क्रियाकाण्ड पैदा किये। बुद्ध ने ईश्वर को विदा किया-यह देखकर कि जैन-धर्म के साथ क्या हुआ। वह सिर्फ क्रियाकाण्ड बनकर रह गया। उन्होंने सब क्रियाकाण्ड छोड़ दिये और एक अकेले ध्यान पर जोर दिया। लेकिन उन्हें स्मरण न रहा कि जिस पुरोहित ने जैन-धर्म में क्रियाकाण्ड पैदा किये वही पुरोहित, ने जैन-धर्म में क्रियाकाण्ड पैदा कि वही पुरोहित, ध्यान के साथ भी वही करने वाला है। और वैसा ही हुआ। उन्होंने बुद्ध को ही ईश्वर बना दिया। वे ध्यान के संबंध में चर्चा करते हैं लेकिन मूलभूत रूप से बौद्ध, बुद्ध की पूजा ही कर रहे हैं। वे मंदिर जाते हैं, कृष्ण या क्राइस्ट की जगह वहां बुद्ध की मूर्ति है।
बुद्ध की निर्वाण के बाद पांच सौ साल तक बुद्ध की कोईप्रतिमा नहीं बनी। बौद्ध मंदिरों में, एक प्रतीक की तरह संगमरमर में खुदा हुआ वह बोधिवृक्ष होता था, जिसके नीचे बुद्ध ज्ञान को उपलब्ध हुए। वहां बुद्ध नहीं बल्कि वृक्ष था। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि बुद्ध की जोप्रतिमाएं हम आज देखते हैं, वे बुद्ध के व्यक्तित्व से कतई मेल नहीं खातीं, वे सिकंदर महान के व्यक्तित्व से मिलती हैं। बुद्ध के तीन सौ साल बाद सिकंदर महान भारत आया। तब तक बुद्ध की कोईप्रतिमा नहीं थी। और सिकंदर इतना सुंदर आदमी था! और पुरोहितों का वर्ग खोज में था क्योंकि बुद्ध का कोई छायाचित्र नहीं था, कोई चित्र नहीं था! और पुरोहितों का वर्ग खोज में था क्योंकि बुद्ध का कोई छायाचित्र नहीं था, कोई चित्र नहीं था, तो बुद्ध की प्रतिमा बनाएं तो बनाएं कैसे। और सिकंदर का चेहरा सचमुच अतिमानवीय लगता था। उसका व्यक्तित्व बड़ा सुंदर था। ग्रीक नाक-नक्श थे और वैसा ही शरीर का गठन था। तो मूर्ति बनाते समय उन्होंने बुद्ध का चेहरा तथा सिकंदर का शरीर अपने ख्याल में रखा।

तो सभी बौद्ध मंदिरों में जिन प्रतिमाओं की पूजा हो रही है, वे वस्तुतः सिकंदर महान की प्रतिमाएं हैं। उनका बुद्ध से कोई संबंध नहीं है। लेकिन पुरोहित की तोप्रतिमा बनानी ही थी। ईश्वर था नहीं, क्रिया-काण्ड मुश्किल थे, ध्यान के आसपास क्रिया-काण्डों को खड़ा करना भी कठिन था। उन्होंने प्रतिमा बना ली। और उन्होंने उस प्रतिमा से वैसे ही नाता जोड़ लिया जैसे अन्य धर्म जोड़ लेते हैं। वे कहने लगे, बुद्ध में श्रद्धा करो, बुद्ध पर विश्वास करो और तुम बच जाओगे।
दोनों क्रांतियां व्यर्थ खो गईं। मैं चाहता हूं कि मैं जो कर रहा हूं वह न खो जाए। तो मैं हर तरह से इस बात की कोशिश कर रहा हूं कि उन सब बातों को छोड़ दिया जाए, जो अतीत में क्रांति के विकास में और क्रांति के सातत्य में बाधा बनी थीं। मैं नहीं चाहता कि व्यक्ति के और अस्तित्व के बीच में कोई खड़ा हो जाए-न प्रार्थना, न पुरोहित। सूर्योदय को देखने के लिए तुम अकेले काफी हो। तुम्हें किसी व्याख्याकार की जरूरत नहीं है यह बताने के लिए देखो, सूर्योदय कितना सुंदर है।
कहा जाता है कि लाओत्सु प्रतिदिन सुबह घूमने जाया करता था। एक मित्र ने उससे पूछा, क्या किसी दिन मैं भी आपके साथ आ सकता हूं? और खास कर कल मैं आना चाहूंगा क्योंकि मेरे साथ एक मेहमान हैं, जिनकी आपमें बहुत उत्सुकता है। उन्हें बड़ी खुशी होगी कि आपके साथ दो घंटे पहाड़ों पर बिताने का अवसर मिला।
लाओत्सु ने कहा, मुझे कोई एतराज नहीं है। सिर्फ एक छोटी-सी बात का ध्यान रहे कि वे कोई बातचीत न करें। क्योंकि मरे पास अपनी आखें हैं, तुम्हारे पास तुम्हारी आंखें हैं, उनके पास उनकी आंखें हैं। वे खुद देख सकते हैं, कुछ कहने की जरूरत नहीं है।
मित्र राजी हुआ। लेकिन वह मेहमान भूल गया। रास्ते पर जब सूरज उगने लगता, तो वह इतना सुंदर दृश्य था-सरोवर के किनारे पानी में उसका सतरंगा प्रतिबिंब, पक्षियों की चहचहाहट, अपनी पंखुड़ियां खोलकर कमलों का खिलना... वह अपने को रोक नहीं सका। वह भूल ही गया और बोला, "कितना सुंदर सूर्योदय है!
लाओत्सु के मित्र कोधक्का लगा क्योंकि उसने शर्त तोड़ दी थी। लाओत्सु ने कुछ.नहीं कहा। वहां किसी से कुछ नहीं कहा। घर लौटने पर लाओत्सु बोला, तुम्हारे मेहमान को दुबारा मत लाना; वह बहुत बातूनी है। क्योंकि सूर्योदय वहां पर था, तुम वहां थे, मैं वहां था, वह भी

वहां था, फिर किसी को कुछ कहने की जरूरत क्या है? कोई वक्तव्य देने की, कोई व्याख्या करने की जरूरत नहीं है। और यही मेरा दृष्टिकोण है। तुम यहां हो, हर व्यक्ति यहां है, पूरा अस्तित्व उपलब्ध है-तुम्हें जरूरत है सिर्फ मौन होकर अस्तित्व को सुनने की। किसी धर्म की कोई जरूरत नहीं है; और न किसी ईश्वर की जरूरत है, न किसी पुरोहित की, न ही किसी संगठन की जरूरत है।
मेरी व्यक्ति में असंदिग्ध रूप से आस्था है। आज तक किसी की भी व्यक्ति में इस भांति इतनी आस्था नहीं थी। तो बाकी सब बातों को हटा दया जा सकता है। अब तुम्हारे पास जो बच रहता है वह, ध्यानपूर्ण चित्त दशा; जिसका सीधा- सा अर्थ है, परिपूर्ण मौन। "ध्यान" शब्द से लगता है कि वह कुछ बड़ी बोझिल चीज है। अच्छा होगा कि हम उसे कहें, साधारण, निर्दोष मौन... और अस्तित्व अपना सारा सौंदर्य तुम्हारे सामने खोल देता है। और जैसे-जैसे वह मौन विकसित होता जाता है, तुम भी विकसित होते जोते हो। और एक क्षण आता है, जब तुम अपनी क्षमता के शिखर को छू लेते हो। तुम उसे बुद्धत्व कह सकते हो, जागरण कह सकते हो, भगवत्ता कह सकते हो-कुछ भी; उसका कोई नाम नहीं है। तो किसी भी नाम से काम चलेगा।
लाखों संन्यासी आपके प्रेम और आनंद को पी रहे हैं। संन्यास में दीक्षित होने के लिए कोई व्यक्ति कैसे प्रेरित होता है! यह चमत्कार कैसे घट रहा है भगवान? निश्चित ही, यह चमत्कार है। लेकिन उसका घटना बहुत सरल है। अतीत में इसका वर्णन करने के लिए कोई शब्द नहीं था।ेलेकिन संयोगवशात कार्ल गुस्ताव जुंग ने, जो कि इस युग का एक बहुत बड़ा मनस्विद था, एक शब्द गढ़ा क्योंकि उसे एक ऐसा अनुभव हुआ, जिसके लिए कोई शब्द नहीं था।
वह एक पुरानी कोठी में रुका हुआ था। उसकी दीवाल पर दो घड़ियां थीं। और उनकी यह ख्याति थी कि वे हमेशा एक ही समय दिखाती हैं। और वह हैरान था... वे घड़ियां बहुत पुरानी थीं। और उनके बारे में यह भी विदित था कि तुम उनके कांटे बदल दो, फिर भी जल्दी ही वे एक दूसरे से मेल खाती और पुनः एक ही लय में चलने लगतीं। उसने दो-तीन बार चेष्टा की कि एक घड़ी को पांच मिनिट आगे कर दे। और जल्दी ही वह देखता कि दोनों घड़ियों ने फिर से किसी भांति तालमेल बिठा लिया है और दोनों घड़ियां ढाई मिनिटों में ही, फिर एक ही समय दिखाने लगी हैं।
वह हैरान हुआ कि यह हो क्या रहा है। चूंकि वह वैज्ञानिक मस्तिष्क वाला आदमी था, उसके कारण खोजने की

कोशिश की। उसने दीवाल को कान लगाकर सुना, वह घड़ियों के चारों ओर घूमा, और उसने कारण खोज लिया। दोनों घड़ियां अत्यंत प्राचीन थीं, बहुत भारी थीं और बहुत बड़ी थीं। और वे एक खास तरह की ध्वनि और ध्वनि तरंगें पैदा करतीं थीं। और वे एक तरह की ध्वनि और ध्वनि-तरंगें पैदा करती थीं। और वे एक खास तरह की ध्वनि और ध्वनि-तरंग पैदा करती थीं। और ये ध्वनि-तरंगें एक साथ चलने में उनकी मदद करती थीं। वे ध्वनि-तरंगें बेमेल नहीं बनी रह सकती थीं। धीरे-धीरे उनका मेल बैठ ही जात। उसे कोई शब्द खोजना ही था... रात भर वह सो नहीं सका। और उसने एक शब्द खोज ही लियाः सिंक्रानिसिटी, समक्रमिकता। उसका कोई कारण नहीं है।
हमें जगत में के ही बात का पता है कि कोई कारण हो तो ही कोई घटना घटती है। कोई कारण न हो तो कोई कार्य भी नहीं होता है। तो यह जगत घटना के घटने का सिर्फ एक ही ढंग जानता है कि कारण से कार्य पैदा होता है। यह कार्य-कारण संबंध है। पूरा वैज्ञानिक जगत इस कार्य-कारण संबंध पर आधारित है। उसमें समक्रममिकता के लिए कोई जगह नहीं है। लेकिन मानव जीवन में, जो भी थोड़ा सजग है उसे इसका पता लग जाता है। तुम उदास थे और एक मित्र आ गया; और वह प्रसन्न है, हंस रहा है, उसने तुम्हें आलिंगन किया, एक चुटकुला सुनाया और तुम अपनी उदासी भूल गए। और तुम भी उसके साथ हंसने लगे।
इससे उलटा भी हो सकता है। जो आदमी हंसते हुए आ रहा है उसका हंसना तुम्हें देखकर बंद भी हो सकता है। तुम्हारी उदासी का इतना परिणाम हो सकता है कि वह तुम्हें चुटकुला भी नहीं सुना सकता। वैसा करना करीब-करीब अमानवीय मालूम पड़ेगा, संदर्भ-विहीन दिखाई देगा। क्योंकि यह आदमी इतना उदास है और तुम चुटकुला सुना रहे हो। उस चुटकुले के लिए भी एक खास संदर्भ चाहिए जो कि वहां नहीं है तुम एक मित्र से हाथ मिलाते हो और पाते हो कि वे हाथ बिल्कुल मुर्दा हैं; जैसे किसी वृक्ष का ठूंठ हो। उससे कुछ बहता नहीं; कोई उष्मा नहीं, कोईप्रेम नहीं, बस एक क्रियाकाण्ड। लेकिन किसी और मित्र के साथ हाथ मिलाते वक्त तुम अत्यंत समृद्ध अनुभव करते हो। कुछ बहता है-कोई उष्मा, कोईप्रेम। हाथ मिलाने के बाद तुम निश्चित रूप से कह सकते हो कि तुम वही नहीं हो, जो उस मित्र के हाथ मिलाने के पहले थे लेकिन उसके हाथ का सिर्फ एक स्पर्श-और उसकी प्रसन्नता ने तुम्हारे भीतर कुछ गतिमान कर दिया।

अब इसे कार्य और कारण नहीं समझाया जा सकता। उसे सिर्फ एक नये नियम से समझाया जा सकता हैः समक्रमिकता का नियम।
और दीक्षा का यही अर्थ हैः एक आदमी, जिसने मौन जान है, आनंद जाना है, प्रसन्नता जानी है वह तुम्हें आकर्ष्ति करता है। शायद तुम्हें इसका बोध भी न हो कि वह तुम्हें आकर्ष्ति करता है। लेकिन किसी न किसी भांति तुम उसके साथ होना चाहते हो, उसके पास बैठना चाहते हो, उससे बात करना चाहते हो। उसका होना तुम्हारे भीतर एक समक्रमकिता पैदा करता है। तुम्हारा हृदय एक अलग ही लय में धड़कने लगता है।
ये लाखों संन्यासी... क्योंकि मेरे पास उन्हें देने के लिए कुछ भी नहीं है। यदि वे कैथोलिक बनते हैं तो कैथोलिक लोग उन्हें बहुत कुछ दे सकते हैं। यदि वे किसी और धर्म में परिवर्तित होते हैं, तो वह धर्म उन्हें कुछ और दे सकता है। सच पूछा जाए तो यह एक जाना-माना तथ्य है कि जो व्यक्तिधर्म परिवर्तन करता है, उसे नए धर्म में बहुत सम्मान मिलता है। वह पुराना धर्म उसकी बहुत निंदा करता है, जिसे उसने पीछे छोड़ दिया है। लेकिन नये धर्म में उसे बहुत सम्मान मिलता है क्योंकि उसने सिद्ध कर दिया है कि नया धर्म पुराने धर्म से बेहतर है।
मैं एक वृद्ध जैन-मुनि को जानता था। वे जन्म से जैन नहीं थे; जन्म से वे बढ़ई थे। हिंदू धर्म में बढ़ई नीच जाति के होते हैं। लेकिन चूंकि वे एक मंदिर के महावीर की काष्ठ प्रतिमाएं बना रहे थे, उनमें जैन धर्म के प्रति उत्सुकता जगी और अंततः वे जैन बने। उनकी हिंदुओं ने बहुत निंदा की लेकिन उसका कोई मतलब नहीं था क्योंकि वे पहले नीच जाति के व्यक्ति थे, तिरस्कृत थे, तुम उनका और ज्यादा तिरस्कार नहीं कर सकते। लेकिन जैन धर्म में उन्हें मुनि के उच्च तल पर पहुंचाया गया। उनके सामने बाकी जैन मुनि भी छोटे रह गए। यह बढ़ई एक बहुत आदरणीय साधु बन गया।
और मैं हैरान हुआ क्योंकि वे अन्य जैन मुनियों की तरह विद्वान नहीं थे। वे इतने पढ़े लिखे नहीं थे, सुसंकृत नहीं थे। आखिर वे एक बढ़ई थे और उनसे तुम ज्यादा अपेक्षा नहीं कर सकते। लेकिन उन्हें इतना सम्मान मिल रहा था... फिर मैंने कारण खोजा कि उन्हें यह सम्मान क्यों मिल रहा है। क्योंकि जैनों के लिए उसने एक बात सिद्ध कर दी कि जैन धर्म हिंदू धर्म से श्रेष्ठ है। यह आदमी इस बात का सबूत है। एक भी जैन ने कभी हिंदू धर्म में प्रवेश नहीं

किया लेकिन अनेक हिंदुओं ने जैन-धर्म अपनाया है। और यह सबूत है।
वे ह्नादा नहीं बोलते थे। उनके पास कहने के लिए कुछ था ही नहीं। लेकिन सिर्फ इसलिए कि वे दूसरे धर्म से यहां आये थे, उन्हें असीम आदर मिलता था।
मैंने एक दिन उनसे कहा कि आप इस धोखे में मत रहना कि यह आदर आपके प्रति है। वे बोले, आपका क्या मतलब है? मैंने कहा, यह आदर केवल इसलिए है कि आप जैन धर्म में पैदा नहीं हुए हैं। यह आदर सिर्फ इसलिए है कि दुनिया के दिखा दें कि जैन धर्म हिंदू धर्म से कहीं अधिक श्रेष्ठतर धर्म है; अन्यथा एक हिंदू खुद होकर जैन धर्म में क्यों प्रवेश करे?
मैंने उनसे कहा, आप कोशिश कर सकते हैं। आप हिंदू धर्म में दुबारा प्रवेश करें; हिंदुओं का आपके प्रति जो भी तिरस्कार है, वह सब खो जाएगा। वे आपका सम्मान करेंगे। उन्होंने कभी किसी बढ़ई का सम्मान नहीं किया है। वे आपका सम्मान करेंगे क्योंकि अब इससे निश्चित रूप से ये सिद्ध होता है कि हिंदू धर्म श्रेष्ठतर धर्म है। और इस आदमी ने दोनों धर्मों को देखा और अंततः उसने हिंदू बने रहने का निर्णय लिया। उसके लिए उसने सारी साधुता छोड़ दी, और सारे समादर का त्याग कर दिया। और फिर आप देखेंगे कि वही जैन आपकी निंदा कर रहे हैं। वे आपके खिलाफझूठ बोलेंगे, आप पर हर तरह के इलजाम लगायेंगे।
वह आदमी सरल था। उसने कहा, शायद आप ठीक कहते हैं। शायद मैं भ्रांति में जी रहा हूं। मैंने कहा, यदि आप इतना समझ सकते हज तो आपका विकास नहीं रुकेगा। इससे कोईफर्क नहीं पड़ता कि तुम हिंदू हो या जैन हो या बौद्ध। इससे कोईफर्क नहीं पड़ता। लेकिन मूलभूत काम को याद रखना। सब तरह की भ्रांतियों में मत भटक जाना, जो जीवन में घटती रहती हैं।
जो संन्यासी मेरे पास आ रहे हैं उन्हें देने के लिए मेरे पास कुछ भी नहीं है। सच तो यह है कि उनके समाज उनके धर्म उनकी निंदा करेंगे; उनके परिवार, उनके मित्र उनका तिरस्कार करेंगे। उन्हें कुछ मिलनेवाला नहीं है, उल्टे उन्हें बहुत कुछ खोना पड़ेगा।
लेकिन फिर भी उनके हृदय के भीतर कुछ स्फुरणा होने लगती है। यह उनके मन के नियंत्रण के बाहर होगी। वे इस सबके बावजूद संन्यासी बन जाते हैं। हालांकि इसमें समय लगता है। एक समय होता है जब उनके हृदय में और उनके मन में संघर्ष चलता है। और उनका मन उन्हें पीछे खींचने की

कोशिश करता है कि जहां हो वही रहो। और वह हर तरह के तर्क देता रहता है कि तुम सब कुछ खो दोगे और तुम कुछ भी नहीं पाओगे। लेकिन देर अबेर मन हारने ही वाला है। अगर तुम्हारे हृदय की कोई चीज वास्तव में खींच रही है, तो मन कुछ समय तक लड़ सकता है लेकिन वह जीत नहीं सकता।
तो मैं कहता हूं, संन्यास प्रेम में गिरने जैसा है; वह समक्रमिकता है। तुम पाते हो कुछ अव्याख्य, कुछ अनाम तुम्हें मुझसे जोड़ता है, और तुम दुनिया के सामने इसकी घोषणा करना चाहते हो-और यही संन्यास है।
दीक्षा सिर्फ इस बात की घोषणा है कि मैं इसे अपने तक सीमित नहीं रखने वाला हूं। मैं एक नयी शक्ति के, नयी ऊर्जा के सान्निध्य में आया हूं; एक नया प्रेम, एक नया ही जगत। और में पूरे जगत को यह घोषित करने वाला हूं। फिर उसके लिए मुझे कोई भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े।
और यद्यपि संन्यासियों को पीड़ा झेलनी पड़ेगी, उनको सताया जाएगा, उनका तिरस्कार होगा, लेकिन फिर भी उनके भीतर प्रसन्नता होगी, जो उनके उत्पीड़कों के भीतर नहीं हो सकती। उनके भीतर एक मौन होगा, जो उनके निंदकों के भीतर नहीं हो सकता। और यह बात एक दावानल की तरह फैल रही है-किसी संगठन के बिना, कि नहीं उपदेशकों के बिना, किन्हींधर्म-प्रचारकों के बिना, जो कि बाइबिल लेकिन सतत तुम्हारा पीछा करें और सताएं।
मैंने कभी किसी का धर्म नहीं बदला। और मैं अपने लोगों से आग्रह करता हूं कि वे भी कभी किसी का धर्म न बदलें।। लेकिन अगर कोई मित्र बनना चाहता है तो हमारे द्वार खुले हैं और उसका स्वागत है।
संन्यास दीक्षा सिर्फ तुम्हारा भाव है कि तुम भीतर प्रवेश करना चाहते हो, और हमारा भाव है कि तुम्हारा स्वागत है।
निश्चित ही, यह चमत्कार है-और खास कर मेरे साथ, क्योंकि न तो मैं तुम्हें इस जीवन में कुछ दे सकता हूं और न ही अन्य जीवनों में कुछ दे सकता हूं। मेरे पास किसी के लिए कोई अफीम नहीं है। लेकिन मैं तुम्हें कुछ दिये बिना, कोई दृश्य चीज मेरे हाथ से तुम्हारे हाथ में हस्तांतरित हुए बिना इस क्षण को अत्याधिक सुंदर क्षण बन सकता हूं। लेकिन ये अदृश्य चीजें हैं। हम एक्स-रे को बिना किसी अड़चन के स्वीकार कर सकते हैं। फिर हम यह स्वीकार क्यों नहीं कर सकते कि प्रेम की भी अपनी किरणें होती हैं और मौन की अपनी किरणें होती हैं, अपन तरंगे होती हैं।

और निश्चय ही, बुद्धत्व एक अपरिसीम शक्ति है, जो व्यक्ति को रूपांतरित कर सकती है यह चमत्कार ही है।

फिर पत्तों की पाजेब बजी-प्रवचन-समाप्त